TEXT PROBLEM WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182515

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H S3 S 53A. Accession No. H 3134

Author . . . . શર્મા, યજ્ઞદત્ત.

Title અંતિમ ચરણ. 1959.

This book should be returned on or before the date last marked below.

अंतिम-चरण

उपन्यासकार
यज्ञदत्त शर्मा

१९५८
साहित्य प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशक
साहित्य प्रकाशन, दिल्ली।

प्रथम संस्करण १९५७
द्वितीय संस्करण १९५८

मूल्य : सात रू० पचास नए पैसे

मुद्रक
सुरेन्द्र प्रिंटर्स प्रा० लि०,
दिल्ली।

: १ :

"नारी भी एक विचित्र बीमारी है वकील साहब" कहकर स्वामी ज्ञानानंद ने कुर्सी पर आसन जमाया और कमंडल एक ओर रख दिया। और फिर बोले, "आज की दुनिया में नारी का स्थान कहां है? बल्कि यों कहना चाहिए कि कहाँ नहीं है? आज की नारी सर्वव्यापक है। वह भगवान् का दूसरा रूप है वकील साहब! नारी के बिना आज पुरुष की गति ही नहीं है"। और इतना कहकर स्वामी जी ने अपने घोटमोट चट्टान के समान स्वच्छ तथा साफ़ सिर को खुजलाते हुए वकील साहब के मुख पर बहुत ही गम्भीर दृष्टि से ताका।

स्वामी जी का मुख-मंडल कुछ विवर्ण-सा हो रहा था और मन उद्भ्रान्त। मस्तक पर सलवटें बल खा रही थीं। उनके होठ बार-बार फड़फड़ा उठते थे। कुछ बेचैनी के चिन्ह उनके मुख पर स्पष्ट झलक रहे थे और ऐसा प्रतीत होता था कि अवश्य उनकी आज कहीं किसी आधुनिक बीसवीं शताब्दी की प्रगतिशील नारी से टक्कर हुई है।

"ओह! स्वामी जी! क्या आज कोई फिर नया परीक्षण सामने आ गया?" वकील साहब बोले और फिर मुस्कुराकर कहने लगे, "स्वामी जी! आप मानें, या न मानें, परन्तु नारी वास्तव में है ही एक विचित्र वस्तु। क्या ग़ज़ब का आकर्षण है नारी में। यह अनुभव करने की चीज है। यह बात संस्कृत के मोटे-मोटे पोथे पढ़ने से अथवा व्यर्थ की ज़बानी लपालप करने से सम्बन्ध नहीं रखती। फिर आपकी तो टक्कर, दुर्भाग्यवश कहूं या सौभाग्यवश, होती भी ऐसी नारी से है कि जहां पर आपको तिलमिला कर रह जाना होता है।" इतना कह कर उन्होंने फिर अपनी फ़ाइलों को उलटना-पलटना प्रारम्भ कर दिया।

"मैं नारी से घृणा करता हूं।" क्रोध में आग-बगूला होकर स्वामी जी बीच ही में बोल उठे और उन्होंने क्रोध में अपनी आंखों को कई बार मींचकर सिर पर हाथ फेरा।

इस प्रकार स्वामी ज्ञानानन्द जी खोपड़ी पर हाथ फेर कर उसमें से निकलने वाली ज्वाला को शांत किया करते थे। जिस प्रकार तीव्र ज्वर में टैम्परेचर

बढ़ जाने पर सिर के ऊपर आइस बैग रखने अथवा ठंडे पानी की पट्टी चढ़ाने की आवश्यकता होती है उसी प्रकार स्वामी जी को जब नारी प्रसंग छिड़ जाता था तो अपनी खोपड़ी पर कई-कई बार हाथ अथवा तौलिया फेरने की आवश्यकता होती है। जब वह क्रोध के आवेश में तिलमिला उठते हैं तो इसी प्रकार तौलिया या हाथ फेर कर अपनी बुद्धि को ठिकाने लगाते हैं।

"आप नारी से घृणा करते हैं, यह मैं जानता हूं स्वामी जी! परन्तु आज तक यह नहीं जान पाया कि आप नारी से घृणा क्यों करते हैं? अथवा दूसरे शब्दों में मैं यह भी कह सकता हूं कि आप हर समय नारी से इतने भयभीत क्यों रहते हैं? आपकी इस प्रकार की घबराहट में कुछ-न-कुछ रहस्य अवश्य है। इस समय चाहे आप उस रहस्य का उद्‌घाटन करने में संकोच करें परन्तु यह मैं स्पष्ट रूप से कहे देता हूं कि दाल में कुछ काला अवश्य है। मैं भी वकील हूं, एक-न-एक दिन अवश्य ही इस रहस्य का पता निकाल लूंगा।" बहुत गम्भीर नहीं, कुछ मुस्कान भरी मुद्रा से वकील साहब ने कहा और आंखों पर वही अपना पुराना चश्मा, जिसके फ्रेम की एक कमानी पर से कई वर्ष हुए रबर गायब हो चुकी थी, चढ़ा लिया और दृष्टि फिर अपने काग़जात पर जमा ली।

स्वामी जी का मुख तमतमा उठा था और आंखें लाल होकर अंगारे की भांति दहक उठीं। स्वामी जी वकील साहब के पूर्व परिचित हैं और बनारस में इनका डेरा है। जब कभी दिल्ली आते हैं तो वकील साहब को अवश्य दर्शन देते हैं और वकील साहब भी तर्क-वितर्क इनसे कितनी ही कर लें परन्तु हैं इनके पुराने भक्त। स्वामी जी कम-से-कम एक दिन वकील साहब का भोजन करके उन्हें अवश्य कृतार्थ करते हैं।

वकील साहब की धर्मपत्नी, यह जानते हुए भी कि स्वामी जी नारी से घृणा करते हैं, कभी उनके आदर-सत्कार में कोई कमी नहीं आने देतीं। कभी-कभी तो यह आदर-सत्कार देख कर वकील साहब को कुछ भ्रम भी होने लगता है परन्तु फिर जब स्वामी ज्ञानानन्द जी के स्वभाव पर दृष्टि जाती है तो भ्रम काफ़ूर हो जाता है। वकील साहब की पत्नी उनका वकील साहब के हर मित्र से अधिक सत्कार करती हैं परन्तु स्वामी ज्ञानानन्द जी जैसी पत्थर की शिला पर उसका कभी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। स्वामी ज्ञानानंद जी के

लिए यह स्वागत इस प्रकार होता है मानो मरुभूमि में किसी ने एक लोटा भर कर पानी बहा दिया हो।

यह स्त्री भी कुछ विचित्र ही प्रकार की धातु से बनी है। जिस प्रकार स्वामी जी नारी से घृणा करते हैं, उसी प्रकार यह पुरुष से घृणा तो नहीं करती परन्तु पुरुष को अपना दास अथवा खिलौना अवश्य समझती है। वकील साहब इसके हाथ की कठपुतली हैं, इस पर बुरी तरह आसक्त हैं और इसके मुख का निकला हुआ प्रत्येक शब्द उनके लिए वेद-वाक्य है। इस नारी का हृदय बहुत उदार और विशाल है। उस हृदय में मानव की साधारण त्रुटियों के लिए क्षमा के अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं। स्वामी जी यदि उससे घृणा करते हैं तो किया करें, परन्तु यह उन्हें क्षमा का पात्र ही समझती है। यदि घर का ही कोई नौकर रुष्ट होकर मालकिन को मन में बड़बड़ाते हुए गालियां दे डाले तो क्या मालकिन का यह कर्तव्य है कि वह उसे भोजन न दे, अथवा भूखा मार डाले। नहीं, कदापि नहीं। यह इस गृहिणी के नारीधर्म के विरुद्ध है। इसलिए किसी को भोजन कराने का जहां तक सम्बन्ध है वकील साहब की पत्नी बहुत उदार हैं और बहुत ही प्रेमपूर्वक भोजन कराती है।

जहां तक कृपा-कोर प्राप्त करने का प्रश्न है स्वामी जी तो क्या यह भावना इसके मन में कभी वकील साहब के लिये भी जन्म लेकर नहीं आई। कृपा-कोर वह डालना जानती है, पाने की इच्छा न रखते हुए। एक महान् व्यक्तित्व है इस नारी का भी जो अपने में संपूर्ण विश्व की विभूतियों और शक्तियों को सन्निहित समझती है। वह अपने में पूर्ण है और अपने में मग्न भी। जीवन को विस्तार देने की महत्वाकांक्षा उसमें है और सीमित में असीस की छटा के दर्शन उसे हो जाते हैं। वह प्राचीन भी है और नवीन भी। जहां तक अवस्था का सम्बन्ध है, उसमें प्राचीनता कूट-कूट कर भरी है परन्तु वर्तमान वैज्ञानिक युग के विकासवाद और प्रगतिवाद से भी वह अनभिज्ञ नहीं है। वकील साहब से उसका जोड़ा अनमेल है, शक्ल में, रूप में, स्वभाव में, आयु में, विचारों की गहन गम्भीरता में, परन्तु इन सब से क्या हुआ ? इसी से तो उसके व्यक्तित्व के विकास को इतना असीम क्षेत्र भी मिला है। उसके जीवन का मुक्त प्रवाह वकील साहब की इन्हीं परिस्थितियों में सम्भव है। वह आज तक यही समझ सकी है और जीवन को किसी अन्य दिशा में विकसित

करने का उसे कोई अन्य साधन भी प्राप्त नहीं हो सका।

वकील साहब के घर पर आने वाला चाहे कोई भी व्यक्ति क्यों न हो उसका उचित सत्कार होता है। वकील साहब की धर्मपत्नी अपने और वकील साहब के परिचितों पर इस प्रकार छा गई है कि उन्हें उसके स्वभाव का लोहा मानना ही पड़ता है और वह जहां कहीं भी जाते हैं, जिस किसी के पास भी बैठते हैं, उसकी प्रशंसा के पुल बांधे बिना उनसे नहीं रहा जाता। यह सब कुछ होने पर भी स्वामी ज्ञानानन्द जी एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने कभी फूटे मुंह एक भी प्रशंसा का शब्द उसके लिए उच्चारण नहीं किया। स्वामी ज्ञानानन्द जी अपने वाक्यों को प्रवचन समझकर प्रयोग करते हैं और कम बोलने को अपना गुण मानते हैं। कभी-कभी कम बोलने में चाहे उनका उपहास ही क्यों न होता हो, परन्तु वह उसे भी अपना गौरव ही समझते हैं और गम्भीर मुद्रा बनाकर मस्तक पर तीन के स्थान पर पांच सलवटें डाल लेते हैं। वकील साहब की स्त्री स्वामी ज्ञानानंद जी से प्रभावित अवश्य हुई है परन्तु कितनी और किस रूप में इसका ठीक-ठीक निर्णय इस समय करना कठिन है।

स्वामी जी जब कभी वकील साहब के यहां आते हैं तो नारी के विषय में वह अपनी नवोनतम खोजों को वकील साहब के सामने रखते हैं और वकील साहब भी अपनी लच्छेदार बहस से पीछे नही हटते। आज स्वामी जी कुछ देर चुप रहकर अनायास ही कह उठे, "वकील साहब ! नारी एक विष है, मीठा विष, आकर्षक विष।" ओर इतना कहकर वकील साहब का भाव जानने के लिए उनके मुख पर देखने लगे। स्वामी जी की मुद्रा आज भी पहले की ही भांति गम्भीर है और वह जिस बात को मानो कहना या जानना चाहते हैं अभी तक नहीं कह पाये हैं और न जान ही पाये हैं।

"मैं आपके विचार से सहमत नहीं हूं स्वामी जी ! नारी को मैं अमृत मानता हूं, मीठा अमृत, आकर्षक अमृत।" और इतना कहकर वकील साहब भी स्वामी जी के मुख पर तीव्र दृष्टि से देखने लगे। बहस आरम्भ हो गई। विषय मिल गया और प्रतिवादी विचार भी ; दोनों एक दूसरे के विपरीत। फिर बहस में क्या देर लगती ? वकील साहब अपने मत को और स्पष्ट करने के लिए बोले, "नारी केवल अमृत ही नहीं है स्वामी जी ! वह जीवन की कसौटी है और यह वह कसौटी है कि जिसका स्थान विश्व के सब

आकर्षणों के पश्चात् आता है। धन-वैभव को ठुकराने वाला त्यागी भी नारी के सौंदर्य में उलझकर अपना जीवन हार बैठता है। नारी में सौंदर्य है, वह सौंदर्य जो नेत्रों को, हृदय को, और आत्मा को शांति प्रदान करता है। क्या इसी को आप परब्रह्म का मंगलमय रूप नहीं कहते ?" और इतना कहकर वकील साहब मुस्कुरा दिए। वकील साहब के मुस्कुराने में एक गम्भीर व्यंग्य की भावना छुपी हुई थी। फिर स्वामी जी के मुख की ओर देखकर उन्होंने अपना चश्मा आंखों पर लगाते हुए कहा—"यदि आप कहें तो मैं अपने मत की पुष्टि में महाकवि जायसी का महाकाव्य पद्मावत और अनेकों सूफी लेखकों की फ़ारसी की पुस्तकें आपके सम्मुख प्रस्तुत कर सकता हूं।" इतना कहकर वह सचमुच ही एक आलमारी खोलकर उसमें से पद्मावत की एक प्रति उठा लाये और लाकर स्वामी जी के सम्मुख मेज पर पटक दी।

"मैं कहता हूं यह ग़लत है, असत्य है, भ्रम है। नारी मानव के पतन का पहला गढ़ा है। बस इससे अधिक मैं आज कुछ नहीं कहूंगा। मुझे अभी-अभी एक सभा में भाषण देने के लिए जाना है। भारत स्वतन्त्र क्या हुआ है, धर्म का तो एकदम सर्वनाश ही हो चला है। मंदिरों में शूद्रों का प्रवेश हुआ और अब यह हिन्दू कोड बिल आया है। धर्म संकट में है वकील साहब ! इसकी रक्षा करनी होगी। हमें प्राण देकर भी इसकी रक्षा करनी होगी। जिस धर्म के स्थापित करने में हमारे पूर्वजों ने बलिदान दिये हैं, त्याग किए हैं, उसका इस प्रकार ह्रास होता हुआ इन आँखों से नहीं देखा जायगा।" इतना कह कर स्वामी जी अपना कमंडल हाथ में लेकर खड़े हो गये। स्वामी जी के हृदय में वास्तविक वेदना थी और थी अपने निर्धारित पथ पर चलने की कर्मठ योजना। वह त्याग की अमर मूर्ति बनकर यहां आये थे और जीवन में उन्होंने महान् त्याग किया है यह बात सत्य भी थी। धन, वैभव, ऐश्वर्य सभी कुछ उनके पास था परंतु आज वह कमंडल-धारी कोरे केवल स्वामी ज्ञानानन्द जी महाराज हैं। वकील साहब ने भी उनके साथ खड़े होते हुए कहा—'अच्छा ! तो आप बनारस से हिन्दू कोड बिल के विपक्ष में भाषण देने के लिए पधारे हैं। आज कैनाट प्लेस पर जिस सभा का आयोजन किया गया है संभवतः उसी के आप सम्मानित वक्ता हैं। समय हो गया, अब आपको जाना ही चाहिए। आपका संध्या का भोजन यहीं पर होगा, यह ध्यान रहे। मैं स्वयं आपको लेने के

लिए आऊंगा।"

स्वामी जी आने की अनुमति देकर चले गये और वकील साहब ने फिर अपनी मेज पर पड़े फ़ाइलों को इधर-उधर पलट कर पन्ने देखने प्रारम्भ कर दिये। स्वामी जी के चले जाने के पश्चात वकील साहब एक बार मन-ही-मन स्मरण करके मुस्कुरा दिये कि यह साधू भी कितना विचित्र है ? नारी को 'विष' कहता है। क्या वह वास्तव में यह नारी को 'विष' मानता है या यह इसका कोरा पाखंड और दिखावा मात्र है। खैर कुछ भी सही, परन्तु है अवश्य यह मजेदार व्यक्ति, विचित्र भी है। कुछ-न-कुछ इससे लाभ भी अवश्य होगा जीवन में।

: २ :

हिन्दू कोड बिल के विरुद्ध सभा का आयोजन हो रहा था।

प्लेटफार्म के चारों ओर घास के मैदान में श्रोतागण बैठे स्वामी ज्ञानानंद के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। श्रोताओं में आपस में अनेकों प्रकार की बहस चल रही थीं। एक ने कहा—"भाई हिन्दू कोड बिल आखिर है क्या बला, हमें तो यही भी ज्ञान नहीं। सुबह दफ्तर जाते हैं और संध्या को अपना काम करके घर वापस आ जाते हैं। कुछ देर आराम करके अपने बाल-बच्चों को लेकर यहां घूमने चले आते हैं। एक दो घंटा घूमकर फिर घर जाते है और सो जाते है। बस यही हमारा जीवन-क्रम है। प्रातःकल नहा धोकर खाना खाने के पश्चात् फिर दफ्तर चले जाते हैं। हमें तो अपने इस कार्यक्रम में कहीं भी हिन्दू कोड बिल की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए हमारे से तो यह पास हो जाये तब भला और न पास हो तब भला। बेकार की बकवास है। लोगों को व्यर्थ के गाल बजाने में न जाने क्या आनंद आता है ?"

दूसरा बोला, "बकवास ! आप इसे बकवास कह रहे हैं ? व्यर्थ का गाल बजाना कहते हैं ? यह बकवास नहीं समाज के जीवन और मरण का प्रश्न है, जाति के उत्थान और पतन का प्रश्न है।"

इसी समय भीड़ में खलबली मच गई। सभा के सम्मानित वक्ता आ पधारे। स्वामी ज्ञानानंद को लेजाकर ऊँचे आसन पर बिठाया गया और उनके गले में फूलों की अनेकों मालाएं डाली गईं। सभा एक बार उनके स्वागत के लिए झूम उठी।

स्वामी जी की मूर्ति आकर्षक थी। चेहरे पर प्रभावात्मकता थी और सौन्दर्य की छटा थी; ब्रह्मचर्य का तेज था और उनका विशाल वक्षस्थल तो बस देखते ही बनता था। उनके आकार, डील-डौल, तेज और चेहरे की मधुर-मुस्कान पर वहां कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जो एक बार आकर्षित न हुआ हो।

जब स्वामी जी भाषण देने के लिए उठे तो उनके प्रेमियों ने करतल ध्वनि की और स्वामी ज्ञानानन्द की जय का नारा लगाया। 'अखंड भारत' का स्वर

सब के कानों में गूंजा और 'धर्म की जय हो' यह शब्द भी सबने मुक्त कंठ से उच्चारण किये। वायुमंडल एक बार हिन्दुत्व की भावना से भर गया और हिन्दू-विचार-धारी आगंतुकों के हृदय उमंग से खिल उठे।

स्वामी ज्ञानानंद ने भाषण के प्रारम्भ में अपना भूमिका-भाग इस प्रकार आरंभ किया, "भक्त जनो ! देश पतन की ओर जा रहा है। दुर्भाग्यवश देश की बागडोर उन व्यक्तियों के हाथों में आ गई है जिनके जीवन का धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं, जो अपनी भाषा, अपनी संस्कृति और उसके गौरव को नहीं जानते।

भारत का बंटवारा उन्होंने क्यों किया ? इसलिए कि वे राज्यसत्ता को हस्तगत करने के लिए उतावले हो रहे थे, पागल हो रहे थे, दीवाने हो रहे थे। भारत के अगणित लालों के बलिदानों से जो अंग्रेजी साम्राज्यवाद की जड़ें ढीली पड़ चुकी थीं, खोखली बन चुकीं थीं, वे स्वयं ही उखड़ना चाहती थीं, और भारत का महान् गौरव प्रतिपल, प्रतिक्षण, उनको काल की भांति दिखाई दे रहा था। उस समय इन कांग्रेसियों ने राज्य-सत्ता को हस्तगत करने में देर न हो जाय इसलिए भारत-विभाजन को मानकर अपने मतलब की सिद्धि की।

यह भारत के साथ अन्याय हुआ और उन वीर सैनिकों के साथ अन्याय हुआ जिन्होंने 'अखंड भारत' के नाम पर अपने बलिदान दिये। केवल हिन्दुओं के साथ ही नहीं इन्होंने अपनी मतलब-परस्ती में पड़ कर अपनेसाथियों के साथ भी विश्वासघात किया। उदाहरण के लिए आप लोग खान अब्दुल गफ्फार खाँ और डाक्टर खान साहब को ले सकते हैं।

खैर ! यह मेरा आज का विषय नहीं है। मुझे आज हिन्दू कोड बिल के विषय में कुछ कहना है।" और इतना कह कर स्वामी जी ने हिन्दू कोड बिल की धज्जियाँ बिखेरनी प्रारम्भ कर दीं।

स्वामी जी के भाषण के भूमिका-भाग ने जनता में एक खलबली मचा दी। संध्या समय कैनाट प्लेस पर घूमने वाले समुदाय में अस्सी प्रतिशत पंजाबी और बीस प्रतिशत अन्य व्यक्ति होते हैं। स्वामी जी की पहली ही उक्ति ने इन सबके सिर स्वाभाविक गम्भीरता से डुला दिये और वे मुक्त कंठ से उनकी प्रशंसा करने लगे।

स्वामी जी पर फिर फूलों की वर्षा हुई, श्रोतागण झूम उठे और मुक्तकंठ

से उन्होंन स्वामी जी के विचारों का समर्थन किया ।

स्वामी जो का हृदय भी गर्व से कई इंच ऊंचा उठ गया और भाषण में आशातीत सफलता देखकर उन्हें अपने कार्य-क्रम के भविष्य पर गर्व हो उठा ।

सभा समाप्त होने पर अनेकों युवतियां मंच के पास स्वामी जी की चरण-रज लेने के लिए पहुंच गईं। परन्तु स्वामी जी का कठोर आदेश था कि कोई स्त्री उनके सम्मुख चरण-रज लेने के लिए न आये ।

युवतियों को चरण-रज न मिली हो ऐसी बात नहीं, परन्तु इस कार्य के लिए नियुक्त थे ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश । यह स्वामी जी के प्रधान शिष्य थे और हर समय स्वामी जी के साथ ही रहते थे । इनका प्रधान कार्य यही था कि यह स्वामी जी की चरण-रज युवतियों को दें और उन्हें स्वामी जी के पास तक न आने दें ।

ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश एक सुन्दर युवक था जिसका विशाल वक्षस्थल, लम्बी भुजायें, उन्नत मस्तक, बड़ी-बड़ी आंखें, युवतियों के लिये विशेष आकर्षण की वस्तु थीं । ब्रह्मचारी को स्वामी ज्ञानानन्द का आदेश था कि वह चरण-रज जिसे भी दे उससे पहले उसका वर्ण-ज्ञान अवश्य कर ले । निम्न वर्ण की युवतियों के लिये स्वामी जी की चरण-रज अप्राप्य थी ।

आज के इस जमाव में एक विचित्र घटना यह हुई कि जब ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश चरण-रज बांट रहे थे तो उसी समय एक युवती, जिसका मांसल गोरा बदन रक्त के आधिक्य से फूटा पड़ रहा था, जिसके गोल बड़े-बड़े खंजन-दृग मानो उड़कर दूसरे के हृदय में पैठने के लिये संघर्ष प्रायः थे, हंसनी के समान कपोत जैसी ग्रीवा लिये मस्तानी चाल में आगे बढ़ती चली आई और आकर ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश के सम्मुख खड़ी हो गई । ब्रह्मचारी के नेत्र चकित रह गये ।

उसका वर्ण पूछने का साहस ब्रह्मचारी में न हुआ और उसने चरण-रज देने के लिये अपना हाथ बढ़ा दिया । स्वामी ज्ञानानंद ने यह दृश्य देखा और ज्यों ही उस युवती ने अपना हाथ चरण-रज लेने के लिए आगे बढ़ाया वह सिंह की भांति मंच से गरज कर बोल उठे, "ठहरो ।"

ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश का हाथ वहीं रुक गया । ब्रह्मचारी पत्थर की शिला बन गया ।

"तुमने इस नारी का वर्ण-ज्ञान किया ?" उसी गम्भीर मुद्रा के साथ गंभीर ध्वनि में ज्ञानानंद जी ने प्रश्न किया। स्वामी ज्ञानानन्द का मुख इस समय क्रोध से तमतमा रहा था और होठ बिना प्रयास ही विद्युत-वेग से थिरक रहे थे।

"जी नहीं !" ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया। उससे अपराध बन पड़ा था, यह जानकर उसका सिर लज्जा और खेद से नीचे झुक गया।

"मैं तुम से चरण-रज बांटने का अधिकार वापस लेता हूं।" उसी प्रकार गरज कर ज्ञानानन्द जी ने कहा और जनता में एक खलबली मच गई।

क्षणिक मौन गाम्भीर्य के पश्चात वह युवती निर्भीकता पूर्वक आगे बढ़ती चली गई और अंत में मंच के निकट पहुंच कर मुस्कान भरी मादक दृष्टि से ज्ञानानन्द जी के अनेकों बल पड़े मस्तक पर निहार कर कटाक्ष के साथ बोली, "आपने चरण रज देने के लिए ब्रह्मचारी को मना किया ? क्या मैं पूछ सकती हूं क्यों ?"

इस घटना को देख कर चारों ओर भीड़ के ठट्ट जुड़ गये और सब सोच रहे थे कि अब न जाने क्या होगा ?

ज्ञानानंद जी भी निर्निमेष गम्भीर मुद्रा बनाये बैठे थे। क्रोध के कारण उनका शरीर थर-थर कांप रहा था और मुख में एक शब्द भी न आ रहा था। वह युवती उसी प्रकार मुस्कुराकर फिर गम्भीरता के साथ कहने लगी, "क्यों व्यर्थ का ढोंग रच रहे हो स्वामी जी ! तुम जिसे जीवन का गाम्भीर्य समझ रहे हो इसे मैं पाखंड कहती हूं। तुम जिसे ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश के जीवन की भूल कह रहे हो मैं उसे तुम्हारे जीवन की विडंबना मानती हूं। ब्रह्मचारी के जीवन में आज प्रथम विकास हुआ है। वह मानव नहीं जो मानव-मानव में भेद-भाव करे। मैं तो तुमको पत्थर कह सकती हूं क्योंकि तुम्हारे जीवन में रस नहीं, सौंदर्यांकन की क्षमता नहीं, मानवता नहीं और मानवता का मुक्त प्रवाह नहीं। तुम जैसे नीरस व्यक्ति को कहीं जंगलों में डेरा लगाना चाहिए। किसी हिमालय की कंदरा में जाकर भजन कीजिए, आप व्यर्थ ही यहां मैदानों में उतर आये हैं ?" इतना कह कर एक व्यंग्यपूर्ण मुस्कुराहट उस युवती के मुख-मंडल पर खिल उठी और उसने स्वामी जी के जड़ मानव पर अपनी विजय का अनुभव किया।

चारों ओर एकत्रित हुई जनता को उपहास की सामग्री मिल गई और

बहुत से लोग ठहाका मार-मार कर हंसते हुए बोले "क्या खूब करारा जवाब दिया है यार इस औरत ने।"

"जनाब तमाचा लगा दिया गाल पर, तमाचा।" दूसरे ने मुंह बिचकाकर कहा।

"इन धूर्त्त लोगों के साथ यही व्यवहार होना चाहिए।" एक कॉलेज का छोकरा बोला।

"जनाब मैं तो चप्पल से बातें करती।" इस छोकरे के साथ वाली युवती आंखें मटकाकर बोली।

इसी समय पीछे से वकील साहब आ पहुंचे और तनिक दूर से ही देखकर समझ गये कि अवश्य कुछ गड़बड़-घुटाला है। आज स्वामी जी की फिर किसी बीसवीं शताब्दी की युवती से मुठ-भेड़ हो गई। निकट पहुंचकर देखा तो मिस सरोज थीं, दिल्ली की प्रसिद्ध नर्त्तकी, प्रसिद्ध संगीत-कला-अभिनेत्री, जिसकी प्रत्येक थिरकन पर दिल्ली का सभ्य समाज झूम उठता था और जिसके एक संकेत पर न जाने कितने मानव रोमांचित हो उठते थे।

"ओह मिस सरोज! आप भी यहां पर स्वामी जी का व्याख्यान सुनने पधारी थीं?" वकील साहब ने आगे बढ़कर जरा सशंकित भाव से पूछा और मुस्कुराते हुए स्वामी जी तथा सरोज के बीच जा पहुंचे।

"ऐसी तो कोई बात नहीं है वकील साहब! बात यह हुई कि मैं इधर घूमने आई थी। यह ब्रह्मचारी कमंडल हाथ में लिए चुटकी से कुछ बांट रहा था और अनेकों स्त्रियों का इसके चारों ओर जमघट लगा था। मुझे ब्रह्मचारी की मुख-मुद्रा पसन्द आई और मैं अनायास ही सौंदर्य-प्रेमिका होने के नाते इस ओर चली आई।

ब्रह्मचारी के युवक-सौंदर्य का मुझ पर प्रभाव पड़ा। मैं इसकी ओर आकर्षित हुई और मैंने भी अपना हाथ फैला दिया। उस समय तक मुझे यह ज्ञात नहीं था कि यह क्या बांट रहा है, और मेरे वह किस उपयोग में आयेगा?

सौंदर्य सौंदर्य की उपेक्षा न कर सका। ब्रह्मचारी का युवक-सौंदर्य मेरे यौवन की ओर आकर्षित हुआ और ब्रह्मचारी ने भी अपना हाथ मेरी ओर बढ़ा दिया। ब्रह्मचारी का हाथ बढ़ाना था कि स्वामी जी ने कड़क कर उसे इसलिए रोक दिया कि उसने बिना मेरा वर्ण पूछे इनकी चरण-रज देने के

लिए हाथ बढ़ा दिया। तब मुझे पता चला कि ब्रह्मचारी इस धूर्त भगवे वेषधारी भिखारी की चरण-रज बांट रहा था। इस प्रकार प्रकृति के स्वच्छंद सौंदर्य-प्रवाह में इस धूर्त्त ने बाधा डाल दी। मैं पूछती हूं कि क्या यह दण्ड का भागी नहीं है? आपका कानून इस विषय में क्या आज्ञा देता है, क्या कहता है? यदि इसके उस समय बिजली की भांति कड़कने पर किसी का सुकुमार हृदय टूट जाता, ठेस खा जाता या खा गया हो, तो आपका कानून क्या उसे काई सुरक्षा प्रदान कर सकता था, अथवा कर सकता है?" इतना कहकर भेद पूर्ण दृष्टि से सरोज ने एक बार ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश, स्वामी ज्ञानानंद और वकील साहब के मुख पर ताका और फिर उत्तर पाने के लिए नेत्र वकील साहब के मुख पर जमा दिये।

सरोज की मादकता भरी मुस्कान की लपेट में आकर एक बार तो वकील साहब इस प्रकार झूम उठे जैसे बीन की मधुर तान सुन कर काला सर्प झूम जाता है, परन्तु वह तुरन्त ही सतर्क हो गये।

समय काफ़ी हो चुका था। बिजली की बत्तियां जल गई थीं। वकील साहब स्वामी जी को भोजन के लिए लेने आये थे और यहां उन्हें एक क्लाइंट मिल गया। वह मुस्कुरा कर अपना चश्मा उतारते हुए बोले, "मिस सरोज! लॉ में आपके लिए बहुत गुंजाइश है। आप मेरे साथ आफ़िस चलिए। मैं वहीं क़ानून की पुस्तकें दिखाकर आपकी शंकाओं का समाधान कर दूंगा। केस आपका संगीन है और मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि आपके विपक्षी की अवश्य हार होगी, हार ही नहीं बल्कि मुंह की खानी पड़ेगी उसे।" बहुत गम्भीर-मुद्रा के साथ वकील साहब ने उत्तर दिया।

स्वामी ज्ञानानन्द जी परेशान थे कि यह व्यर्थ की बला कहां से गले में फंस गई। आये थे चोबे बनने और यहां दूबे भी न रहे। मन में भय भी हुआ कि कहीं व्यर्थ के लिए यदि इस नर्तकी ने मुकदमा खड़ा कर दिया तो अदालत में खिचे-खिचे फिरना होगा। रही वकील साहब की बात, सो वह खाना भी खिलायेंगे, आदर-सत्कार भी करेंगे, परन्तु क्लाइंट का मुकदमा नहीं छोड़ सकते। इस समय उन्हें रह-रहकर अपने और वकील साहब के ऊपर क्रोध आ रहा था।

सभा की कार्यवाही समाप्त हो चुकी थी। स्वामी जी सभा के कार्यकर्त्ताओं से विदा लेकर वकील साहब के साथ चल दिये और साथ-साथ मिस सरोज

तथा ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश भी। स्वामी जी सरोज को टालना चाहते थे परन्तु सरोज पीछा छोड़ने वाली नहीं थी। मिस सरोज ने कार में बैठते हुए कहा, "वकील साहब आप फ़ीस की चिंता न करें, फ़ीस मुंह मांगी दूंगी, परंतु इन्हें छठी तक का खाया-पिया याद आ जाना चाहिए। मैं कहती हूं कि ये पाखंडी और पौंगा-पंथी लोग जनता को पथ-भ्रष्ट करना चाहते हैं। इन्हें जिस प्रकार भी लपेटा जाय लपेटना चाहिए। ये लोग युग-युगांतर से समाज को लपेटते और खसोटते चले आ रहे हैं। इन लोगों ने समाज को उल्लू बना-बना कर अपना उल्लू सीधा किया है। इन लोगों की अक्ल ठीक करनी होगी। आप जैसे आधुनिक विद्वानों से मैं बहुत कुछ आशा रखती हूं।" यह कहते हुए मिस सरोज का मुस्कराता हुआ चेहरा गंभीर हो उठा।

जब तक मोटर नहीं चली थी, उस समय तक ज्ञानानंद जी शांत थे, क्योंकि वह जनता के सम्मुख अपनी गंभीर मुद्रा को ठेस पहुंचाना नहीं चाहते थे।

कार के चलने पर वह अपने हृदय के उबाल को न रोक सके और एक दम बौखलाकर बहुत ही कर्कश शब्दों में दांतों को किटकिटाकर हथेलियों को मसलते हुए बोले, "क्या बकती है तू कल की छोकरी ?" और माथे में सलवटें डालकर मुंह एक ओर को कर लिया।

"ऐनेदर ऑफेंस, वकील साहब ! ऐनेदर ऑफेंस !—'क्या बकती है कल की छोकरी' कहा—दो गवाहों के सामने कही गई बात प्रामाणिक मानी जाती है कानून की दृष्टि में।"

सरोज बोली, "ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश ! तुम सर्तक बनो, यदि जीवन में कुछ करना चाहते हो। तुम्हारे गुरू निर्जीव हैं और तुम में मुझे प्राण दिखाई देता है। तुम जीवन में अवश्य कुछ कर सकोगे। तुम्हारे गुरू विनाश की ओर जा रहे हैं; तुम विकास की ओर बढ़ो। आज वैज्ञानिक विकासवाद का युग है, जिसमें यह ब्रह्मचर्य का उपदेश देते हैं। कहिए वकील साहब ! क्या इसमें कहीं पर भी आपको प्रगति की झलक दिखाई देती है ?" मिस सरोज ने मुस्कुराते हुए कहा और सतर्क होकर तनिक और अकड़कर सीट पर बैठ गई।

सरोज के ये वाक्य सुनकर स्वामी जी को बहुत क्रोध आ गया और वह फिर उबलकर बोले, "गाड़ी रोक दीजिए वकील साहब ! आप मेरा अपमान करा रहे हैं। मैं और अधिक सहन नहीं कर सकता।" और स्वामी जी खड़े

होकर चलती गाड़ी से उतरने का प्रयत्न करने लगे।

"हैं ! हैं ! अपमान !" आश्चर्य प्रकट करते हुए वकील साहब बोले। "यह भला किस प्रकार संभव हो सकता है कि मैं आपका अपमान करा रहा हूं ? आप मेरे आज के आदरणीय अतिथि हैं। हां इतनी बात अवश्य है कि मिस सरोज की जबान पर ताला लगाना मेरी शक्ति में नहीं है और मैं कहता हूं कि आपने व्यर्थ ही ऐसी झगड़ालू स्त्री को छेड़कर अपने सिर कर लिया। यदि एक चुटकी चरण-रज बेचारी यह पा ही जाती तो शायद इसका भी कुछ उद्धार हो जाता। अब यह तुली है आप पर मुकदमा करने को। परिणाम चाहे जो भी हो, परन्तु यह मुकदमा अवश्य कर डालेगी, यह मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूं।" गंभीरता पूर्वक वकील साहब बोले।

"तब करे यह मुकदमा, इससे मैं डरता नहीं।" स्वामी ज्ञानानंद ने चुनौती देते हुए कहा, "मैं ऐसी-ऐसी न जाने कितनी छोकरियां आज तक जीवन में सीधी कर चुका हूं। यह बेचारी तो चीज ही क्या है ? जब तक नहीं बोलता हूं तभी तक नहीं बोलता। मेरे स्वभाव से आप भी अभी पूरी तरह परिचित नहीं हैं वकील साहब !" स्वामी जी उसी प्रकार क्रोध में भरकर बोले।

ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश शांत मुद्रा में बैठा हुआ ये सब बातें सुन रहा था। उसका चित्त आज एक विचित्र प्रकार की विचार धारा के अंदर पड़कर इधर-उधर पछाड़ें खा रहा था।

आज जीवन में प्रथम बार उसने जीवन के दूसरे पहलू पर झांकने का प्रयत्न किया। जीवन का नवीनतम दृष्टिकोण आज ब्रह्मचारी के सम्मुख आया। एक तो उसका आज यह भ्रम खंडित हो गया कि स्वामी ज्ञानानंद के तेज के सम्मुख कोई आंखें ही नहीं मिला सकता और दूसरे उसने आज सौंदर्य की छटा में एक ज्योतिपूर्ण सुन्दरतम रूप के दर्शन किये जिसमें आकर्षण का बल था, क्रोध का नहीं।

मिस सरोज के गुलाब से मुख से जो शब्द भी निकलते थे वे ऐसे प्रतीत होते थे मानो गुलाब के फूल की पंखुड़ियां झड़ रही हों। सरोज के मुख से निकला हुआ प्रत्येक शब्द ब्रह्मचारी को वेदवाक्य मालूम दिया और उसने अपने जीवन की विडंबना में से झांककर मानव की स्वच्छंदता के दर्शन किये।

"ऐसे स्वभाव में न जाने कितने पाखंडी साधुओं के देख चुकी हूं वकील

साहब ! मैंने समाज के ऐसे अनेकों ठग ठीक किये हैं। मेरी रंगशाला में पहुंच कर इनकी पोल खुल जाती है। इनका नशा उतर जाता है। ये मेरे चरणों पर गिर जाते है। मैं शर्त लगाकर कहती हूं कि एक दिन आपके इन्हीं ज्ञानानंद जी की अगर छीछालेदर करके आपको न दिखा दूंगी तब आप कहिये। मैं पूछती हूं वकील साहब ! कि आप जैसे विद्वान् भी जब इस प्रकार के पाखंड को प्रश्रय देंगे तो बेचारी मूढ़ जनता का क्या होगा ? वह बेचारी तो इन ढोंगियों के मायाजाल में फंसकर अवश्य अपना सर्वनाश कर लेगी।" मिस सरोज ने गंभीरतापूर्वक कहा।

"तो तुम्हारा मतलब यह है कि हम समाज को विनाश की ओर ले जा रहे है ?" स्वामी ज्ञानानंद ने गम्भीर होकर सरोज से पूछा।

"बिलकुल यही तो मैं कह रही हूं और यही मैं कहना चाहती हूं। लीजिए, अब मैं तुम्हारे लिए 'आप' शब्द का प्रयोग करती हूं क्योंकि आप आयु में मुझ से बड़े है। परन्तु आयु के बड़प्पन को मैं बड़प्पन नही मानती, यह ध्यान रहे। आप सरिता के प्रवाह को लौटा देने का प्रयास कर रहे हैं। भारत की जनता को मुक्त वायुमंडल में श्वास लेने दीजिये। स्वच्छंद विचारों को प्रकाश में आने दीजिये। मानव-जीवन की शृंखलाओं को टूटने दीजिए। अपने गुरूडमवाद के पौंगा-पंथी विचारों को उठाकर ताक में रख दीजिये। यह सब अब नहीं चलेगा।

यदि आप मेरा कहा मानें तो इससे पूर्व कि समाज आपको दूध की मक्खी की तरह अपने अंदर से निकालकर फेंक दे, आप स्वयं उससे पृथक होकर कहीं एकांत में समाधिस्थ हो जाइये और वहां पर ऐसी साधनापूर्ण समाधि लगाइये कि आपके ऊपर दीमक लग कर मिट्टी का एक टीला बन जाय। प्राण आज भी आप में वर्तमान नहीं है। जीवन की सरसता समाप्त हो चुकी है। समाज के रस में आप रस नही ले सकते। समाज की प्रगति में आपको प्रोत्साहन नहीं मिलता। आप समाज के प्राणी नही हैं, मैं यही कहूंगी।" इतना कहकर मिस सरोज ने मुस्कुराते हुए स्वामी जी की गंभीर मुद्रा को निहारा।

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश मिज सरोज का मुंह ताक रहा था और साथ-साथ स्वामी ज्ञानानंद के मुख पर उतरती और चढ़ती हुई भाव-लहरियों को भी पढ़ने का प्रयास उसने किया।

"बावली छोकरी ! हम समाज के निर्माता हैं, धर्म-गुरु हैं।" गम्भीरता पूर्वक ज्ञानानंद बोले और फिर अकड़ कर अपना मस्तक ऊंचा करते हुए दायां हाथ घुटी हुई चांद पर दो वार फेरा और फिर तनिक घृणा की दृष्टि सरोज पर फेंक कर अपना मुंह दूसरी ओर कर लिया।

'आप·····और समाज के निर्माता !" कहकर व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के पश्चात मिस सरोज खिलखिलाकर हंस पड़ी। कार वकील साहब के मकान पर पहुंच गई।

: २ :

सरोज वकील साहब से विदा हो ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को साथ ले वहां से चल पड़ी। चलते समय स्वामी ज्ञानानंद से उसने कहा "आपसे जब मेरी भेंट न्यायालय में ही होगी।"

ज्ञानानंद ने भी त्योरी चढ़ाकर उत्तर दे दिया, "जाओ, हम त्यागी हैं, ब्रह्मचारी हैं, संसार की मोह-माया में लिप्त नहीं। न्यायालय हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

चलते समय ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश अपनी नित्य की बान की भांति स्वामी जी को दंडवत करने के लिए ज्यों ही उद्यत हुआ त्यों ही सरोज ने कड़ककर कहा, "यह क्या करते हो ब्रह्मचारी ? इस धूर्त्त के सम्मुख इस प्रकार झुकना उचित नही। तुम्हारे हृदय में जो झूठी श्रद्धा के अंकुर इस पाखंडी ने उगा दिए हैं उनके नष्ट करने में मुझे समय लगेगा।"

सरोज ने चलते समय यह अनुभव अवश्य किया कि ब्रह्मचारी के पैर पृथ्वी पर भारी बन कर पड़ रहे थे और स्वामी ज्ञानानंद के नेत्रों की पुतलियां कुछ पसीज आई थीं। स्वामी ज्ञानानंद एक शब्द भी मुख से न बोले और पत्थर की शिला की भांति स्थिर और गंभीर बने बैठे रहे।

सरोज की कोठी बारहखंभा रोड पर नई दिल्ली में थी और वकील साहब शंकरलाल लेन सिविल लाइंस में रहते थे। वकील साहब सरोज को पहुंचाने का विचार रखते हुए भी इस समय असमर्थ थे क्योंकि अभी उन्हें स्वामी ज्ञानानंद को भोजन कराना था। सरोज मुस्कराती हुई ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को साथ ले, यह कहकर कोठी से विदा हुई, "अच्छा वकील साहब ! मैं चली। मेरी चिंता आप न करें। स्वामी जी महाराज को जरा करारी-करारी पूड़ियां खिलाना, कहीं ऐसा न हो कि कल आप ही उन्हें हवालात में बंद कराने का प्रयत्न करें और तब फिर न जाने कितने दिन तक यह स्वादिष्ट भोजन इन्हें न मिल सके।"

सरोज के मुख पर इस समय विजय के लक्षण दिखलाई दे रहे थे और

उसका गुलाब सा मुख-मंडल अपने पूर्ण यौवन की छटा के साथ विकसित होकर मादक बना देने वाली छटाएं छिटका रहा था। जीवन में यौवन का विकास लिए एक विचित्र मादकता के साथ सरोज वहां से चल पड़ी।

"तो फिर आप कल कचहरी में ही दर्शन देंगी, मिस सरोज ?" वकील साहब ने बात दृढ़ करते हुए मुस्कराकर चलते समय पूछा।

"क्यों नही ! मुझे केस जो फाइल करना है ? मैं स्वामी जी से उनके अपराध की क्षमा मंगवा कर छोड़ूंगी। आप क्या नहीं जानते वकील साहब कि मुझे जिस बात की लगन लग जाती है उसके लिए मैं आकाश-पाताल एक कर डालती हूं। चाहे जितना पैसा मुझे क्यों न खराब करना पड़े मैं स्वामी जी के दांत खट्टे किये बिना न रहूंगी।" मुस्कराते हुए सरोज ने कहा और फिर ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश का हाथ अपने हाथ में लेकर अपनी सफलता के गर्व पर इठलाती हुई खरामा-खरामा चहलकदमी के साथ आगे बढ़ने लगी।

वकील साहब बोले, "क्यों नहीं, क्यों नही ! आपको यही करना चाहिए। पाखंडी को उसके पाखंड का उचित दंड मिलना ही चाहिए।"

वकील साहब लौटे तो स्वामी जी बहुत उदासीन भाव से बैठे थे।

"आप उदासीन क्यों हैं ?" वकील साहब ने स्वामी जी के सामने वाली कुर्सी पर बैठते हुए पूछा। "बड़ी कठिनाई से सरोज को टाल कर आया हूं। कितनी जिद्दी लड़की है ? क्या कहूं आपसे स्वामी जी ! कहती थी कि सब काम छोड़कर इसी समय मेरे केस का ड्राफ्ट तैयार कर दो। मैंने समझाया कि क्यों व्यर्थ पागल बन रही है। अभी जरा गर्मागर्मी की बात है। कल तक सब ठीक हो जाएगा। तुम भी अपनी ही हो और स्वामी जी भी अपने ही हैं। कोई ग़ैर नही है, परंतु स्वामी जी ! मुझे ऐसा दीखता है कि वह मानेगी यहीं। केस अवश्य दायर कर डालेगी। परन्तु आप इतने उदास न हों। इसमें उदासीन होने का मैं कोई कारण नहीं समझता।" चातुर्य के साथ वकील साहब ने कहा।

"उदासीन होने की क्या बात पूछते हो वकील साहब ! आज इस छोकरी ने तो वास्तव में मेरे जीवन में महान् बेचैनी पैदा कर दी। मेरी एक अमूल्य निधि पर डाका मारा है इसने। आप नहीं जानते कि एक चरित्र का संस्कार करके निर्माण करने में कितनी साधना, कितना परिश्रम और कितनी शक्तियों का संचालन करना होता है। ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को खोकर आज मैंने

जीवन का क्या कुछ नहीं खो दिया ?" उसी प्रकार उदासीन भाव से स्वामी जी ने उत्तर दिया।

स्वामी जी के नेत्र, वकील साहब ने देखा, सजल हो रहे थे।

"तब तो आपको लूट लिया सरोज ने ! यह तो दिन-दहाड़े डाका है। एक गुरु से उसके शिष्य को छीन लेना डाका नहीं तो और क्या है ? एक गुरु की सबसे बड़ी निधि उसका शिष्य है। न्याय की दृष्टि में सरोज दोषी है। मैं न्यायचार्य होने के नाते आपको कभी अनुचित अनुमति नहीं दूंगा। सरोज से मेरा कितना ही संबंध सही परन्तु कम तो आपसे भी नहीं है। आप सरोज पर अभियोग चला सकते हैं।" बहुत गंभीरतापूर्वक वकील साहब ने आंखों पर अपना चश्मा चढ़ाते हुए पास की अलमारी से एक मोटी पुस्तक निकाल कर उसके पन्ने पलटते हुए कहा और अंत में वाडक्ट (अंतिम मत) दिया कि उनका केस सरोज के केस से बहुत अधिक स्ट्रोंग (मजबूत) है।

"परंतु मैं यहां केस लड़ने नहीं आया हूं वकील साहब ! आप भी क्या व्यर्थ की बातें करते हैं ? क्या आप मुझे भी उस छोकरी की ही भांति छिछोरा समझते हैं। मैं बनारस से यहा किसी लक्ष्य की पूर्ति के लिये आया हूं, किसी कला अभिनेत्री पर अभियोग चलाने नहीं आया।" गंभीरतापूर्वक स्वामी ज्ञानानंद ने झुंझलाए से स्वर में कहा।

"मैंने आपको कोई अनुचित अनुमति नहीं दी। एक क़ानूनी आचार्य होने के नाते अपने मित्रों का कानूनी कठिनाइयों में मार्ग-दर्शन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं, इसीलिए आपको भी....."

पूरी बात अभी वकील साहब कहने भी न पाये थे कि बीच में ही उन्हें रुक जाना पड़ा। स्वामी जी गंभीर होकर एक कड़क के साथ बोल उठे "वकील साहब ! मैं आपके क़ानून सुन चुका। मुझे किसी पर कोई अभियोग नहीं चलाना है, किसी पर कोई केस दायर नहीं करना है।" और वह अपना कमंडल हाथ में लेकर खड़े हो गये।

"उस कल की छोकरी ने मुझे पाखंडी कहा, पौंगापंथी कहा, ढोंगी कहकर पुकारा.....क्या नहीं कहा उस कल की नादान लड़की ने ? उसे क्या अधिकार था यह सब कहने का ? मैं उस समय क्या उत्तर देता उस नासमझ वेश्या-पुत्री को ? उससे बोलना भी मेरा अपमान था।

वर्ण-व्यवस्था नष्ट हो चुकी। अब क्या होगा ? शूद्र मंदिरों में पुजारी बन कर बैठेंगे, विद्यालयों में गुरुजनों का आसन संभालेंगे, देश का न्याय-दंड उनके हाथों में खेलने वाला खिलौना होगा, वेद-शास्त्रों को साधारण पुस्तकों की भांति गल्प मानकर अपमानित किया जाएगा·····।" यह विचार कर स्वामी जी तिलमिला उठे।

"परंतु इस सब में मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं स्वामीजी ? क्या मेरा क़ानून इसमें आपकी कुछ सहायता नहीं कर सकता ? इस पाखंड के वितंडा-वाद को तो मैं भी सहन नहीं कर सकता। आप केस दायर कीजिए स्वामी जी ! मैं आपके लिए·····आपके लिए नहीं, धर्म और संस्कृति की रक्षा के लिए आधी फ़ीस पर वकालत करूंगा। मैं पूरी फीस भी छोड़ देता इस शुभ कार्य के लिए, परंतु पापी पेट को कहां रख आऊं।" बहुत गंभीरतापूर्वक वकील साहब कह रहे थे और इसी समय स्वामी जी बैठक का द्वार खोल कर बाहर पोर्टिकों में जाकर खड़े हो गये।

वकील साहब भी अपना चश्मा संभालते हुए पीछे से जाकर बोले, "परंतु स्वामी जी ! आपने दंड-कमंडल कैसे संवार लिया ? भोजन तैयार है। गृहिणी ने बड़े प्रेम से तैयार किया है। क्या वह यों ही पड़ा रह जायगा ?"

स्वामी जी बिना एक शब्द भी मुख से बोले उलटे लौट आये और हाथ-मुंह धो, कुल्ला इत्यादि से निवृत्त हो आसन पर जम गये। भोजन वास्तव में वकील साहब की धर्मपत्नी ने बड़े प्रेम से बनाया था। पूड़ियां चाहे कोटोजम की ही थीं, परंतु थीं फूली हुईं और करारी और साथ में दो प्रकार का नमकीन और मीठा रायता, दो प्रकार की मीठी और नमकीन चटनी तथा कई प्रकार के खुश्क और तरीदार शाक थे।

स्वामी ज्ञानानंद ने यह सब व्यंजन इस प्रकार पेट में उंडेल लिए मानो कोई रिक्त घड़ा था और उसकी पूर्ति उन्हें करनी थी। वकील साहब की गृहिणी को एक शब्द भी प्रशंसा का प्राप्त न हुआ और स्वामी जी ने एक बार भी कृपा-कोर से उसकी ओर न देखा। कितना पाषाण-हृदय था इस व्यक्ति का ! वह मन ही मन सोचती रह गई।

भोजन के पश्चात् भी और कोई विशेष बात स्वामी जी न कर सके। उनके मस्तक की सलवटें अभी तक खुली नहीं थीं। हिंदू कोड बिल की समस्या

के साथ ही साथ एक सरोज की समस्या और उनके मस्तिष्क का कांटा बन गई। सरोज ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को छीन कर ले गई—यह कितना बड़ा अनर्थ हुआ ?

वह सोच रहे थे "नारी का स्थान विश्व के सब आकर्षणों के पश्चात् आता है। धन-वैभव को ठुकराने वाला त्यागी भी नारी के सौंदर्य में उलझ कर अपना जीवन हार बैठता है। ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश अपना जीवन हार बैठा।

"अच्छा वकील साहब ! मैं अब चला। मुझे अभी 'हिन्दू कोड बिल विरोधक-मंडल' के मंत्री जी से भेंट करनी है। वह मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। हमने इस बिल के विरुद्ध एक बहुत बड़ा आंदोलन करने का निश्चय किया है। आशा है कि आप भी हमारे इस आंदोलन में भरसक सहयोग देंगे। यदि आप सहयोग देंगे तो मैं बतलाए देता हूं कि व्यापारिक दृष्टि से भी आपको लाभ होगा और ख्याति भी प्राप्त होगी।" स्वामी जी ने कहा।

"परन्तु मेरे क्लाइंट सरोज का क्या बनेगा ? उसे मैं वचन दे चुका हूं। वह वचन किस प्रकार पालन होगा ?" सिर खुजलाकर चश्मे के ऊपर से झांकते हुए वकील साहब बोले।

"तो आपने उस नादान छोकरी को फुसलाकर मुझे ज़लील कराने का दृढ़ निश्चय कर लिया है, इसका स्पष्ट अर्थ मैं यही समझूं।" गंभीरतापूर्वक स्वामी जी जरा त्योरी चढ़ाकर बोले और उन्होंने चाहा कि वह वकील साहब को अपने प्रभाव में दबाकर ले जायें; परंतु वकील साहब भी पुराने खुर्राट थे। विवाह उन्होंने नया अवश्य किया था, परंतु उनका अपना व्यापार का तजुर्बा बहुत पुराना था।

"देखिये स्वामी जी ! इसमें क्रोध करने का तो मैं कोई कारण नहीं समझता। रही बात नादान छोकरी को फुसलाने की, सो यह बात भी गलत है। सरोज को नादान छोकरी समझना भूल ही नहीं भ्रम है, अहंकार है और यदि आप अपमान न समझें तो मैं मूर्खता भी इसे कह सकता हूं। न जाने कितने मेरे और आप जैसे नादान उसकी रंगशाला में नित्य जाते हैं और जीवन का रस प्राप्त करके चले आते हैं। मैं उस स्थान को मंदिर से भी पवित्र समझता हूं। क्योंकि वहां मानव-मानव में भेद-भाव नहीं बरता जाता। वहां समभाव के साथ सबका आदर होता है और किसी को भी प्रसाद से वंचित नहीं रखा

जाता। क्षमा कीजिए वहां वर्ण पूछकर चरण-रज देने का आदेश नहीं है।" मुस्कराकर वकील साहब बोले।

"हूं! अब समझा! तो आप लोग सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। कांग्रेस के इस शासन-काल ने तो अंग्रेजी और यवन काल की सुरक्षित धर्म-मर्यादा का भी सर्वनाश कर दिया। धार्मिक अनुशासन में जो सांस्कृतिक मर्यादा आज तक किसी प्रकार बलिदानों के बल पर सुरक्षित रखी गई थी उसका भी यह ह्रास-काल आ गया।" उसी प्रकार मस्तक पर सलवटें डाले हुए स्वामी जी क्रोध से व्याकुल होकर बोले। स्वामी जी का समस्त शरीर क्रोध से थर-थर कांप रहा था।

"परंतु मैं तो समझता हूं कि हमारी संस्कृति का यह नवीनतम संस्कार हो रहा है। समय और काल की आवश्यकताओं के अनुसार तो संस्कार आदि-काल से होता चला आया है। जब संस्कार किया जाता है तो काट-छांट करनी ही पड़ती है और वह कटु भी प्रतीत होती है। उससे कुछ व्यक्तियों के स्वार्थ को ठेस लगती है। प्राचीन रूढ़ियों के समर्थक उसका विरोध इसी लिए करते हैं क्योंकि उनके आनंद में खलल पड़ता है, उनके पाखंड के प्रसार में कमी आती है, और उनका जीवन एक क्रांति के उथल-पुथल वाले युग में से होकर गुजरता है। अंधी जनता का उनपर से विश्वास उठ जाता है और जनता में जागरूकता और नव-चेतना का संचार होता है।" वकील साहब बोले।

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि आप भी मुझे पाखंडी समझते हैं वकील साहब! और पाखंडी समझकर भी आप मेरा अतिथि-सत्कार करते हैं। यह कैसी विडंबना है?" स्वामी जी ने पूछा। "क्या मैं एक पाखंडी का सत्कार करने वाले व्यक्ति को अपने से बड़ा पाखंडी नहीं कह सकता?"

"जी नहीं! यह मानव का प्रगतिवादी दृष्टिकोण है स्वामी जी! आप मेरे पुराने मित्र हैं। कितने दिन का मेरा और आपका संपर्क है। मैं आपके व्यक्तित्व से प्रेम करता हूं, आपके सिद्धांतों से नहीं।" दृढ़तापूर्वक वकील साहब ने उत्तर दिया।

"परंतु अभी कुछ देर पूर्व जो आप आधी फीस पर न्यायालय में मेरा मत-समर्थन करने के लिए कह रहे थे, वह क्या बात थी? यदि आपका और मेरा सैद्धांतिक मतभेद है तो आप मेरे सिद्धांत का न्यायालय में किस प्रकार

प्रतिपादन करते ?" गंभीरतापूर्वक स्वामी जी ने पूछा।

"वह मेरा व्यापारिक दृष्टिकोण था स्वामी जी !" चश्मे के ऊपर से झांकते हुए वकील साहब बोले, और फिर अधिक स्पष्ट करने के लिए कहने लगे, "इस प्रकार मैंने आपको अपने जीनव के तीन पहलुओं का ज्ञान कराया। आपके सिद्धांतों से भिन्नता रखना मेरे जीवन का एक पहलू है, आपके व्यक्तित्व से प्रेम करना मेरे जीवन का दूसरा पहलू है, और व्यापारिक-दृष्टिकोण से न्याय के क्षेत्र में आपके सिद्धांतों का प्रतिपादन करना मेरे जीवन का तीसरा पहलू है। मैं तर्कशास्त्र का अद्वितीय विद्वान् हूं। सत्य को असत्य और असत्य को सत्य कर डालना मेरे लिए बाएं हाथ का खेल है। मैं जीवन के उन पहलुओं का इस प्रकार अपने तर्क द्वारा निर्माण करता हूं जो असफलता में सफलता और सफलता में असफलता का आभास कराते हैं।

मेरा जीवन बहुत सरल और स्वाभाविक है। मैं आदर्शवाद की निंदा भी नही करता और यथार्थवाद का पालन भी नही करता। अर्थात् जीवन के प्रत्येक पहलू का जीवन की समस्याओं के साथ सामंजस्य करता हुआ चलता हूं। व्यर्थ के आदर्शों पर मर मिटना मैं हिमाक़त के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझता।" दृढ़तापूर्वक वकील साहब ने कहा और फिर गर्व के साथ अपनी आंखों से चश्मा उतारकर मेज पर रख दिया। "ये आंखें व्यर्थ नहीं फुड़ाईं स्वामी जी ! आपने कभी आज तक मेरी अध्ययनशीलता और कर्मठता की प्रशंसा की ? आप ही विचारिए कि यदि मैं भी इस अध्ययन के चक्कर में न पड़ता तो क्या मेरा भी शरीर आप के जैसा ही हृष्ट-पुष्ट न होता ?"

स्वामी ज्ञानानंद जी एकटक वकील साहब का मुंह देखते ही रह गये और एक क्षण के लिए तो वह यह भी नहीं समझ पाये कि वकील साहब के यह सब कुछ कहने का वास्तव में क्या तात्पर्य है। यह व्यक्ति अपने आप को सीधा-सादा भी कहता है और जटिल भी यह कितना है ? जहां तक स्वार्थ का संबंध है यह जीवन के प्रत्येक पहलू पर सोलह आने सच्चा चलता है और साथ-साथ आदर्शवाद और यथार्थवाद का भी पल्ला नहीं छोड़ना चाहता। साधु-संतों का सत्कार भी करता है, उन्हें भोजन इत्यादि भी खिलाता है और उनका अपमान करने से भी नहीं चूकता। कितना विचित्र व्यक्ति है कि संबंध-विच्छेद भी नहीं करना चाहता और संबंध की निरर्थकता भी इसने सिद्ध कर

दी। ये इस प्रकार के व्यक्ति बेपेंदी के लोटे हैं जो संसार को व्यर्थ के भ्रम में फंसाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हुए अपना उल्लू सीधा करके जीवन का आनंद लूट रहे हैं। इनके बिना क्या संसार की गति नहीं ?

वकील साहब के विषय में सब कुछ जान-बूझ कर भी स्वामी जी अंत में अपने मस्तक की सलवटों को खोल कर मुस्करा दिये और चलते समय वकील साहब से बोले, "अच्छा वकील साहब ! अब चले। देखिये यदि कल बनारस न गये तो संभवतः भेंट हो सके, परन्तु निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।"

इतना कहकर स्वामी जी वकील साहब की कोठी से बाहर चल दिये। वकील साहब कोठी के द्वार से काफी दूर तक उन्हें छोड़ने गये। जब विदा होने लगे तो वकील साहब पूछे बिना न रह सके, "तो फिर स्वामी जी ! आपने केस के विषय में क्या विचार किया ? बात वास्तव में यह है कि एक बार एक तरफ से फीस का रुपया हाथ में ले लेने पर फिर व्यक्ति धर्म-संकट में फंस जाता है और हमारा तो पेशा ही ऐसा है कि एक बार किसी को आश्वासन देने के पश्चात् फिर ····· विश्वासघात मैं कर नहीं सकता। मेरा दृढ़ विश्वास है कि प्रातःकाल दिन निकलने से पूर्व ही सरोज फ़ीस का रुपया हाथ में लिये पोर्टिको में खड़ी दिखाई देगी।"

यह बात वकील साहब ने बहुत गंभीरतापूर्वक कही। यह उनके कनवैंसिंग का अंतिम बाण था जिसका उन्होंने स्वामी जी पर चलते समय साधकर प्रयोग किया।

"तो आप सरोज से रुपया ले लें। मुझसे आपको फ़ीस का कभी एक पैसा भी प्राप्त न हो सकेगा इस बात को आप कभी न भूलें।" उतनी ही गंभीरता के साथ स्वामी जी ने उत्तर दिया और इतना कहकर स्वामी जी ने विदा ली। एक बार चल देने के पश्चात् फिर उन्होंने घूमकर वकील साहब की ओर नहीं देखा।

: ३ :

वकील साहब स्वामी जी के अंतिम शब्दों पर कुछ न बोले। केवल मन ही मन कुढ़ कर रह गये।

उन्हें स्वामी जी की स्वार्थप्रियता पर रह-रह कर क्रोध आ रहा था। वह अपने मन से बोले कि यह व्यक्ति अपने को स्वामी, ब्रह्मचारी, त्यागी और न जाने क्या-क्या कहता है और लाखों रुपया समाज से दान-दक्षिणा स्वरूप भी पाता है, परंतु जब समय आया तो इसने ऐसा खरा उत्तर दिया कि जैसे कोई बिल्कुल अपरिचित व्यक्ति भी नहीं दे सकता।

उन्हें फिर ध्यान आया उनके व्यवहार का। उनकी धर्मपत्नी ने कितने भक्ति भाव से इस धूर्त्त को भोजन कराया परंतु कृतज्ञता का एक शब्द भी उस बेचारी के सम्मुख फूटे मुंह से इसने नहीं कहा। ऐसे पाखंडी की अक्ल ठीक करने के लिए तो सचमुच सरोज जैसी प्रगतिशील स्त्री चाहिए, जो जीवन के हर पहलू पर इन्हें चित्त लाये। सरोज के एक-एक शब्द ने आज इन महाशय का दिमाग ठीक बना दिया होगा और फिर ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को तो वह उड़ा कर ही ले गई।

सरोज का वार भी खाली जाना असंभव है। जिस पर उसने दृष्टि डाल दी वह उसका हो गया, और जिन आंखों के सम्मुख वह मन-मोहिनी मूर्ति आ गई उसके नयनों की राह से सीधी घुसती हुई हृदय के अंतिम कोने तक उतर गई।

इसी प्रकार के विचारों में निमग्न वकील साहब जब वापस घर पहुंचे तो उनकी गृहिणी द्वार पर खड़ी उनकी राह देख रही थी। वकील साहब को देखकर वह बोल उठी—"मैं तो समझी थी कि तुम भी स्वामी जी के साथ ही कहीं चले गये। मेरे विचार से तो यदि आप संन्यासी बनकर ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश का स्थान ग्रहण कर लें तो अच्छा रहे।" और इतना कहकर वह झूठी हंसी हंस दी।

"जाना कहां था स्वामी जी के साथ! बाहर तक छोड़ कर आ रहा हूं।"

मुंह बना कर वकील साहब ने उत्तर दिया और फिर पत्नी के साथ घर में चले गये। मन की उद्विग्नता में उन्होंने सुना ही नहीं कि पत्नी ने व्यंग्य-पूर्ण भाषा में किस मधुर उपहास की रेखा खींच दी।

वकील साहब और उनकी पत्नी, इस घर में केवल दो ही प्राणी थे। बाल-बच्चों के लिए अनेकों साधू जिमाए, अनेकों मठों पर सिर पटका, अनेकों टोने किये, मंदिर-मस्जिद की खाक छानी, देवी-देवताओं की साध पूरी की, व्रत-पूजा, वैद्य और हकीमों के सामने दुखड़ा रोया, परन्तु सन्तान की प्राप्ति न कर सके। वकील साहब अव्वल दर्जे के कंजूस थे परन्तु संतानोत्पत्ति का प्रश्न सामने आने पर धन पानी की तरह बहाना भी वह जानते थे।

सब दिशाओं से जकड़ी हुई वकील साहब की धन-राशि को मुक्त होने का केवल यही मार्ग था। स्वामी जी की भी इतनी सेवा इस गृहस्थी में केवल इसी आशा पर की जाती थी। वकील साहब पुराने विचारों के भी थे और नये विचारों के भी। विचारों को तोलने का माप-दंड उनके पास अपना पृथक ही था। उनके धर्म-शास्त्र में संसार को स्वार्थ का केंद्र माना गया है और स्वार्थ के केन्द्र में निस्वार्थ भाव कार्य करना वह अपनी मूर्खता समझते थे।

परन्तु खर्च भी वह खूब करते थे। उनकी स्त्री के पास १३५ साड़ियां थीं, एक से एक सुन्दर। दिन में दस साड़ियां बदले बिना उसे चैन नहीं आती थी।

"आप आज खोए-खोए से क्यों दिखाई पड़ रहे हैं?" पत्नी ने वकील साहब से अंदर बैठक में बैठते हुए प्रश्न किया और फिर चंद्र-मुख को अपनी हथेलियों पर संभाल कर मुस्कराते हुए बोली, "शायद स्वामी जी से कुछ तनातनी की बातें हो गई। आप धर्मात्मा लोगों से भी रुपया ऐंठने की चिंता में रहते हैं। पता नहीं आपको क्या हो गया है? इतने रुपये का क्या बनेगा? अपना तो कोई बाल-बच्चा भी नहीं बरतने को।" और इतना कह कर वह मुस्कराती हुई इठलाकर सोफ़े से कमर लगा कर बैठ गई।

"यह ठीक है देवी जी! परंतु अपनों से तो लाभ की आशा की ही जाती है। मैं जानता हूं कि इन पर जब अभियोग चलाया जायगा तो 'हिंदू कोड बिल विरोधक मण्डल' उसका डिफेंस (बचाव) करेगा। मंडल वालों के पास मुफ्त चन्दे का रुपया आता है। वह रुपया ये लोग मुझे नहीं देंगे तो स्वयं खा

जायेगे या किसी अन्य को देंगे। प्रत्येक दशा में वह चंदे का रुपया अवश्य हज्म हो जायगा। फिर यदि स्वामी जी मेरा ही कुछ लाभ करा देते तो इसमें इनकी जेब से क्या जाता था ? ये लोग कितने त्यागी हैं, मैं सब जानता हूं। यदि एक-एक की पोल खोलने बैठूं तो सवेरा कर दूं। चले है बड़े धर्म के ठेकेदार बन कर।" वकील साहब क्रोध में बड़बड़ा कर बोले। उन्हें रह रह कर स्वामी जी पर क्रोध आ रहा था।

"सवेरा न कीजिए इन व्यर्थ की बातों में। अब खाना खाइये। काफ़ी देर हो गई।" और फिर इसके पश्चात् दोनों ने खाना खाया; परंतु वकील साहब का स्वामी जी के प्रति क्रोध ठंडा न हुआ।

"ये लोग केवल लेना ही जानते हैं, देना नहीं। प्रथम श्रेणी के स्वार्थी हैं, प्रथम श्रेणी के। इनके जीवन में स्वार्थपरता कूट-कूट कर भरी है। यह लोग संसार को अपने में देखते है; यहां तक कि केवल अपने को ही संसार समझते हैं। इनका मस्तिष्क मस्तिष्क है और और सब लोग मस्तिष्क के स्थान पर मिट्टी का ढेला रखे बैठे है। इनके विचार विचार है और और सब को भगवान ने इनके विचारों का आंख मींचकर अनुकरण करने के लिए काठ की कठपुतलियां मात्र घड़कर भेज दिया है, इनके सिद्धांत सिद्धांत हैं और और सब के सिद्धांत ग़लत है, भ्रम हैं, धोखा है। समय बतलायेगा कि कौन क्या है ?" कहते-कहते वकील साहब शांत हो गये।

वकील साहब की धर्मपत्नी इन सब बातों को व्यर्थ की बकवास समझ रही थी। वह इस प्रकार के झमेलों में समय नष्ट नहीं करना चाहती थी। उसका जीवन असाधारण आनंद, उमंग और अठखेलियों का समन्वय था जिसमें व्यर्थ की चिंता, विचार, सिद्धांतवाद इत्यादि के लिए कोई स्थान नहीं था। वह जीवन को आनंद और अठखेलियों का क्रीड़ा-स्थल समझती थी और उसके लिए उसके पास सभी प्रकार के साधन उपलब्ध थे।

जब वह देखती थी कि वकील साहब किसी गंभीर चिंता में निमग्न हैं तो वह घर के अंदर चली जाती थी और अपने प्राइवेट कमरे में जाकर रेडियो का बटन दबा देती थी। अपने जीवन के सरल प्रवाह में वह गांभीर्य को स्थान देना पसंद नहीं करती थी।

आज भी उसने यही किया और वकील साहब को उसी प्रकार बड़बड़ाता

हुआ छोड़कर अपने शयनागार में चली गई। रेडियो खोला तो उस पर सरोज का एक रिकार्ड चढ़ा हुआ था। संगीत क्या था, उसमें जीवन की मादकता गानेवाली ने उंडेल दी थी। प्रत्येक स्वर-लहरी में जीवन की मादकता खेल रही थी और वाद्यों की झंकार में उन्मत्त यौवन की मधुर पुकार थी। संगीत की स्वर-लहरी पर वकील साहब की पत्नी बेला झूम उठी और उसकी हृदय-तंत्री पर संगीत का साम्राज्य छा गया। संगीत में एक मस्ती थी, जोवन था और कभी न बुझने वाली अमर प्यास थी। बेला ने संगीत के संसार में प्रवेश करके अपने जीवन के उन क्षणों को स्वर्ग के क्षण बना लिया। उसके लिये पृथ्वी पर स्वर्ग उतर आया और वकील साहब अभी भी बैठक में बैठे उसी प्रकार बड़बड़ा रहे थे। साथ ही उन्होंने शायद सरोज के केस का रफ़ ड्राफ़्ट (कच्चा खाका) भी तय्यार कर लिया।

आज रात भर वह इसी उधेड़-बुन में लगे रहे और मन में यह दृढ़ संकल्प कर लिया कि यदि सरोज इस केस में रुपया देने के लिए भी तैयार नहीं होगी तो वह स्वयं इस केस को लड़ेंगे। आज रात को न जाने वह किस समय सोये।

प्रातःकाल पत्नी ने जब उठकर देखा तो वकील साहब की अल्मारियां पुस्तकों से खाली थीं और मेज पर उनका ढेर लगा हुआ था। साथ की मेज पर तीन फुलस्केप का लिखा हुआ सरोज का केस था। स्वामी जी के विपक्ष में वकील साहब ने तो पहले से ही उसकी बहस के प्वाइंट भी बिना गवाहों की पेशी के ही लिख कर तैयार कर लिये थे।

: ४ :

सरोज ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को साथ ले अपनी कोठी पर चली गई। सरोज को प्रत्येक सुन्दर वस्तु प्रिय लगती थी और यही कारण था कि उसकी कोठी पर ऐसे व्यक्तियों का जमाव रहता था। किसी भी सुन्दर वस्तु के प्रति आकर्षित हो जाना सरोज की स्वाभाविक कमजोरी थी। इसे गुण कहो तो कोई हानि नहीं, परंतु सरोज का आकर्षण स्त्री सौंदर्य की ओर न होकर पुरुष-सौंदर्य की ओर था और इसका प्रभाव यहां तक था कि वह अपने बंगले पर कुत्ता पालती थी कुतिया नहीं, अपनी फ़िटन के लिए उसके पास घोड़ा था घोड़ी नहीं। मोटरवार में स्त्री की ध्वनि आती थी इसीलिए सरोज उसे नापसंद करती थी। हवाई जहाज़ की यात्रा का उसे बड़ा शौक़ था। इसके अतिरिक्त यदि वह फल खरीदने जाती थी तो केला, आम, अंगूर, सेब, अनार उसे सब पसंद थे, परन्तु दूकानदार ने यदि यह कह दिया कि "मेम साहब ! चार-चार दाने मौसमी, नाख, लीची के भी डाल दूं तो सरोज को नाक सिकोड़कर कहना पड़ता था "लाला ! जो मैं कहती हूं सो डालो, व्यर्थ अपनी ओर से राय देने की कोशिश न करो" और इसी प्रकार जब वह चांदनी चौक में घंटे वाले की दूकान पर पहुंच जाती तो पेड़ा, हलवा-सोहन, मोहनभोग, मेसू, समोसा इत्यादि ही लेना पसंद करती, गुलाबजामुन, बर्फी, इमरती के नाम सुनकर सरोज के नथने सिकुड़ने लगते थे।

आज दिन भर की छांट में सरोज को ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश पसंद आया। बच्चा खिलौना पाकर जितना प्रसन्न हो स्वाभाविक मस्ती में झूम उठता है उससे कम मादकता इस समय सरोज की चाल में नहीं थी। सरोज का प्रत्येक पग सफलता और उमंग के समन्वय को लेकर आगे बढ़ रहा था। यह कोठी जिसमें सरोज रहती थी, उसने स्वयं अपनी आय से खरीदी थी। सरोज की आय साधारण आय नहीं थी। सरोज कला की देवी थी और सौंदर्य की प्रतिमा। उसके सौंदर्य के प्रकाश ने रङ्गशाला को दैदीप्यमान बना रखा था। सरोज की थिरकन पर, पगध्वनि पर, दर्शक और श्रोता ऐसा अनुभव करने

लगते थ कि मानो कोई कानों में मधुरतम रस का संचार कर रहा है।

कोठी में चार कमरे थे। बीच वाला कमरा सबसे बड़ा था और उसे सरोज ने विशेष कलापूर्ण ढंग से सजाया था। कमरे के बीचों-बीच एक छोटी सी संगमरमर की मेज पर गुलाब का पौधा संगे-मूसा के गमले में लगा हुआ था और इसपर खिल रहा था एक गुलाब का फूल जिसका यौवन विकासोन्मुख था, अभी अविकसित सा कुछ-कुछ। इसके चारों ओर तीन मखमली सुन्दर सोफे पड़े थे। कमरे के फर्श पर मिर्जापुरी कालीन बिछा था जिसे सरोज कहती है कि वह स्वयं मिर्जापुर से खरीद कर लाई थी। चित्र समस्त कमरे में एक भी नहीं था, केवल सामने कानस पर संगमरमर का तांडव नृत्य करता हुआ एक शिव का पुतला रखा था, प्रलयंकारी शिव का।

नृत्य की कल्पना भी सरोज पुरुष के रूप में ही कर सकती थी, नारी रूप में नहीं। कमरे के एक कोने में सितार रखा हुआ था और दूसरे में इकतारा।

एक बार उस्ताद ने वीणा पर सरोज के स्वर को साधने का प्रयत्न किया था, परंतु वह सरोज को रुचिकर नहीं हुआ; क्योंकि वीणा, सारंगी इत्यादि ये सब उसे पसंद नहीं थे। वह पसंद करती थी सितार और मृदंग को। कभी-कभी तो सरोज अपने जीवन में भी पुरुषपन की कल्पना करके बहुत प्रसन्न होती थी और जीवन के उन क्षणों को वह किसी के अभाव में स्वयं पूर्ति के नाम से पुकारती थी। उसके जीवन के वे क्षण पूर्ण थे और उनमें विकास तथा आनंद का पूर्ण समन्वय उसे दिखाई देता था।

सरोज आज कुछ थक गई थी।

ब्रह्मचारी ने सरोज के साथ ज्योंही उसकी बैठक में प्रवेश किया तो उसने वहां की प्रत्येक वस्तु को ध्यानपूर्वक देखा। कुछ वकील साहब के दिये गये परिचय और कुछ यहां के साजों को देखकर ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को यह समझने में देर न लगी कि सरोज कला-अभिनेत्री है परन्तु वह यह नहीं समझ पाया कि सरोज इतनी विशाल कोठी में अकेली इस प्रकार कैसे रहती है?

ब्रह्मचारी कुछ सकपका रहा था संकोचवश। सरोज ब्रह्मचारी की इस मुद्रा को देखकर तथा उसके भावों को पढ़कर मन-ही-मन मुस्करा उठी। सरोज के हृदय में एक प्रकार की गुदगुदी उठ रही थी और ब्रह्मचारी अपना

पथ भूला-सा कोठी की दीवारों को इस प्रकार देख रहा था मानो किसी घने वन में किसी मृगशावक का साथ मृगी से छूट गया हो।

"मुझे आपसे भय लग रहा है।" बहुत सरल स्वभाव से ब्रह्मचारी ने कहा।

ब्रह्मचारी का शरीर कांप रहा था और मस्तक पर स्वेद-बिंदु झलक आये थे।

ब्रह्मचारी ऐसी परिस्थिति में था मानो सरिता से निकालकर किसी ने मछली को सुन्दर उपवन में बने संगमरमर के तालाब में डाल दिया हो।

"मुझ से !" आश्चर्य प्रकट करते हुए सरोज ने कहा।

एक इठलन के साथ सरोज खड़ी होकर झूमती हुई उस गुलाब के फूल के पास पहुंच गई जो संगमरमर की मेज पर रखे गमले में खिल रहा था और ब्रह्मचारी के देखते-देखते सरोज ने उसे चूम लिया। फिर ब्रह्मचारी के पास आकर उसी सोफे पर जिसपर वह बैठा था दूसरी ओर अपने बदन को असावधानी से पसारकर बैठते हुए बोली, "ब्रह्मचारी ! मैंने अभी-अभी इस गुलाब के पुष्प का चुम्बन किया। क्या तुमने भी कभी जीवन में किसी पुष्प का इस प्रकार चुम्बन किया है ?"

ब्रह्मचारी अवाक् था। क्या उत्तर देता, कुछ समझ में न आया। ब्रह्मचारी के हृदय की गति बढ़ती जा रही थी और जीवन में एक नवीन ज्योति का संचार हो रहा था। सरोज के इस वाक्य ने ब्रह्मचारी के मन का भय कुछ कम करने की अपेक्षा और बढ़ा दिया। एक बार मन में आया कि वह किसी प्रकार अवसर पाकर यहां से भाग खड़ा हो और इतनी जोर से दौड़ लगाये कि सरोज उसे पकड़ न सके, परंतु साहस बिल्कुल समाप्त हो चुका था। वह वहां बैठा था पर कटे पक्षी की भांति, जो अब उड़ नहीं सकता था।

"तुम भयभीत हो रहे हो ब्रह्मचारी ! क्या तुम जानते हो इसका क्या कारण है ?" सरल भाव से मुस्कराते हुए सरोज ने ब्रह्मचारी के तनिक और निकट आते हुए कहा। "मैं देख रही हूं तुम्हारी जो दशा है और अनुभव कर रही हूं तुम्हारे धर्मसंकट को भी।"

ब्रह्मचारी ने नकारात्मक संकेत करके अपनी ग्रीवा को हिला दिया और प्रश्नवाचक दृष्टि से सरोज के मुख पर याचक बनकर एक अनजान बालक की भांति देखा।

"इसका कारण यही है ब्रह्मचारी ! कि तुम्हारा पालनपोषण एक जानवर द्वारा हुआ है। मानव द्वारा नहीं। तुम्हारे जीवन में मानव-तत्व वर्त्तमान है, यही देखकर मैं तुम्हारी ओर आकर्षित हुई थी। अब तुम्हें विचार करना है कि तुम अपना भविष्य मानव बनकर व्यतीत करना चाहते हो अथवा जानवर रहकर।" इतना कहकर सरोज ब्रह्मचारी से सटकर बैठ गई।

ब्रह्मचारी सोफे के एक किनारे से चिपका हुआ बैठा था। और अधिक खिसकने के लिए स्थान नहीं था। सरोज ने ब्रह्मचारी को पलायन की अंतिम सीढ़ी तक पहुंचा दिया था। वहां पहुंचकर लौटने के अतिरिक्त अब उसके पास और कोई चारा नहीं था।

ब्रह्मचारी कुछ देर चुप रहा परन्तु कुछ ही क्षण में कुछ विचार कर बोल उठा, "आपके प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व क्या मैं भी आपसे एक प्रश्न कर सकता हूं ?"

इस समय ब्रह्मचारी बहुत गंभीर था और उसी प्रकार अर्द्ध-मौन मुद्रा में ब्रह्मचारी ने ये शब्द कहकर सरोज के मदभरे नेत्रों पर अपनी दृष्टि डाली। मानो वह उसके नेत्रों में कुछ पढ़ने का प्रयत्न कर रहा हो।

ब्रह्मचारी की यह बात सुनकर सरोज को सतर्क होना पड़ा। वह मुस्कुराते हुए सरल भाव से बोली—"अवश्य, तुम जो भी प्रश्न करोगे तुम्हें उचित उत्तर मिलेगा ब्रह्मचारी ! उत्तर के पश्चात भी तुम्हें स्वतंत्रता होगी कि तुम उसे मानो अथवा न मानो। मेरी रंगशाला में मानव के विचार रूढ़िवादी सिद्धांतों के अन्तर्गत नहीं चलते। मैं स्वयं स्वतंत्र हूं, मुझ पर किसी का कोई प्रतिबंध नहीं, इसी प्रकार मेरे सिद्धांतों पर भी किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं।"

"मानव या जानवर मैं कुछ नहीं जानता।" ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश ने गंभीरतापूर्वक कहना प्रारम्भ किया। ब्रह्मचारी के मुख पर इस समय एक अलौकिक कांति विराजमान थी, और वह बहुत भोले स्वर में बोला—"जब मैंने स्वामी ज्ञानानंद जी से दीक्षा ली थी तो उन्होंने मुझे देवता बनाने का वचन दिया था। मैंने अपने जीवन का अमूल्य समय वहां व्यतीत किया कुछ पाया भी है परन्तु आज जरा से अपराध पर उन्होंने मेरे सब अधिकार लौटा लिए। मेरी इतनी दिन की पूजा, इतने दिन की आराधना, इतने दिन की

तपस्या, इतने दिन के व्रत सब एक क्षण में स्वप्न-तुल्य हो गए । आपके मानवीय अधिकार तो उसी प्रकार के नहीं हैं ?"

ब्रह्मचारी की सरल प्रकृति का हृदय में अनुभव करके सरोज आनंद-विभोर होकर झूम उठी । एक क्षण के लिए उसके नेत्र बंद हो गये और ब्रह्मचारी की मधुर मूर्ति उसके नयनों में प्रतिमा बनकर साकार हो उठी । फिर बहुत ही मधुर स्वर में सरोज ने कहा—"ब्रह्मचारी ! यहां देने और छीनने का प्रश्न नहीं है, यहां तो करने और पाने का प्रश्न है । मैं सिद्धांतों को वहीं तक मानती हूं जहां तक वे कर्त्तव्य के पथ में रुकावट बनकर नहीं आते । तुमने देवता बनने का स्वप्न देखा, वह स्वप्न टूट गया । जिस व्यक्ति ने तुम्हें देवता बनाने के भ्रम में फंसाया वह स्वयं देवता तो क्या मानव भी नहीं है । जो व्यक्ति मानव को भेद भाव का पाठ पढ़ाता है उसे मैं जानवर ही नहीं जानवर से भी गिरा हुआ मानती हूं । स्वामी जी के पास तुम गये थे दीक्षा लेने परन्तु मेरे यहां कोई किसी से दीक्षा नहीं लेता और न ही कोई किसी को दीक्षा देता है । यहां गुरु और चेले की भावना नही है और न ही बड़े और छोटे की है । सभी एक समान हैं और साथी बनकर संसार का उपभोग कर रहे हैं । जीवन भर शरीर में राख मलकर अपने आपको और संसार को धोखा देते रहने का रहस्य मैं आज तक नहीं समझ सकी । ब्रह्मचारी ! मैं इसे पाखंड समझती हूं ।"

ब्रह्मचारी ने फिर और कोई प्रश्न नहीं किया । वह मौन-मुद्रा में न जाने क्या सोचने लगा ? सरोज ब्रह्मचारी से सटी हुई बैठी थी, परन्तु ब्रह्मचारी पर उसका कोई प्रभाव नहीं था । वह शांत भाव से बैठा था अपने जीवन की गुत्थी सुलझा रहा था । जीवन में जो भूल वह एक बार कर चुका था, उसे दुहराना नहीं चाहता था । सरोज के सिद्धांत क्या है, उन्हें समझने का प्रयत्न वह नहीं कर रहा था । वह केवल यह भर निश्चय कर लेना चाहता था कि क्या उसके सिद्धांतों में त्रुटियों के लिए भी कोई स्थान है ?

'चरण-रज' बांटने का अधिकार छिन जाने का कष्ट ब्रह्मचारी के हृदय में कम नहीं था, क्योंकि यह अधिकार उसने दस वर्ष की कठिन तपस्या के पश्चात् प्राप्त किया था । इस दस वर्ष की लंबी अवधि में उसने स्वामी ज्ञानानन्द जी की कितनी सेवा की थी, कितना कष्ट सहन किया था, कितनी जीवन की प्रबल-

तम इच्छाओं का दमन किया था, कितनी महत्वाकांक्षाओं पर तुषारापात किया था, कितनी सहन-शीलता से काम लिया था—— वे सब साधनायें और तपस्याये इस समय ब्रह्मचारी के नेत्रों में उतर आई और ब्रह्मचारी का मन उन्हीं के हिंडोले पर झूल रहा था।

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश भूत और वर्तमान की स्मृति और सत्य के बीच निर्णय के असमजस में फंसा था। मस्तिष्क में संघर्ष चल रहा था। एक ऐसी उथल-पुथल का साम्राज्य छाया था कि कुछ निर्णय करना उसके लिए कठिन हो गया।

सरोज खड़ी होकर इठलाती हुई बोली——"जिस संशय में तुमा इस समय उलझे हुए हो उसका संबंध तुम्हारे गत जीवन और भविष्य की कल्पनाओं तथा वर्तमान के सत्य से है। समस्या जटिल है। आज तुम्हारा मस्तिष्क भी थका है। इसे कल के लिये छोड़ दो। ये समस्याएं तो मानव जीवन भर सुलझाता ही रहता है। और मैं तो इसमें दिमाग खराब करना मूर्खता समझती हूं।"

"मूर्खता ?" आश्चर्य-चकित होकर ब्रह्मचारी ने पूछा।

"और नहीं तो क्या ? विचारने से क्या बनता है ? मैं पूछती हूं कि क्या तुमने कभी स्वप्न में भी यह विचार किया था कि तुमसे एक दिन इस प्रकार 'चरण-रज' बांटने का अधिकार छीन लिया जायेगा ?" मुस्कुराकर सरोज ने कहा।

सरोज वास्तव में इस प्रसंग को समाप्त करके कोई आनंद-प्रमोद का प्रसंग छेड़ना चाहती थी जिससे वह ब्रह्मचारी का ध्यान किसी अन्य ओर आकर्षित करके उसके मस्तिष्क के भार को हल्का करने में सफल हो।

"परन्तु इसका अर्थ तो यह नहीं हुआ कि आज जब यह समस्या मेरे सम्मुख आ ही चुकी है तो मैं बिना विचार किये ही दूसरी समस्या को जीवन में स्थान दे डालूं और भविष्य में दस वर्ष पश्चात् फिर एक दिन आज की तरह सोचने के लिए बैठूं कि मैंने दस वर्ष पूर्व एक भूल की थी।" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

वह प्रश्न भरी दृष्टि से सरोज के मुख पर देख रहा था।

"अब दस वर्ष पश्चात् तुम्हें पछताना नहीं होगा ब्रह्मचारी !" मुस्कुराते हुए सरोज ने कहा और वह खड़ी होकर एक ताल के साथ पैरों को फर्श पर रखती

हुई इधर-उधर घूमने लगी।

"क्या केवल विश्वास का आश्रय लेकर आज आपकी बात को मान लेन, मेरा अंधविश्वास नहीं होगा आपकी दृष्टि में ? मेरे हृदयवाद को एक गहरी ठेस लग चुकी है। इसलिए विश्वास करना कठिन हो रहा है ! आप क्षमा करें मैं इतने स्पष्ट शब्दों में आपसे यह सब कुछ कह रहा हूं क्योंकि मैं जीवन भर किसी को भ्रम में नहीं रख सकूंगा। मैं जैसा भी विचार करता हूं उसे स्पष्ट शब्दों में कह देना अपना कर्त्तव्य समझता हूं।" ब्रह्मचारी ने सरल स्वभाव से कहा और सरोज से आशा की कि वह उसके विचारों के मुक्त प्रवाह में कोई बाधा उपस्थित न करे।

"मुझे तुम्हारे इस विचार से कोई ठेस नहीं लगी। मेरे विचार से यह प्रश्न बहुत गंभीर है और इतने गंभीर प्रश्न का उत्तर केवल एक क्षण में मस्तिष्क से विचार कर नहीं दिया जा सकता। इसका संबंध जीवन की क्षण-प्रतिक्षण की घटनेवाली घटनाओं से है, जीवन की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं से है, जीवन के घातों और प्रतिघातों से है, जीवन में आने वाले व्यक्तियों, उनके स्वभावों और व्यवहारों से है और अन्त में मैं यही कहूंगी कि अपने जीवन के पनपने, बिगड़ने और फिर बनने वाले इतिहास की लंबी-चौड़ी कहानी से है। मानव स्वयं ही अपने जीवन का निर्माता नहीं होता, बल्कि जितने भी तत्त्वों और जितनी भी घटनाओं का संबंध उसके जीवन से होता है, वे सभी उसके जीवन के निर्माण में सहयोग देते हैं।" कहकर सरोज मुस्कुरा रही थी परन्तु अभी तक ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश के मुख पर गांभीर्य था।

"यह बात मैं आपकी मानता हूं। आपके कहने का तात्पर्य संभवतः यह है कि मैं जीवन को जीवन के आश्रय पर छोड़दूं, विचार के आश्रय पर उसे आधारित न करूं। आप यही कहना चाहती हैं न !" ब्रह्मचारी ने सरलता पूर्वक पूछा।

"बिलकुल यही ! मैं बुद्धिवाद के विरुद्ध विचार नहीं रखती परंतु कोरा बुद्धिवाद हृदयवाद से पृथक् होकर जीवन-नौका नही खे सकेगा। वह जीवन तो नीरस हो जायगा ब्रह्मचारी ! तुम्हारा रूढ़िवादी विचार हृदयवादी नहीं था। वह कठोर अनुशासन था, जिसकी कर्कशता ने हृदय को कुंठित करके उसमें से मानवता को नष्ट कर दिया था।

तुमने अपना हाथ मेरी ओर 'चरणरज' देने के लिए हृदय से प्रेरित होकर बढ़ाया था। और अनुशासन तथा पाखंड ने बीच में आकर तुम्हारे हृदय को ठेस पहुंचाई। खैर ! आज हम इस विषय को यहीं समाप्त करते हैं। यदि इस प्रश्न का हल हमारे जीवन की घटनाओं ने स्वयं जीवन में कभी उपस्थित न किया तो कभी फिर विचार करके देख लेंगे। परन्तु मेरा विश्वास है कि हमारे जीवन का मुक्त प्रवाह इस समस्या की सुन्दरतम सुझाव स्वयं उपस्थित कर देगा।" इतना कहकर सरोज ने ब्रह्मचारी का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा "चलो मैं तुम्हें अब अपनी कोठी की सैर कराती हूं।" और दोनों खड़े हो गये।

: ५ :

सरोज ने कोठी के सब भागों को ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को दिखाया। एक एक से सुन्दर दृश्य इस कोठी में सरोज ने जुटाये हुए थे। यह कोठी' रंगशाला' नाम से दिल्ली में प्रसिद्ध थी और इस में हर प्रकार की कला का सामंजस्य था। संगीत और नृत्य की तो सरोज स्व यंदेवी थी। कोठी की दीवारों पर चित्रकला के सुन्दरतम नमूने उपस्थित किये गये थे और बाहर छोटी-सी वाटिका में ऐसे सुन्दर बनावटी फूलों का जमाव एकत्रित था कि बस देखते ही बनाता था। छोटे-छोटे झरने और तालाब बनाये थे जिनमे भांति-भांति के शीशे और पत्थर लगे थे।

इस सौंदर्य को देखकर दर्शक चकित रह जाते थे। दिल्ली भर में इसके सौंदर्य की चर्चा थी। यह दिखाकर जब ब्रह्मचारी के साथ सरोज लौटी तो उसने उत्सुकता पूर्वक पूछा "कहो ब्रह्मचारी ! क्या विचार है मेरी 'रंगशाला' के विषय में ?" और ब्रह्मचारी के मुख से उसकी प्रशंसा सुनने के लिए सरोज के कान उतावले हो उठे।

"आपकी 'रंगशाला' निर्जीव है। इसमें आत्मा का अभाव है।" ब्रह्मचारी ने सरलता पूर्वक कहा और सरोज के उतरे हुए मुखमण्डल को देखा।

"स्थायी सौंदर्य तो है इसमें, और सौन्दर्य निर्जीव नहीं हो सकता।" गंभीरता पूर्वक सरोज ने कहा।

सरोज के मुख पर स्वाभाविक रूप से खेलने वाली मुस्कुराहट इस समय लुप्त हो चुकी थी और मस्तक पर स्वेद विंदु चमक आये थे। वह कुछ अभिलाषा भरी दृष्टि से ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश की आंखों में आंखें डालकर मानो यह कह रही थी—"तुम पहले व्यक्ति हो ब्रह्मचारी जो 'रंगशाला' की इस प्रकार अवहेलना कर रहे हो। क्या तुम्हें वास्तव में यह सब निर्जीव लगा ? इस सौंदर्य के जमाव में तुम्हें कहीं भी आत्मा के दर्शन न हो सके ? तुम्हारे हृदय को किसी भी वस्तु ने आकर्षित नहीं किया।'

"आत्मा से विहीन सौंदर्य भ्रम है, छल है, धोखा है। इस 'रंगशाला' का निर्माण करके आपने न केवल औरों को धोखा देने का प्रयत्न किया है

बल्कि अपनी आत्मा को भी धोखा दिया है" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा। ब्रह्मचारी अपने विचारों पर दृढ़ था और वह उनमें कोई परिवर्तन करने को उद्यत नहीं था।

"परंतु धोखा मैंने आज तक जीवन में किसी को नहीं दिया, हां खाया अवश्य है। और समझ नहीं रही कि क्या आज भी धोखा खा रही हूं।" स्थिर भावना के साथ सरलता पूर्वक सरोज बोली।

सरोज की सौंदर्य-कल्पना को आज जीवन में प्रथम बार गहरी ठेस लगी और उसके विचारों में आज न जाने कैसी खलबली सी होती हुई उसे प्रतीत हुई। सरोज का मन कुछ उद्‌भ्रांत सा हो उठा।

"यदि धोखा देने का प्रयत्न नहीं है तब मैं नादानी कहूंगा।" उसी गंभीरता के साथ ब्रह्मचारी कहता गया। "बनावट पाप है और स्वभाविकता पुण्य, बस आज तक मैं अपनी कठोरतम तपस्या और अध्ययन तथा विचार के पश्चात् यही समझ पाया हूं। मेरा जीवन इसी कठोर सत्य पर आधारित है और इसी सत्य का प्रतिपादन मैं अपने जीवन का लक्ष्य समझता हूं। संसार में जितने भी दुःख और कष्टों का जन्म हुआ है वह इसी सत्य से पृथक होने का फल है। संसार में जितना भी सुख और आनंद है वह सब इसी सत्य का प्रतिपादन है और जितनी भी कष्ट और यातनायें हैं वे सब इसी सत्य से विमुखता के परिणाम है।"

सरोज की आत्मा में मानो आज एक नवीन प्रकाश-किरण ने अपनी ज्योति जगा दी। उसका हृदय गद्‌गद् हो उठा। सरोज ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश के सम्मुख गई और उसकी चरणरज लेकर अपने मस्तक पर लगा ली। ब्रह्मचारी ने सरोज को तुरन्त उठा कर अपने पास बिठाते हुए मधुर-स्वर में कहा "यह आपने अच्छा नहीं किया।" ब्रह्मचारी के व्यवहार में इस समय भी वही सरल गांभीर्य था।

"क्यों ?" ब्रह्मचारी के मुख पर सरल दृष्टि डाल कर सरोज ने पूछा, "क्या कुछ भूल हो गई मुझसे ?"

"इसलिए कि चरण-रज देना और लगाना आपने ही तो कहा था कि पाखंड है, ढोंग है। मुझे आपकी वह बात बहुत प्रिय लगी थी। पहले भी कई बार मेरे मन ने उसके प्रति विद्रोह किया था परन्तु आज आपकी शक्ति पाकर मैं उस विद्रोह में सफल हो सका। घड़ा भर चुका था, केवल फूटना भर बाकी

था। आपने उचित समय पर पहुंच कर उस पाखंड के घड़े में अन्तिम ठेस लगा दी।" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"परन्तु वह चरण-रज बांटना और लेना इस चरण-रज लेने की क्रिया से सर्वथा भिन्न है ब्रह्मचारी ! इसमें पाखंड नही है, रूढ़ि नहीं है, हृदय का मुक्त प्रवाह है।" सरलता पूर्वक सरोज ने कहा।

इतना कह कर उसने एक क्षण के लिए अपने नेत्र बन्द कर लिये। सरोज आनन्द-विभोर हो उठी और उसने अपने जीवन में नव-आलोक-किरण के दर्शन किये।

इसी समय बाहर से चपरासी ने आकर एक कार्ड दिया जिस पर दो व्यक्तियों के नाम लिखे थे। कोई नये व्यक्ति थे। सरोज ने दोनों को सम्मान-पूर्वक अन्दर बुला लाने के लिए कहा और दूसरे ही क्षण एक युवक तथा एक युवती मुस्कराते से अन्दर आ गये। सरोज ने उन्हें सामने वाली कुर्सियों पर बैठने का संकेत किया और स्वयं उसी प्रकार ब्रह्मचारी से सटी बैठी रही। ब्रह्मचारी ने उनपर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।

"मैं भारतीय नाट्य समिति का मंत्री हूं।" अपना परिचय स्वयं देते हुए उन दो आने वाले व्यक्तियों में से युवक ने कहा, "और आप समिति की प्रधान हैं।" अपने साथ वाली युवती की ओर संकेत करते हुए वह युवक बोला।

"आपसे मिलकर बहुत प्रसन्नता हुई।" सरोज ने मुस्कुराते हुए कहा "कहिए किस लिए कष्ट किया ?"

"हम लोग बिहार के अकाल-पीड़ितों की सहायतार्थ एक नाटक खेलने का आयोजन कर रहे हैं। आप से अनुरोध है कि आप हमारे इस शुभ कार्य में सहयोग दें।" युवती ने बहुत संकोच के साथ सरोज के सम्मुख अपना प्रस्ताव उपस्थित किया।

"प्रयास आपका सराहनीय है और मैं जो कुछ भी आप लोगों की सहायता कर सकती हूं अवश्य करूंगी।" उसी प्रकार सरल भाव से मुस्कुराते हुए सरोज ने उत्तर दिया।

सरोज से इस प्रकार आश्वासन पाकर 'भारतीय नाट्य समिति' के प्रधान और मंत्री ने अपने प्रयास को सफल समझ कर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की।

उन दोनों के जाने के पश्चात ब्रह्मचारी ने पूछा, "ये लोग किसी नाटक

में आपके कला-प्रदर्शन का सहयोग लेने आये थे सम्भवतः ?"

"हां" मुस्कुराकर सरोज ने कहा, "परन्तु यह प्रदर्शन आय की भावना से प्रेरित होकर मैंने स्वीकार नहीं किया ।" इसी समय सरोज का रसोइया अवसर देखकर अन्दर आया और बोला "खाना तैयार है ।" और इतना कह कर वह मौन हो हाथ बांधे सामने खड़ा हो गया ।

"तुम चलो पण्डित ! हम लोग अभी आते हैं ।" सरोज ने कहा और ब्रह्मचारी की तरफ देखा ।

"चलिए न, मैं तैयार हूं ।" ब्रह्मचारी ने कहा ।

"परन्तु मुझे अभी दस मिनट लगेंगे ।" सरोज मुस्कुराकर बोली । इतना कहकर सरोज अपने शयनागार में चली गई और ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश शांतिपूर्वक वहीं घूमते हुए सामने वाली कानस के पास जाकर शिव-मूर्त्ति के नृत्यमग्न रूप को देखने लगे ।

: ६ :

स्वामी ज्ञानानन्द वकील साहब से बिदा लेकर यमुना किनारे अपनी कुटिया में आये जहां पहले से ही 'हिन्दू कोड बिल विरोधक मंडल' के मंत्री संकटानंद जी आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे। और भी कई व्यक्ति स्वामी जी के दर्शनों के लिए वहां एकत्रित थे और वे सब स्वामी जी को आते देख कर खड़े हो गये। सबके हाथों में पुष्प-मालायें थीं जो स्वामी जी के गले में आते ही डाल दी गई और भक्ति-भाव से सबने स्वामी जी को प्रणाम किया। स्वामी जी ने भी अपना कमंडल उलटे हाथ में लेते हुए सीधा हाथ आर्शीवाद के लिए ऊपर उठा दिया, परन्तु मुख से एक शब्द भी न बोले।

स्वामी जी का मस्तिष्क आज स्वस्थ नहीं था। उन्होंने मंत्री संकटानन्द को हर प्रकार के परामर्श के लिए प्रातःकाल आने का आदेश दिया। अन्य भक्त-जन दर्शन-लाभ करके पहले ही प्रस्थान कर चुके थे।

सबके चले जाने पर भी सेठ गूदड़चंद कुटिया के सम्मुख ही डटे रहे। सेठ जी स्वामी जी से एकांत में मिलना चाहते थे और सब के चले जाने पर वह स्वामी जी के पास आये। उन्होंने स्वामी जी के चरणों में ५०००) की एक थैली चढ़ाई और 'चरण-रज' मस्तक पर लगाते हुए बोले, "स्वामी जी, हम आपके दास हैं। हमारे धर्म की, हमारी सभ्यता की, हमारी संस्कृति की लाज बस आपके हाथ है। हमारी सरकार ने तो शूद्रों को भी सिर पर चढ़ा लिया है। रुपये से हम आपको पूरा-पूरा सहयोग देंगे। ऐसा आंदोलन चलाओ कि सरकार के दांत खट्टे हो जायं।" इतना कहकर सेठ जी ने स्वामी जी के चरण पकड़ लिए।

५०००) की भेंट पाकर स्वामी जी की दिन भर की थकान दूर हो गई। ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश को खो देने का खेद उनके हृदय में अवश्य था परंतु अब वह जा रहे थे भारत सरकार के विरुद्ध एक आन्दोलन खड़ा करने। आन्दोलन में न जाने कितने ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश आकर स्वामी जी की सेवा में जुट जायेंगे।

५०००) की प्राप्ति करके स्वामी जी को रात्रि में खर्राटे की नींद आई और उन्होंने वकील साहब तथा सरोज से घटने वाली घटना को गौण समझ कर भुला दिया। वह यहां आये हैं भारत सरकार से टक्कर लेने के लिए। उन्हें वकील साहब और सरोज के पचड़े में पड़ना उचित नहीं। ये सब छोटे व्यक्ति हैं, स्वार्थ-लिप्त, दया और क्षमा के पात्र। अन्त में सोते समय स्वामी जी अपने उदार और विशाल हृदय में यही भाव लेकर सो गये।

सागर की भांति गहन-गम्भीर स्वामी जी को सेठ गूदड़मल के ५०००) नें और भी उदार बना दिया! स्वामी के सम्मुख अनेकों सेठ लोग आकर अपनी-अपनी आकांक्षाओं को प्रकट करते हुए मस्तक झुकाते थे। इस कारण धन उनके लिए विशेष महत्वपूर्ण वस्तु नहीं थो। जितना अधिक धन उन्हें मिलता था उतना ही उदारता उनमें आती थी। वकील साहब को स्वामी जी जानते थे कि उनके पास धन की कमी नहीं और फिर उनका इस प्रकार कंजूसी दिखाना स्वामी जी के लिए असहनीय हो उठता था। वह नोटों की गड्डियों को अंगीठी में जला कर तापना पसन्द कर सकते थे परंतु किसी कंजूस की तिजोरी में और अधिक बढ़ाकर उन पर ताला लगवाना उन्हें कभी रुचि-कर नहीं था।

इस प्रकार स्वामी जी कम्युनिस्ट विचारधारा के प्रतिपादक थे और वह सेठों का शोषण कर्त्ता कभी-कभी अपने को कहकर गर्व से फूले नहीं समाते थे। आधुनिक प्रगतिवाद का यह अंकुर स्वामी जी के जीवन में अंकुरित हो चुका था। वह कहते थे कि सेठ लोग गरीबों का शोषण करते हैं और मैं इनका।

रात्रि को सोकर प्रातःकाल जब स्वामी जी उठे तो उनका चित्त प्रसन्न था। हिन्दू कोड बिल का डटकर विरोध किया जाएगा और विरोध करने की पूरी योजना आज मंत्री जी के आने पर तैयार होगी।

शौच, कुल्ला इत्यादि से निवृत्त होकर स्वामी जी यमुना किनारे घूमने के लिए चले गए। बेलारोड पर बहुत देर तक घूमते हुए कुदसिया घाट पर पहुंच गये और वहां जाकर एक घाट पर विश्राम किया।

घाट पर पानी के अंदर जाने वाली सीमेंट को गोल चौकी पर स्वामीजी बैठे हुए थे। यमुना का पानी चौकी से आकर टक्कर लगा रहा था, परंतु

वह चौकी अपनी जगह पर स्थिर थी। स्वामीजी ने उस चौकी पर बैठकर एक गौरव का अनुभव करते हुए मन में धारणा की कि संसार चाहे यमुना की धारा की भांति बहता हुआ पतन के मार्ग पर समुद्र के गहन गर्त तक चला जाय परन्तु मैं इस सीमेंट की चौकी की भांति अटल रहूंगा। पानी चौकी से टकराता है तो टकराए, परन्तु वह अविचल है, स्थिर है। वह अपना स्थान नहीं छोड़ेगी।

स्वामीजी ने यह निश्चय कर लिया कि वह समय के मार्ग में स्थिर शिला बनकर पड़ जायेंगे और उसकी प्रत्येक प्रगति को अपने भरसक प्रयत्नों द्वारा, भारतीय जनता की धार्मिक प्रवृत्तियों को जागरूक करके, रोकने का प्रयत्न करेंगे। स्वामीजी ने देखा कि इस प्रकार उनकी भावनाओं को बल मिल रहा है और उनकी आत्मा में एक नवीन प्रकाश की छटा विद्यमान है। उन्होंने प्राचीन रूढ़िवाद में भारतीय समाज और राष्ट्र का कल्याण देखा और हिन्दू कोड बिल उन्हें भारतीय समाज और संस्कृति को डस जाने के लिए एक विकराल विषधर के तुल्य प्रतीत हुआ।

स्वामी जी ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह इस विषधर को काट-काट कर फेंक देने के लिए नेवले का रूप धारण कर लेंगे। वह अपने आत्म-बल, धर्म-बल और बुद्धि-बल से इस 'बिल' का विरोध करेंगे और भारतीय संस्कृति को सर्वनाश के मुख में जाने से बचायेंगे।

कुछ देर विश्राम करके स्वामीजी अपनी कुटिया की ओर चल दिए। अभी स्वामी जी वहां से चलकर थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि साइकिल पर एक अखबार बेचने वाला जोर से चिल्लाता हुआ आ रहा था "भरी सभा में स्वामी ज्ञानानन्द का पाखंड-खंडन।" अखबार वाले के ये शब्द सुनकर स्वामी जी विचलित हो उठे और उन्होंने अखबार वाले को रोक कर छः पैसे का 'भारत मित्र' खरीदा। पत्र में ऊपर दी गई हैडलाइन देखकर आग-बबूला हो उठे और समझ गये कि यह सब कार्यवाही हो-न-हो उसी वकील के बच्चे की है।

पत्र में सविस्तार पिछले दिन की घटना दी गई थी और संपादक ने सरोज के साहस की मुक्त-कंठ से प्रशंसा की थी। स्वामी जी के क्रोध का इस समय पारावार नहीं था और हृदय में जितनी भी सहनशीलता थी वह एक क्षण साथ छोड़ कर न जाने कहां विलुप्त हो गई थी। स्वामीजी क्रोध में पागल

की तरह बलबला उठे और दृढ़ निश्चय कर लिया कि अपना एक दैनिक-पत्र निकाल कर इस प्रकार की अनर्गल बकवास करने वाले पत्रों का मुंहतोड़ उत्तर देना होगा।

उन्होंने क्रोध से अपने हाथ के पर्चे को फाड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। पत्र की गर्मागर्म खबर पढ़कर स्वामी जी के पैरों की गति बढ़ गई और वह तीव्र गति के साथ चलते हुए थोड़ी ही देर में अपनी कुटिया पर पहुंच गए।

कुटिया पर मंत्री संकटानन्द पहले से ही स्वामी जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। स्वामी जी को देखते ही प्रणाम करना तो भूल गए और क्रोध में आंखें चढ़ा कर तनिक अपने प्रताप का बल प्रदर्शित करते हुए बोले, "देखी आपने स्वामी जी ! धूर्त्त पत्रकारों की धूर्त्तता।"

"क्या बात ?" स्वामी जी मन के भावों को छुपाते हुए बोले। मानो उन्हें किसी बात का ज्ञान ही नहीं।

"भारत मित्र" ने कल की कैनाट प्लेस वाली संपूर्ण घटना को छाप कर उस वेश्या पुत्री के साहस की सराहना की है।" आंखें चढ़ाकर मंत्री जी ने कहा।

"इस धर्म-विमुख सरकार के अंदर पनपने और जन्म लेने वाले पत्रकार वेश्यापुत्री के साहस की सराहना नहीं करेंगे तो क्या धर्मरूढ़ कर्मकांडी विद्वानों के साहस की सराहना करेंगे ?" हृदय में जलती हुई द्वेष की ज्वाला लिए ऊपर से मुस्कुराकर कटु व्यंग्य के साथ स्वामी ज्ञानानंद ने कहा।

फिर कुछ ठहर कर बोले "आपको आंदोलन करना है। धर्म की आवाज को धार्मिक जनों तक पहुंचाने और इन धूर्त्तों को मुंह-तोड़ उत्तर देने के लिए भी एक दैनिक-पत्र का आयोजन करना होगा।"

"अवश्य करना होगा स्वामी जी ! आज के युग में बिना अखबार के गति नहीं और विशेष रूप से आपके विचारों को जनता तक पहुंचाने के लिए हमारे पास कुछ-न-कुछ साधन होने ही चाहियें।" उछलकर मन्त्री जी ने कहा और फिर अपनी कौड़ी सी गोल-गोल आंखों को घुमाकर स्वामी जी के मुख पर इस प्रकार सावधानी से टिका दिया कि मानो वह पहले से ही पत्र की व्यवस्था करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थे।

हिन्दू कोड बिल विरोधक मंडल के मंत्री किसी सभा के चुने हुए व्यक्ति

नहीं थे। यह मंडल इन्हीं मन्त्री जी के दिमाग की उपज थी और इसे बल देने के लिए इन्हें एक प्रभावशाली व्यक्तित्व की आवश्यकता थी। मंत्री जी ने स्वयं जीवन में कभी कोई रचनात्मक कार्य नहीं किया और इसी प्रकार की योजनाएं बनाकर अपना उल्लू सीधा करने में वह दक्ष थे।

मंत्री जी की शक्ल-सूरत भी विचित्र थी। नाटा कद, लम्बा मुंह, काला वर्ण, चपटी नाक, बड़े-बड़े कान, लम्बे दांत यानी हर प्रकार से वह बने बनाए कार्टून थे। दैनिक पत्र यदि कार्टून के स्थान पर उनका चित्र छापते तो कार्टूनिस्ट की आवश्यकता समाप्त हो जाती।

मंत्रीं जी इधर की उखाड़, उधर की पछाड़ करने में बहुत दक्ष थे। दिल्ली की सब गौशालाओं और अनाथाश्रमों में वह अपना हाथ रखते थे। यों कहने के लिए लोग यहां तक भी कहते थे कि विधवाश्रमों से निकालकर इन्होंने न जाने कितनी लावारिस कन्याओं के दाम खड़े कर लिए और अनाथाश्रम की अनेक बालिकाओं को दान प्राप्ति के प्रलोभन में डालकर न जाने किस-किस प्रकार अपना उल्लू सीधा किया परन्तु इन सब बातों का कोई प्रमाण किसी के पास नहीं था।

इनका एक मित्र बादू मूलचन्द अवश्य आज तक इनकी जान को रोने के लिए इनके पास आता था जिसका पचास वर्ष की अवस्था में इन्होंने सविता देवी नाम की एक विधवा से विवाह कराया था। एक दिन मूलचन्द जी की वह धर्मपत्नी घर से गायब हो गई और सब ट्रंकों के ताले खुले पड़े थे। मूलचंद जी पागल की भांति दौड़े हुए मंत्री संकटानन्द के पास आये तो मंत्री जी ने कहा, "यार तुम भी पूरे काठ के उल्लू हो। इस तरह की स्त्रियों के हाथ में घर की चाबी-कुंजी सौंप कर अब मेरे पास क्या कहने आए हो?" वह बेचारा लाचार, अपना-सा मुंह लेकर, रह गया।

कहते हैं सविता देवी के ग्यारह विवाह मंत्री जी ने कराये। सब का सविता देवी ने बंटाधार कर दिया, परन्तु मंत्री जी से सांट-गांठ अभी तक उसी प्रकार की बनी थी। वे सब पति लोग अपनी-अपनी फर्याद को लेकर मंत्री जी के पास अक्सर आते थे।

मंत्री जी के पास कार्यकर्ताओं की कमी नहीं थी। मूलचन्द जी अपना पूरा समय देने को उद्यत थे। सविता देवी स्त्रियों में कार्य करने के लिए इनके

पास एक ठोस महिला थीं जिनपर न किसी नारी का प्रभाव पड़ सकता था और न किसी पुरुष का।

संस्कृत का मंत्री जी एक अक्षर भी नहीं जानते थे परन्तु संस्कृत के महत्व को प्रतिपादित करने में वह कोई कमी नहीं छोड़ते थे। वास्तव में मंत्री जी में व्याख्यान देने का गुण था। हिन्दी का उन्हें अच्छा ज्ञान था।

दिल्ली की राजनीति का वह अपने को आचार्य कहते थे। शहर की वेश्याओं को जब से चावड़ी बाजार से निकलवाकर बर्नबैस्टन रोड पर फेंकने में वह सफल हुए हैं तब से शहर की सब वेश्याएं इनका लोहा मानती हैं।

भले घरों के नवयुवक, जिन्हें चावड़ी बाजार में राह चलने वालों की आंखों में धूल झोंककर कोठों पर चढ़ने में संकोच होता था, अब निस्संकोच भाव से ऊपर चढ़ते हुए मंत्री जी की जान को दुआएं देते हैं और इनकी बलाएं लेते हैं।

इसी बहाने कुछ रईसों के लड़कों से भी मंत्री जी का परिचय हो गया है। कहते हैं कि इन रईस लोगों ने छुपे रूप से उस समय आन्दोलन चलाने के लिए मंत्री जी को अधिक सहायता दी थी।

स्वामी ज्ञानानंद की भांति यह गुण मंत्री जी में भी था कि वह भी धनवानों का ही शोषण करते थे, निर्धनों का नहीं। मंत्री जी का अध्यात्मवाद धनवानों पर अपना अधिक प्रभावशाली रूप प्रकट करता था, मंत्री जी आंदोलनवादी थे और आन्दोलन धन के बिना चल ही नहीं सकता।

कम्युनिस्ट लोग भी आन्दोलन करते हैं परन्तु उनका आन्दोलन क्रांति के रूप में भूख से, पीड़ा से और उत्पीड़न से जन्म लेकर चलता है परन्तु मंत्री जी का आंदोलन कांग्रेस के सिद्धान्तों को अपनाकर पनप रहा था। इनके पास कितने ही सेठों के अधकचरे मस्तिष्क थे जो मंत्री जी की कार्य-कुशलता की प्रंशसा करके स्वामी ज्ञानानंद के चरणों में मस्तक झुकाने, चरण-रज पाने और धन लुटाने के लिये उतावले हो रहे थे।

"मंत्री जी! हमें अपना दैनिक पत्र निकालना होगा।" स्वामी ज्ञानानंद बोले।

"अवश्य निकालना होगा स्वामी जी! तुरन्त निकालना ही होगा।" स्वामी जी की बात को बल देते हुए मंत्री जी ने कहा।

"आप एक बड़ी छापेखाने की मशीन का प्रबन्ध करें। "सत्यमार्ग" नाम से एक पत्र निकालने की आज्ञा लें। पत्र के लिए अन्य जिस जिस वस्तु की आवश्यकता हो उन सबकी बैठकर एक सूची तैयार करें।" स्वामी जी ने गंभीरतापूर्वक कहा।

मंत्रीजी तुरन्त कागज-कलम लेकर दैनिक पत्र का हिसाब बनाने बैठ गये। चंद मिनटों में ही पूरा विवरण तैयार कर लिया और १०,५३५ रुपये, पाँच आने छः पाई के खर्च का एक चिट्ठा बनाकर स्वामी जी के सम्मुख रख दिया।

स्वामी जी ने उसे देखकर मंत्री जी को अपने भक्तजनों के पते लिखाकर कहा, "इन सबको हमारी योजना का एक-एक पत्र लिख दीजिये। आशा है कि इच्छित धन तुरन्त प्राप्त हो जायेगा।" और फिर कुछ संतोष की सांस ली।

मंत्री जी इस शुभ कार्य पर तुरन्त जुट गये क्योंकि धन का उनके पास भी इस समय नितान्त अभाव था और इसीलिए उन्होंने यह नया आन्दोलन खड़ा करने का निश्चय किया था। पिछले कई वर्षों से मंत्री जी कोई नवीन आंदोलन खड़ा नहीं कर पाये थे।

पैसे के इस अभाव में मंत्री जी के नेत्रों में १०,५३५ रुपये, पांच आने, छः पाई चमक उठे और उन्हें एक क्षण के लिये ऐसा प्रतीत हुआ कि यह रुपया उनके पास आ ही गया।

चार घंटे जुटकर मंत्री जी ने सब पत्र लिख डाले और लिफाफों में बंद करके अपने थैले में भी रख लिये। उनपर टिकट लगाने की समस्या अभी बाकी थी।

मंत्री जी ने स्वामी जी को बनारस से आने का किराया भी अभी तक नहीं दिया था और पिछले दिन कैनाट प्लेस पर जो सभा का आयोजन हुआ था उसमें आने वाले गैस के हंडे, तख्त और दरियों का किराया भी अभी उधार में ही चल रहा था। वह इसी चक्कर में थे कि आखिर क्या करें ?

मंत्री जी की मुख-मुद्रा को पाकर स्वामी जी बोले, "मंत्री जी संभवतः आजकल आप कुछ आर्थिक संकट में हैं।"

स्वामी ज्ञानानंद का अध्ययन देखकर मंत्रीजी के नेत्र सजल हो उठे और उनके खुश्क होठों पर जमी हुई पपड़ियां तिड़कने लगीं।

मंत्री जी ने थैला एक ओर रख कर स्वामी जी के सम्मुख हाथ जोड़ते

हुए कहा, "स्वामी जी ! इतने दिनों से इस आंदोलन को अकेला अपने कंधों पर घसीटता हुला चला आ रहा हूं। आप अंतर्यामी हैं, मेरी परिस्थिति का आपने पूर्ण ज्ञान कर लिया।"

"ये लीजिये, अब आर्थिक संकट नहीं रहेगा आपको।" एक सौ रुपये का नोट मंत्री जी को देते हुए स्वामी जो ने कहा।

मंत्री जो के जीवन में आनन्द की लहर दौड़ गई। सौ रुपये का नोट मंत्री जी के हाथों में आज कई महीने बाद आया था। उन्होंने इसे बहुत सुरक्षा के साथ कई तह करके अपनी जवाहरकट की अन्दर वाली जेब में रख लिया और फिर स्वामी जी के चरण छूकर उनसे विदा ली।

मंत्री जी से चले जाने पर स्वामी जी ने 'भारत-मित्र' को उठाकर एक बार 'भरी सभा में स्वामी ज्ञानानंद का पाखंड खंडन' वाली सूचना को फिर पढ़ा और पढ़कर इस बात का दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह अपने पत्र में इस प्रकार के पत्रों का अवश्य मुंहतोड़ उत्तर देंगे उनका पत्र प्रकाशित होनें लगे, फिर देखेंगे कि ये अनर्गल बकवास करने वाले पत्र कहां ठहरते हैं ?

स्वामी जी को मंत्री जी का सहयोग मिल जाने से यह आशा हो गई कि अब उन्हें कार्यकर्त्ताओं की कमी नहीं रहेगी। स्वामी ज्ञानानंद जी अपनी संस्कृति का चमत्कार और भारतीय रूढ़िवादी धार्मिक प्रणाली का भारतवर्ष में वह रूप मुखरित करना चाहते थे जिससे प्रभावित होकर एक बार भारत की जनता फिर अपने मस्तिष्क पर मोहर लगा कर बुद्धि से संबंध विच्छेद कर ले और हृदयवादी विश्वास के साथ स्वामी ज्ञानानंद को भगवान का सांसारिक संस्करण मान ले।

स्वामी ज्ञानानंद भारतीय जनता के अंधविश्वास पर अपना साम्राज्य स्थापित करना चाहते थे। अपने इस प्रयत्न का प्रथम परीक्षण वह कई वर्ष पूर्व एक धर्म यज्ञ का आयोजन करके कर चुके थे और उन्हें उस कार्य के आयोजन में सफलता भी कम नहीं मिली थी।

धनवानों ने धन दिया, श्रद्धाभक्ति रखने वाले भक्तों ने सहयोग दिया, पंडित ओर संस्कृत के विद्वानों ने सम्मान दिया और सब से महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि भारत के अंग्रेज वायसराय ने उस यज्ञ में प्रथम आहुति देकर यज्ञ प्रारंभ किया।

स्वामी जी को गर्व था अपने इस सफल प्रयास पर जिसमें आपने विदेशी वायसराय से भी भारतीय धर्म के कर्म-कांड में इस प्रकार सफल सहयोग लिया। आज भी स्वामी जी अपनी उस सफलता को स्मरण करके फूले नहीं समाते थे।

मंत्री जी से स्वामी ज्ञानानंद जी की भेंट इसी यज्ञ के आयोजन में हुई थी। इसके पश्चात देश अनेकों राजनीतिक क्रांतियों और उथल-पुथल में से होता हुआ आज की परिस्थितियों तक पहुंच गया। कांग्रेस के नेता, जो उस समय जेलों में सड़ रहे थे, युद्ध समाप्त होने पर मुक्त हो गये। देश का विभाजन हुआ और वह स्वतंत्र हो गया। भारत का नया विधान बना।

इस सब में कहीं पर भी स्वामी ज्ञानानंद को कोई स्थान नही मिला। हिंदू महासभा के एक दो व्यक्तियों को भी अपनाया गया, फारवर्ड ब्लाक के नेता को भी बीच में खपाने का प्रयास किया, सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं से भी सहयोग की रूप-रेखा बनी, परंतु स्वामी ज्ञानानंद का कहीं पर कुछ महत्त्व नहीं समझा गया।

स्वामी ज्ञानानंद के हृदय में एक ज्वाला सुलग रही थी जिसका किसी भी अवसर पर विस्फोट हो सकता था। ज्ञानानंद के जीवन में एक बौखलाहट थी और थी एक प्रकार की बेचैनी जो उन्हें हर समय उद्विग्न सा बनाये रखती थी।

हिन्दू कोड बिल की समस्या सामने आते ही और मंत्री जी का निमंत्रण पाते ही स्वामी ज्ञानानंद की विचारधारा को प्रोत्साहन ही नहीं मिला बल्कि बारूद को जलाने के लिए अग्नि का सहयोग मिल गया।

मंत्री जी की कर्मठता पर स्वामी जी को पूर्ण विश्वास था। उनकी कार्य-कुशलता वह यज्ञ के अवसर पर देख चुके थे। इसलिए आन्दोलन की सुव्यवस्था के विषय में उनका मन बिल्कुल निश्चित था। हृदय में पूर्ण विश्वास था कि उनका आन्दोलन सफल होगा और उसी दृढ़ विश्वास को लेकर स्वामी ज्ञानानंद जी ने यमुना किनारे अपना आसन जमाने का दृढ़ संकल्प कर लिया।

स्वामी जी ने धारणा बनाली कि वह अब दिल्ली में एक दैनिक पत्र का आयोजन करके ही कहीं बाहर जायेंगे, इससे पूर्व नहीं। भारत की सरकार से टक्कर लेने के लिये राजधानी में आसन जमाना नितात आवश्यक है और साथ ही अपने विचारों को जनता तक पहुंचाने के लिये एक पत्र का होना भी जरूरी है।

स्वामी जी यही दृढ़ निश्चय किये बैठे थे कि इतने में सेठ गूदड़मल जी अपनी सेठानी को लेकर आ पहुंचे और दोनों स्वामी जी की चरण-रज लेने के पश्चात इनके चरणों के पास बिछे आसन पर बैठ गये। स्वामी जी पहले से ही गंभीर मुद्रा में बैठे थे और सेठ जी तथा सेठानी जी को देखकर तो उनकी गंभीर मुद्रा और भी गम्भीर हो उठी। होठ आपस में इस प्रकार चिपक गये कि मानो उन्हें खोलने के लिए विशेष प्रयास की आवश्यकता थी।

सेठानी जी ने खड़े होकर स्वामी जी को १०,००० की एक थैली भेंट की और एक शब्द भी मुख से नहीं बोलीं। स्वामी जी ने उसे आशीर्वाद दिया, "पुत्रवती हो, धनवती हो, यशवती हो।" और १०,०००) की थैली एक ओर तख्त पर रखने का संकेत किया। आशीर्वाद पाकर सेठानी जी सेठ जी के साथ विदा हुईं मानो उनकी इच्छित अभिलाषा पूर्ण हो गई।

सेठ गूदड़मल यज्ञ के समय से ही स्वामी जी के भक्त थे और उनमें बड़ी श्रद्धा रखते थे। सेठानी स्वामी जी को भगवान का अवतार मानती थीं। उन्हीं के आशीर्वाद से सेठानी जी के गर्भ से पुत्र हुआ था।

स्वामी जी ने सेठ जी के चले जाने पर ईश्वर को कोटिकोटि धन्यवाद दिया और हृदय में पूर्ण रूप से समझ लिया कि जो कुछ वह करने जा रहे हैं उसमें भगवान का पूर्ण सहयोग है। यदि ऐसा न होता तो कैसे उन्हें उनकी इच्छित धन-राशि प्राप्त हो जाती ?

गर्व के साथ स्वामी जी की छाती फूल गई और आप-ही-आप उन्होंने दाँत किटकिटाकर कहा, "अब देख लूंगा इन बदमाश पत्रकारों को, जो मेरा विरोध करने पर तुले हैं। ये मेरा उपहास करना चाहते हैं, मैं इन्हें मूर्ख समझता हूँ।"

: ७ :

ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश के हृदय में ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा थी और इसी लिये वह अपने घर के पारिवारिक बंधनों से मुक्त होकर काशी पहुंचा था। उसने सुना था कि काशी संस्कृत विद्या का केंद्र है और वहां प्रकांड पंडित रहते हैं।

काशी में वह स्वामी ज्ञानानंद की शरण में पहुंचा। स्वामी ज्ञानानंद भी ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश की मुखाकृति से आकर्षित हुए और उन्होंने उसे दीक्षा दी। यह विद्यार्थी बहुत शीघ्र सब विद्यार्थियों से प्रतिभाशाली सिद्ध हुआ और थोड़े ही समय में वेद-वेदांगों का इसने अध्ययन कर लिया। स्वामी जी ने ब्रह्मचारी पर प्रसन्न होकर उसे अपना प्रधान शिष्य घोषित किया और स्त्रियों को चरण-रज बांटने का महत्वपूर्ण कार्य उसके सुपुर्द किया।

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश इस पद को प्राप्त करके भी प्रसन्न नहीं था। उसकी आत्मा विचारों और जिज्ञासा के जिस मुक्त क्षेत्र में विचरण करना चाहती थी, वह उसे यहां प्राप्त नहीं हुआ था। कभी-कभी उसे ऐसा प्रतीत होता था कि उसका जीवन नीरस रूढ़ियों के जंजाल में इतनी बुरी तरह जकड़ गया है कि मानो उसमें जीवन नाम की कोई वस्तु रह ही नही गई है, जीवन कहलाने वाले तत्त्व का मानो लोप हो गया है।

गत जीवन के इसी पक्ष को लेकर बगीचे में घूमते हुए ब्रह्मचारी आनंद-प्रकाश सरोज से बातें कर रहा था। सरोज मुस्कुरा कर कह उठी, "तो ब्रह्मचारी! मुझे धन्यवाद दो कि मैंने तुम्हारे आत्मा-विहीन जीवन में प्राण फूंक दिये, तुम्हारे दबे हुए चैतन्य को उभार दिया।"

"इसमें कोई संदेह नहीं। आपने मेरा अवरुद्ध मार्ग खोल दिया। परंतु प्राण मेरे जीवन में वर्तमान था। यदि प्राण न होता तो मैं तुम्हारी ओर आकर्षित ही न हो पाता। स्वामी ज्ञानानंद की निर्लेप-दशा को मैं उस समय तक प्राप्त नहीं हो सका था।" ब्रह्मचारी ने कहा।

"तुम उसे निर्लेप-दशा कह रहे हो ब्रह्मचारी!" गंभीर होकर सरोज बोली

"मैं उसे पाखंड कहती हूं, ढोंग कहती और कहती हूं धूर्त्तता।"

"यहां मैं आप से सहमत नहीं हूं। मैंने स्वामी ज्ञाननान्द को जितने निकट से परखा है उतने निकट से संभवतः कोई परख नहीं पायेगा।" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश बोले और वह अपने मत के प्रतिपादन में दृढ़ थे।

"तो इसका अर्थ यह हुआ कि मैंने कल भरी सभा में जिन शब्दों का प्रयोग स्वामी जी के लिये किया, वह मैंने भूल की?" प्रश्नवाचक दृष्टि से सरोज ने पूछा।

"मैं ऐसा ही समझता हूं। परन्तु इसका अर्थ आप यह न समझना कि मैं उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर कह रहा हूं। मैं अब जीवन मे उनसे अपना संबंध विच्छेद कर चुका हूं। जिस व्यक्ति में त्रुटियों को क्षमा करने को क्षमता नहीं उसे मैं मानव नहीं, जड़ मानता हूं। तलवार के नीचे आने वाली प्रत्येक वस्तु कट जाती है, परन्तु मानव के मार्ग में आने वाली प्रत्येक वस्तु कुचल नहीं दी जाती।"

कुछ ठहरकर ब्रह्मचारी फिर बोला, "स्वामी जी ने मुझे अपराधी ठहराया और मेरी आत्मा उन्हें अपराधी ठहरा रही है। वास्तव में कौन अपराधी है, इसका निर्णय मैं न तो इस समय स्वयं ही करने जा रहा हूं और न ही इस विषय को तर्क का विषय बनाना चाहता हूं। मैं इस विषय को आज समय के हाथों में सौंप कर अपने उत्तरदायित्व से मुक्ति पाना चाहता हूं।" इतना कह कर ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश मौन हो गये।

सरोज को एक क्षण के लिये लगा कि मानो उसने गंभीर सागर में खलबली पैदा करने के लिए एक ढेला उठाकर फेंक दिया। वह ढेला सागर में समा गया और सागर से एक गंभीर स्वर निकला जिसे समझने का प्रयास करते हुए भी वह कुछ समझ न पाई।

ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश के शब्द बहुत स्पष्ट थे। वह फिर कहने लगे, "आपका मैं आभारी हूं, केवल इस नाते कि आपने मेरे मस्तिष्क को एक उलझन से निकाल कर बाहर खड़ा कर दिया। परन्तु वह उलझन अभी समाप्त नहीं हुई। आज मैं उसके विषय में विचारने के लिए मुक्त हूं और संभव है कि मैं उसका जीवन में कोई हल खोज सकूं। उस समय मैं उन उलझनों के बीच में फंसा हुआ था और जितना भी मैं उन्हें सुलझाने का प्रयत्न करता था उतनी ही वे

उलझनें और उलझती जाती थीं।"

सरोज बातों का रुख बदलकर बोली, "मेरा मन आज न जाने कैसा कुछ हो रहा है ब्रह्मचारी ! मैं चाहता हूं कहीं बहुत दूर हम लोग लोग घूमने चलें। क्या तुम को रुचिकर होगा इस समय घूमने चलना?"

"कोई विशेष आपत्ति मुझे नहीं है। मैं आपके साथ चल सकता हूं।" ब्रह्मचारी ने अपनी अनुमति दे दी।

सरोज की फिटन तैयार होकर आ गई। सामने कोचवान अपनी ऊँची सीट पर लम्बा फुंदनेदार हंटर लिए बैठा था। पीछें वाली सीट पर ब्रह्मचारी और सरोज बैठ गए। इसी समय सरोज का कुत्ता भी दुम हिलाता हुआ आकर उसके पैरों में लेट गया।

सरोज की फिटन का घोड़ा मिलिट्री का घोड़ा था जिसे फौज से रिजेक्ट करा कर एक लैफ्टिनेंट डाक्टर ने, जिनसे सरोज की बड़ी मित्रता थी, सरोज को बहुत कम दामों पर दिला दिया था।

दोनों मौन थे परन्तु उनकी मानसिक चेतनायें मौन न थीं। "यह स्थान बहुत रमणीक है" ब्रह्मचारी ने सरोज की ओर मुख करके कहा।

"यह सामने देखिए कितने स्वच्छंद पक्षी उड़े जा रहे हैं! और उन पक्षियों के झुंड में सबसे आगे एक कपोत और कपोती का जोड़ा है। देखिये एक जोड़ा सबसे पीछे भी रह गया है परन्तु वह भी अपने आनन्द की दुनियां में मग्न है। दोनों ने अपना पृथक् संसार निर्माण किया है। अन्य सब पक्षियों के साथ उड़ते हुए भी दोनों अपने स्वच्छंद विहारों मे निमग्न हैं। यही पुरुष और नारी के अभाव को पूर्ति है," सरोज बोली।

"पुरुष और नारी के अभाव की पूर्ति है ?" आश्चर्य से ब्रह्मचारी न सरोज से पूछा।

"हाँ ब्रह्मचारी ! तुम पुरुष और नारी के विज्ञान को नहीं जानते, संभवतः यह विज्ञान भी बहुत व्यापक है ! और मैं तो यह मानती हूं कि जीवन का यह सब से बड़ा सत्य है।" सरोज सतर्क होकर बैठती हुई बोली।

"सब से बड़ा सत्य है ? तब फिर तुम्हारी दृष्टि में वेद, शास्त्र, दर्शन इत्यादि....."

"हाँ-हाँ ब्रह्मचारी ! ये सब बाद में आते हैं। पहले व्यक्ति अपने को

तो समझे। जब तक व्यक्ति को अपना भी ज्ञान नहीं, उस समय तक वह व्यर्थ संसार के झमेलों में उलझता फिरे, इसका मैं कुछ अर्थ नहीं समझती।" सरोज ने हृदय में उभार लाकर तनिक गर्व के साथ इठलाते हुए कहा।

ब्रह्मचारी के सम्मुख जीवन का एक नवीन दृष्टिकोण उपस्थित हुआ। यह उसके विषय में अनभिज्ञ था यह बात नही, परन्तु उसका जो रूप सरोज ने प्रस्तुत किया, वह नवीन था। ब्रह्मचारी ने और कुछ कहने का प्रयत्न न किया। इस विषय की व्याख्या करने का भी यह समय नहीं था। शीतल पवन बह रही थी। मुक्त पक्षिगण चहचहा रहे थे। स्वच्छन्द पशु विहार कर रहे थे। चरवाहे उन पशुओं के पीछे मस्ती में राग अलापते अपना डंडा कंधे पर रखे इधर-उधर फिर रहे थे। इनके अतिरिक्त और सब कुछ शांत था। सड़क के दोनों किनारों पर खड़े हुए जामुन के हरे-हरे वृक्ष इन सबके आनन्दपूर्ण विहारों के साक्षी थे। पक्षिगण इन वृक्षों की चोटियों पर मंडरा कर आनन्द की उमंगों में इठला रहे थे। फिटन आगे बढ़ती जाती थी और वृक्ष पीछे रहते जाते थे।

"इस घूमने में ब्रह्मचारी तुम्हें कुछ आनन्द आता है ?" सरोज ने पूछा।

"घूमना मुझे बचपन से ही प्रिय है। जब मैं बच्चा था तो अपने गांव से चार मील दूर यमुना नदी के किनारे पर घूमने जाया करता था। वहां के छोटे-छोटे झुंडों और कांस के मदरे-मदरे वृक्षों के बीच मैदानों में घूमता था।

मैदानों में चौकड़ी भरते हिरनों और तीव्र गति के साथ दौड़ने वाले खरगोशों को मैं बड़े चाव के साथ देखता था। संध्या समय या प्रातःकाल यदि कभी आकाश बादलों से आच्छादित हो जाता था तो मयूरों को नर्तन करते हुए देखकर मैं आनन्द विभोर हो उठता था।

मेरा वह बाल-काल, जीवन का स्वर्ण-काल, था, जब चिन्ता और विचार से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं था। केवल नेत्र और हृदय का ही जीवन में प्रधान स्थान था, बुद्धि का नहीं। सौंदर्य की साक्षात प्रतिमाएं नेत्रों की पुतलियों द्वारा सीधी हृदय में उतर जाती थीं और फिर उन सौंदर्य की प्रतिमाओं को हृदय में धारण करके मेरा मन-मयूर नाच उठता था," सरल स्वाभाविकता से ब्रह्मचारी ने कहा।

"तुम्हारा जीवन सुन्दर था, परन्तु उस समय भी अभावपूर्ण था ब्रह्मचारी ! तुम्हारे उन स्वच्छंद विहारों में आनन्द था, उमंग की सरलता थी, सुख था।

शांति थी परन्तु मिठास नहीं था, रस नहीं था। तुम्हारे जीवन के केवल एक ही पहलू का विकास हो पाया था ब्रह्मचारी ! दूसरा पहलू अविकसित ही रह गया। जीवन की दो शाखाओं में से एक पल्लवित होती चली गयी और दूसरी तुम्हारे अज्ञान, अभिमान और कुसंगति के तुषारापात से आज तक झुलसती चली आई।" मुस्कुराते हुए सरोज ने कहा।

"परन्तु चिन्ता न करो ब्रह्मचारी ! मैं तुम्हारे नीरस जीवन में अमृत का स्रोत बहा दूंगी। जीवन की सूखी हुई डाली को अपने रस से परिप्लावित करके पुष्पित और पल्लवित कर दूंगी। गंभीर सूखे जीवन को मधुर मुस्कानों से भर दूंगी। इस सूखे जीवन में सरसता का संचार होगा।"

'अज्ञान, अभिमान और कुसंगति' ये तीनों शब्द ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश के कानों में बज रहे थे,—एक गंभीर गड़गड़ाहट के साथ जीवन में तूफान-सा आ रहा था। ब्रह्मचारी विचारों के वेग को न संभालकर अर्द्ध-मूर्छित-सी अवस्था में पीछे को कमर लगाकर लेट गया। ब्रह्मचारी को अपना गत जीवन स्वप्न तुल्य प्रतीत हुआ।

"सो रहे हो ब्रह्मचारी !" सरोज मुस्कुराती हुई संकेत मात्र के लिए ब्रह्मचारी की चिबुक पर एक उंगली लगाकर बोली, "निद्रा को त्याग कर जीवन में पदार्पण करो ब्रह्मचारी ! साधु बनकर जीवन को निर्लेप कहना, जीवन से भागना है। और जीवन से भागना मानव की पराजय है। दुर्वासा ऋषि ने शकुंतला से हार कर उसे शाप दे डाला, परंतु शकुंतला ने जीवन से संघर्ष किया। भरत को जन्म देकर इस प्रदेश को, जिसमें तुम निवास करते हो, भारतवर्ष बनाया। क्या तुमने शाकुंतल पढ़कर भी इस कठोर सत्य का अनुभव नहीं किया ब्रह्मचारी ? नहीं किया होगा, क्योंकि तुम्हारी विचार-धारा एकांगी थी," मुस्कुराकर सरोज बोली।

"परंतु ऋषि को अपमानित करना भी तो उचित नहीं था।" ब्रह्मचारी सरलता पूर्वक बोला।

"अपने को अपमानित समझना ऋषि का भ्रम था ब्रह्मचारी ! तुम ही कहो, क्या मैंने कल स्वामी ज्ञानानंद का अपमान किया था ? यदि कल स्वामी ज्ञानानंद में ऋषि दुर्वासा जैसी शाप देने की शक्ति होती या आज का मानव पूर्वकाल जैसे ऋषि-कोप में मान्यता रखने वाला होता तो क्या वह अपनी

करनी से चूक सकते थे ?

"खैर अब जाने दो इन बातों को। मेरे वह तीनों शब्द 'अज्ञान, अभिमान और कुसंगति' तुम्हारे कानों में खटक रहे हों तो उन्हें वापस कर दो। इस प्रकार की नित्य न जाने कितनी समस्याएं जीवन में खड़ी हो जाती हैं। सभी के समाधान के चक्कर में यदि मानव फिरता रहे तो उसे प्रकृति के साथ अठखेलियां करने का अवकाश ही प्राप्त न हो।" सरोज ने पैरों में बैठे कुत्ते पर हाथ फेर कर उसे उठाया और गोद में बिठाते हुए प्यार से चूम लिया।

"मेरे इसे गोद में बिठाने में कोई आपत्ति तो नहीं है ?" सरोज ने पूछा।

"आपत्ति तो बहुत थी परंतु अब नही है।" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"यह कैसे हुआ ?" सरोज ने पूछा।

"मैंने सोच लिया कि यह भी परमात्मा का एक जीव है और फिर आपको प्रिय है।" ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया।

"तुमने ठीक सोचा ब्रह्मचारी ? मैं समझती हूं कि मेरे इस कुत्ते से ही तुम्हारी बुद्धिवादी विचार धारा का उदय हुआ।" गंभीरतापूर्वक सरोज ने कहा और ब्रह्मचारी ने सरोज के इस विचार पर कोई आपत्ति नहीं की।

साधारण कुत्ते की समस्या ने ब्रह्मचारी के रूढ़िवादी विचारों को छिन्न-भिन्न करके फेंक दिया। एक वेश्या के कुत्ते में भी ब्रह्मचारी ने उसी भगवान के दर्शन किये जिसकी खोज में उसने दस वर्ष मंदिरों में घंटे और घड़ियाल बजाए थे और स्वामी ज्ञानानंद की सेवा की थी।

: ८ :

फिटन लौट रही थी और वह मिण्टो रोड से होती हुई कैनाट प्लेस से होकर बारहखम्बा रोड पर होकर सीधी कोठी पर पहुंच गई।

कोठी पर पहुंचे तो सरोज ने देखा कि वकील साहब एक कागजों का पुलिन्दा लिए सरोज की बैठक के सामने, आनेवालों की कुर्सियों पर बैठे, सरोज की राह देख रहे थे।

"ओह वकील साहब ! आइये, आइये !" कहते हुए फिटन से ब्रह्मचारी के साथ नीचे उतर कर सरोज बैठक के अंदर चली गई। वकील साहब पीछे-पीछे बैठक में घुस गये और बहुत तपाक के साथ एक सोफे पर विराजमान हो गये।

ब्रह्मचारी के मुख को चश्मे के ऊपर से देखकर वकील साहब मन-ही-मन यह सोचकर मुस्कुराए कि भाग्य भी भगवान् ने क्या चीज बनाई है ? कहां यह काठ का उल्लू और कहां यह गुलाब के फूल सी सरोज, जिस पर दिल्ली का एक-से-एक बाँका-छैला अपना सर्वस्व न्यौछावर करने को उद्यत है। कहां स्वामी ज्ञानानंद की कुटिया में जमीन पर लेट लगाता होगा और कहां यह बैठा है मखमल के सोफे पर। मन-ही-मन वकील साहब ने ब्रह्मचारी के भाग्य की सराहना की, उनकी आंखों में जो व्यंग्य भरा था उसे वकील साहब न छुपा सके।

सरोज और ब्रह्मचारी ने वकील साहब के विचारों को भांप लिया। परन्तु बोले एक शब्द भी नहीं। थोड़ी देर में वकील साहब बोले, "मिस सरोज ! आपका मामला तो ऐसा रहता है कि मुद्दई सुस्त और गवाह चुस्त।"

"यह किस प्रकार वकील साहब ?" सरोज ने मुस्कुराते हुए पूछा।

"किस तरह क्या ? मैंने आपका केस तय्यार करने के लिए अपनी रात खराब की।" वकील साहब बोले।

वकील साहब और सरोज आपस में बातें कर रहे थे। इसी समय मेज पर से 'भारत मित्र' पत्र ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश ने उठा लिया। पत्र की हैड-

लाइन पढ़कर ब्रह्मचारी ने पत्रकार के उथलेपन पर विचार किया और सोचा कि क्या वास्तव में यह इतनी बड़ी घटना थी कि जिसे पत्र के मुख-पृष्ठ की प्रथम पंक्ति के रूप में दिया जाना चाहिये था।

इसी बीच नौकर चाय और नाश्ता लेकर आ गया और सब उसने तरीके के साथ बीच की गोल मेज पर सजा दिया।

"आइये वकील साहब ?" सरोज बोली—"पहले कुछ नाश्ता कर लें। केस और कचहरी तो नित्य के काम हैं। जीवन भर चलते रहेंगे।" इतना कह कर सरोज ने दो प्याली चाय बनाई।

"मुझे कचहरी के लिए देर हो रही है मिस सरोज !" चश्मे के शीशों को रूमाल से साफ करते हुए आखों पर चढ़ाकर वकील साहब बोले। सरोज के हाथों से बनाई हुई चाय की प्याली पीने के लिए वकील साहब का दिल अंदर-ही-अंदर फुदक रहा था परन्तु व्यावहारिकता की पूर्ति के लिए उन्हें इतना कहना ही पड़ा, "मेरा विचार था कि नाश्ते से पूर्व आप जरा अपने केस पर दृष्टि डाल लेतीं।"

सरोज ने वकील साहब की बात मानो सुनी ही नहीं और चाय बनाकर साधारण रूप से प्याली वकील साहब की ओर बढ़ा दी।

ब्रह्मचारी के लिए दूध का गिलास था जिसे ब्रह्मचारी ने बिना पूछे ही उठा लिया और पीना भी प्रारम्भ कर दिया।

वकील साहब बहुत कायदे से चाय पी रहे थे। ब्रह्मचारी के खाने में जितनी सादगी थी वकील साहब के खाने में उतना ही तकल्लुफ था। ब्रह्मचारी में सरल स्वाभाविकता थी और वकील साहब में बनावट।

इस आयु में वकील साहब का यह तकल्लुफ सरोज के लिए विशेष प्रमोद की वस्तु थी और ब्रह्मचारी के लिए कौतूहल। कभी-कभी ब्रह्मचारी वकील साहब के इस तकल्लुफ को बीमारी भी समझने लगता था। ब्रह्मचारी ने अपनी स्वाभाविक सरलता से पूछा, "वकील साहब !" क्षमा करना, आप मुझे कुछ अस्वस्थ से प्रतीत हो रहे हैं। आपको पक्षाघात (लकवा) रोग तो नहीं हुआ था कभी। यदि हुआ हो तो मैं आपको उसकी एक अचूक औषधि बतला सकता हूं। इस औषधि का प्रयोग करने पर आपके हाथ और हाथों की उंगलियां बिलकुल ठीक काम करने लगेंगी।"

ब्रह्मचारी की बात सुनकर सरोज खिलखिलाकर हंस पड़ी और वकील साहब आग बबूला होकर बोले—"कैसी बीमारी ?"

"यह बीमारी नहीं है ब्रह्मचारी ! यह तकल्लुफ है। शहर की भाषा में इसे सभ्यता कहते हैं।" बीच ही में प्रश्न का समाधान करती हुई सरोज बोल उठी।

चाय के पश्चात वकील साहब ने स्वामी ज्ञानानन्द जी पर तुरन्त केस दायर करने की अनुमति दी और यह भी बता दिया कि पुराने सम्बन्धों के नाते ही वह यहां तक चलकर आए थे। यदि सरोज से उनके सम्बन्ध इतने न हुए होते तो स्वामी ज्ञानानंद का वकील बनना उन्होंने रात्रि को ही स्वीकार कर लिया होता। "उफ ! कितना जोर दिया स्वामी जी ने। परन्तु आपको वचन जो दे दिया था मैंने। आप जानती ही हैं कि हमारा पेशा वचन पर ही चलता है।"

"परन्तु इस समय तो दस बज गए वकील साहब, आपको कचहरी जाना था। वहां आपके अन्य मुअक्किल आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। इस केस के विषय में कल विचार करेंगे। कोई तारीख तो निकलने जा नहीं रही है इसकी।"

"यदि स्वामी ज्ञानानंद पहले अदालत में चले गये तो उनका केस मजबूत हो जाएगा।" वकील साहब ने कहा।

"स्वामी जी इन तुच्छ बातों के लिए अदालत में कभी नहीं जायेंगे," ब्रह्मचारी ने कहा और वह उठ खड़ा हुआ।

फिर सामने कानस पर शिव की नृत्य करती हुई मूर्ति के पास खड़ा होकर बोला, "आपकी यह मूर्ति आपकी अद्वितीय कलाकृति है मिस सरोज !"

"हां, ब्रह्मचारी ! यह मूर्ति मैंने आगरे के एक प्रसिद्ध संगतराश से तैयार कराई थी। पूरे पांच वर्ष लगे थे उसे इस मूर्ति को बनाकर तैयार करने में। यहीं सामने वाले बरांडे में बैठकर वह वृद्ध इसे बनाया करता था।" ब्रह्मचारी के पास जाकर सरोज ने शिव-मूर्ति पर आकर्षण से देखते हुए कहा।

"बहुत सुन्दर बनाई है।" ब्रह्मचारी फिर बोला और इसका उत्तर अपनी गुण-ग्राहिता प्रकट करते हुए सरोज ने मौन भाषा में दिया। सरोज के मुग्ध-नेत्र ब्रह्मचारी के मस्तक पर टिक गये। ब्रह्मचारी को सरोज की कोठी

में इसी मूर्ति ने सबसे अधिक आकर्षित किया था।

वकील साहब बेचारे मौन उसी प्रकार सोफे पर बैठे विचार कर रह थे कि अब क्या करें ? उन्हें रह-रह कर अपनी रात भर की मेहनत पर खेद हो रहा था कि क्यों उन्होंने व्यर्थ ही इतना परिश्रम किया। एक वेश्या-पुत्री के कहने का क्या भरोसा ?

स्वामी ज्ञानानंद से बुराई भी ली और कुछ धन-प्राप्ति भी न हो सकी। यह ब्रह्मचारी का बच्चा यहां क्या आ फंसा है कि मानो यह सरोज का मालिक ही बन बैठा है। हमारे देखते-देखते यहां से न जाने कितने मालिक बन-बनकर साफ हो गये। आमने-सामने बैठकर चार बातें करने का भी सुअवसर इस पाजी ने छीन लिया। बड़ा आया है मूर्ति-कला का प्रशंसक और ज्ञाता बनकर धूर्त्त ने सरोज का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का देखो कैसा बहाना खोज निकाला।

यह व्यक्ति जंगली नहीं मक्कार है। इसने मुझे बीमार बतला कर अवश्य मेरा उपहास किया। मैं इसे क्षमा नही करूंगा। यदि एक बार यह केस मेरे हाथ में आ गया तो इसे ऐसा उल्टा-सीधा फंसा दूं कि छटी तक का खाया-पिया याद आ जाए। मुकदमे में कहीं पर इसकी झड़ें ऐसी उलझा कर छोड़ दूंगा कि जिन्दगी भर के लिए लटक जाएगा।

जब काफी देर तक सरोज ने वकील साहब की ओर ध्यान न दिया और वकील साहब चलने के लिये उद्यत होकर खड़े हो गये तो कनखियों से देख कर सरोज बोली, "अरे ! हम लोग तो वकील साहब को भूल ही गये। लो वह तो जाने के लिये उद्यत हैं।" और फिर वकील साहब को संबोधित करके बोली, "अच्छा वकील साहब। भूल न जाना हमारे केस को। यह आपका अपना ही मामला है। कल इस विषय पर विस्तार के साथ बातचीत करेंगे।"

चलते समय वकील साहब मुंह से कुछ बोले नहीं। उनके मन में ब्रह्मचारी के प्रति रोष की ज्वाला जल रही थी। वकील साहब का इस प्रकार निरादर सरोज की कोठी पर प्रथम बार हुआ था।

वकील साहब सहृदय व्यक्ति थे। उनके मन में सौंदर्य के प्रति स्थान रहता था। सरोज को सामने देख कर तो वह सर्वदा ही की भांति पिघल जाते थे परंतु आज सरोज की बात का भी चलते समय वह उत्तर न देस के।

सरोज ने उनके इस प्रकार जाने पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया । वह जानती थी कि वकील साहब चाहे जितने भी नाराज होकर क्यों न जायें दो दिन से अधिक लंबी हड़ताल नहीं कर सकते । कुछ-न-कुछ वहाना निकालकर दुम हिलाते हुए चले ही आयेंगे ।

: ६ :

वकील साहब के चले जाने पर सरोज ने निश्चितता की श्वांस ली और ब्रह्मचारी तथा सरोज फिर आकर गोलमेज के दोनों ओर पड़ी सोफे की दो कुर्सियों पर बैठ गये। अभी थोड़ा ही समय व्यतीत हुआ था कि मुंह में पानों का बीड़ा दबाये मंत्री संकटानंद आ पधारे।

मंत्री संकटानंद के हाथ में नया खरीदा हुआ क्रोकोडाइल लैदर का पोर्ट-फोलियो था और दूसरे हाथ में कोरी खद्दर की धोती की चुनी हुई फेंट का किनारा। कुर्ता भी आज नया था।

कानपुरी चप्पल मंत्री जी के पक्के रंग पर चमाचम चमक रही थी। सरोज देखते ही समझ गई की आज अवश्य कुछ विशेष बात है जो मंत्री जी इस प्रकार प्रसन्नतापूर्वक आ रहे हैं। अवश्य ही आज किसी मूजी पर हाथ साफ किया है मंत्री जी ने। मंत्री जी की आंखों में सुर्मा और सिर पर एक इंच बाढ़ वाली नूकीली गांधी टोपी लगी थी। मंत्री जी ने कांग्रेसी स्वांग भरने वालों को लजा रखा था।

मंत्री जी का सरोज ने खड़े होकर स्वागत किया और विशेष अभिवादन के साथ सामने वाले सोफे पर बिठाते हुए बोली, "आज तो बहुत दिनों में दर्शन दिये मंत्री जी!"

"आपका ऋण जो था सिर पर" पचीस रुपये सरोज की ओर बढ़ाते हुए मंत्री जी बोले "आप जानती ही हैं मेरा स्वभाव मिस सरोज! किसी का भार जब तक सिर पर रहता है तब तक आत्मा को उधर जाने में महान् कष्ट होता है।" दांत निकालते हुए मंत्री जी बोले।

"यह तो कोई विशेष बात नही।" रुपये हाथ में लेकर सरोज बोली, "यह तो आपका अपना ही घर है मंत्री जी! भला कहीं घर में भी संकोच किया जाता है। आपकी बदौलत हमने कितना रुपया कमाया है! परंतु इधर कुछ दिनों से आपकी कृपा-दृष्टि इस ओर हुई ही नहीं।"

"हां-हां क्यों नहीं मिस सरोज!" आंखें मटकाकर मंत्री जी बोले,

"अपना घर मानकर ही तो मैं चला आता हूं। इस बार एक बहुत ही बड़ा आन्दोलन प्रारंभ किया है मैंने।" गर्व के साथ मंत्री जी बोले।

"आपने !" मुस्कराकर सरोज ने पूछा, "आपका आन्दोलन अवश्य सफल होगा मंत्री जी ! कोई शक्ति नहीं जो आपके आन्दोलन को असफल बना सके। आपका वेश्या-संबंधी आन्दोलन कितना सफल रहा !" मंत्री जी का उनके प्राचीन आन्दोलन की सफलता के इतिहास पर ध्यान आकर्षित करते हुए सरोज ने कहा।

"फिर ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश की ओर मुख करके बोली, "ब्रह्मचारी ! मंत्री जी देहली की प्रगति के प्राण हैं—इससे अधिक मैं आपका परिचय इस समय कुछ नहीं दे सकती। समय आपकी योग्यता को स्वयं प्रमाणित करेगा। कांग्रेस सरकार ने सख्त गलती की जो ऐसे कर्मठ व्यक्ति के गुणों को नहीं परखा। यदि कोई अन्य सरकार होती तो निश्चित रूप से आपका स्थान मंत्रिमंडल में कहीं होता। अंग्रेजी सरकार आपका लोहा मानती थी।"

पिछले दिन मंत्री जी कैनाट प्लेस पर 'हिंदू कोड बिल विरोधक मंडल' की आयोजित सभा का सब प्रबंध करके संध्या समय इसलिए गोल हो गये थे कि सभा समाप्त होने पर दरी वाले, तख्त वाले तथा लाउडस्पीकर वालों के पेमेंटों से छुटकारा मिल जाय।

मंत्री संकटानंद की पर्ची पर यह सब सामान उधार चला आता था, परंतु इन दिनों उनकी जेब खाली थी। बाजार में इस समय वह सबका भुगतान करते हुए आ रहे थे। मंत्री जी व्यवहार में हीरा थे। इनके यहां देर थी, अंधेर नहीं। नई सड़क पर बनारसी पान वाले की दुकान पर पान खाकर दस बारह पानों के बीड़े सरोज के लिए बनवाये थे। पान के बीड़े सरोज को पेश करते हुए मंत्री जी बोले, "ये लीजिए मिस सरोज ! ये पानों के बीड़े लाया था आपके लिये सो मैं देना ही भूला जा रहा था।" और इतना कह कर मुस्कुराते हुए मंत्री जी ने दस-बारह बनारसी पानों की पुड़िया बीच में पड़ी मेज पर रख दी।

"यह तो व्यर्थ ही कष्ट किया आपने; परंतु हां, आपने आन्दोलन के विषय में कुछ नहीं बताया ?" सरोज ने उत्सुकतापूर्वक पूछा।

"अभी बतलाता हूं मिस सरोज ! इसमें जल्दी की क्या बात है ? अब

पैसा ठनाठन बरसेगा ठनाठन। एक बार फिर यहां सन् ४२ वाला जमाना आयेगा मिस सरोज ! जब रुपया पानी की तरह बहा था। आंख के अंधे और गांठ के पूरों की दुनिया में कमी नहीं है। बस कमी तो मिस सरोज ! मुहूर्त के अच्छे और बुरे होने की है। सन् ४२ में जो यज्ञ किया था उसको नहीं कहोगी मिस सरोज ! पैसा आकर स्वयं पैर चूमता था। बड़े-बड़े सेठ और सेठानियां पीछे-पीछे फिरती थीं।" गर्व के साथ अपने धूल भरे गोल काले पैरों को मखमली कालीन पर जोर से थपकते हुए मंत्री जी बोले। "इन्हीं पैरों पर अनेकों माथों की बिंदियां पुछ-पुछ कर गिर चुकी हैं मिस सरोज !" और गर्व के साथ मंत्री जी के सीने में कई इंच का उभार आ गया।

"क्यों नहीं ? मैंने क्यों नहीं ? मैंने क्या कुछ नहीं देखा है मंत्री जी ! इन आंखों ने तो आपकी कार्यकुशलता को हर प्रकार से देखा है।" गंभीरतापूर्वक सरोज बोली।

ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश मंत्री जी को देखकर पढ़ने का प्रयत्न कर रहा था परंतु इस व्यक्ति को यों ही पढ़ लेना इतना सरल कार्य नहीं था। मानो चाणक्य की कुटिलता की साक्षात प्रतिमा थी। उनकी विलक्षणता का लोहा माने बिना ब्रह्मचारी नहीं रह सकता था। मंत्री जी की मुखाकृति में, प्रत्येक संकेत में, नयनों की तीव्र ज्योति में, हाथों की लचक में और तमाम शरीर की फुदकन में एक ऐसा विचित्र आकर्षण था कि ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश उन्हें वकील साहब की भांति केवल उपहास मात्र की सामग्री नहीं समझ सकता था।

"सब बातों से पूर्व मैं आपसे मिस सरोज ! एक बात की क्षमा मांग लेता हूँ," गंभीरतापूर्वक मंत्री जी बोले, "और मैं उसी के लिए विशेष रूप से इस समय यहां आया हूं। कार्य-व्यस्तता के कारण आजकल अवकाश नहीं मिलता।"

"क्षमा !" आश्चर्यपूर्वक सरोज ने कहा।

"हां क्षमा ! और वह क्षमा मैं आपसे अपनी त्रुटि की नहीं, स्वामी ज्ञानानंद की त्रुटि की मांग रहा हूं।" गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

"स्वामी ज्ञानानंद की त्रुटि की ?" आश्चर्य से इतना कहकर सरोज तुरंत एक क्षण में 'हिंदू कोड बिल विरोधक मंडल' का आन्दोलन-कार्यक्रम समझ गई और मुस्कुराती हुई बोली, "तो यों कहिये कि इस 'हिंदू कोड बिल विरोधक मंडल' के जन्मदाता आप ही हैं और यह आन्दोलन आपने ही खड़ा किया है।

में भी तो सोच रही थी कि इतना शक्तिशाली आन्दोलन दिल्ली में और कौन खड़ा कर सकता है ?" मंत्री जी की प्रशंसा के स्वर में मुस्कुराकर सरोज बोली। "आपकी सूझ-बूझ वास्तव में सराहनीय है मंत्री जी ! मैं कहती हूं आन्दोलन में मैदान अवश्य आपके हाथ रहेगा।"

"सब आपका ही प्रताप है मिस सरोज ! मैदान-वैदान हाथ रहे या न रहे, परन्तु नक़द-नारायण की कमी नहीं रहेगी। इधर कुछ दिनों से पैसे के अभाव ने कमर तोड़ डाली मिस सरोज ! जो अपने बहुत प्रिय थे वे भी मुझे ठग समझने लगे। संसार क्या है यह मैंने रुपये के इस अभावकाल में अनुभव किया। खैर, पारखियों की भी संसार में कमी नहीं है। तुम्हारे उस दिन के उन पच्चीस रुपयों ने सच जानो मिस सरोज ! पच्चीस हजार का काम दिया। परन्तु हां, क्या मैं अब आशा करूं कि आपने मुझे क्षमा कर दिया ?" एक दम बात का रुख बदलकर प्रश्नवाचक दृष्टि से मंत्री जी ने सरोज के मुख पर देखा।

"आप इस प्रकार की बातें न किया करें मंत्री जी ! आपके लिए तो प्राण भी हाजिर हैं।" सरोज ने मुस्कुराकर कहा।

"इस बार भी पौबारे होंगे मिस सरोज ! यदि भगवान ने साथ दिया तो" पोर्टफोलियो बगल में दबाकर उठते हुए मंत्री जी बोले 'अब आज्ञा दो मिस सरोज ! आज केवल यही कष्ट देना था आपको।" मंत्री जी उठकर चल दिये ब्रह्मचारी की ओर उनका ध्यान भी नहीं गया।

"बस !" नेत्रों की पुतलियों को वक्र करके सरोज बोली, "सुल्फई यार किसके, दम लगाया खिसके। यही बात है मंत्री जी ! परंतु एक बात तो आपने बताई नहीं कि अब आन्दोलन का क्या रूप होगा और उसे किस-किस धारा में प्रवाहित होना है ?"

"यह अभी न पूछिये मिस सरोज ! आन्दोलन बड़ा गम्भीर है। इस बार वेश्याओं के चावड़ी बाजार से बाहर निकाल फेंकने की समस्या नहीं है, इस बार देश की संस्कृति और सभ्यता का प्रश्न है; महान उत्तरदायित्व है और महान कार्य है। आपके सहयोग की मैं आशा रखूंगा।" मंत्री जी गम्भीरता-पूर्वक बोले।

"अवश्य ! क्यों नहीं।" सरोज ने मुस्कुराकर कहा और मंत्री जी प्रसन्नता

पूर्वक बिदा हो गये।

मंत्री जी के चले जाने पर ब्रह्मचारी बोला, 'यह मंत्री जी ने क्या कहा और आपने क्या उत्तर दिया मैं तो कुछ भी नहीं समझ पाया।" ब्रह्मचारी इस समय मंत्रमुग्ध-सा सरोज के मुखमंडल पर निहार रहा था।

"अभी तुम समझने का प्रयत्न न करो ब्रह्मचारी। सांसारिक व्यवहार के गूढ़ प्रश्नों को दो दिन का बालक क्या जान सकता है ? तुम्हारा संसार में जन्म हुए केवल दो तो दिन हुए हैं। अभी मस्तिष्क पर अधिक जोर न दो। केवल इतना ही समझ लो कि संसार में सब का मन रखने के लिए किसी को किसी काम के लिए मना नहीं करना चाहिए।" इतना कह कर सरोज मुस्कुरा दी और ब्रह्मचारी मुस्कुराने का प्रयास करने पर भी मुस्कुरा न सका।

: १० :

मंत्री संकटानन्द बहुत व्यस्त थे। उन्हें दैनिक पत्र प्रकाशित करना था जिसके द्वारा वह अपने आन्दोलन के विरोधियों को मुंह तोड़ उत्तर दे सकें।

मंत्री जी एक २२×३६ साइज की सिलेंडर मशीन मोल लेने के फिराक़ में थे। काफी खोज के पश्चात एक मशीन का सौदा चार हजार दो सौ रुपये में हुआ और मशीन वालों से यह ठहरा कि उन्हें सात हजार दो सौ रुपये की रसीद बनानी होगी।

आज सुबह पांच हजार रुपये लेकर मंत्री जी निकले और मशीन खरीद कर उसे ठेले पर लदवा दिया। मूलचन्द जी ठेले के साथ थे और मशीन खरीदने की शुभ सूचना लेकर वह स्वयं स्वामी ज्ञानानन्द के पास चल दिये।

इस समय मंत्री जी के सीने में कई उभार थे और कभी-कभी वह अपनी झींगुर जैसी मूंछों को तिड़काकर उन पर हाथ फेर लेते थे। यह मशीन एक गली के अन्दर वाले प्रेस से मोल ली थी। गली के बाहर निकलते ही बनारसी पान वाले की दुकान थी। दिल्ली के प्रायः सभी बनारसी पान वालों से मंत्री जी का हिसाब चलता था। आज मंत्री जी ने सबका हिसाब चुकता कर दिया। पान वाले के हाथ में एक दस का नोट थमा कर कहा, "बढ़िया बीड़ा बना डालो।"

पानवाला समझ गया कि आज मंत्री जी कुछ गहरे में हैं और पान का बीड़ा मंत्री जी के हाथ में देते हुए बोला, "क्या वापस भी लोगे मंत्री जी ? आपके हिसाब में जमा कर लूंगा। कुछ जरूरत सी है आज।"

मंत्री जी अपनी मौज के धनी थे। पानवाला जानता था। फिर छः छः महीने बाद भी तो हिसाब पानवाला ही लेता था। क्या हुआ जो आज दो चार रुपये अधिक ही चले आये।

"तब फिर क्या हुआ ?" गर्व के साथ मंत्री जी एक पांच का नोट और जेब से निकालते हुए बोले, "लो और लो। यहां तो सब चलता ही है। पैसे को मैं आनी-जानी चीज समझता हूं। इसका मोह ही क्या करना ?" और एक पांच का नोट पनवाड़ी के मना करने पर भी उसके हाथों में थमा दिया।

इसके पश्चात तम्बाकू वाला पान खाकर मस्त हाथी की तरह झूमते हुए मंत्री जी यमुना-तट की ओर चल पड़े।

स्वामी ज्ञानानन्द जी तख्त पर बैठे मंत्री जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। "भारत-मित्र" में उन्होंने जो कुछ पढ़ा था उससे उनके हृदय में जलन पैदा हो गई थी। सामने से मन्त्री जी को आते देखकर स्वामी जी के मुखमंडल पर प्रसन्नता छा गई और मंत्री जी ने गर्व के साथ स्वामी जी के सम्मुख नमस्कार करके आसन पर विराजते हुए सूचना दी, "मोर्चा मार लिया स्वामी जी! अब मैदान अपने हाथ रहेगा। मशीन खरीद कर ठेले पर लदवा दी है। बाबू मूलचन्द जी उसे लिवाकर ला रहे हैं।" और एक बार फिर अपना आसन बदल कर बैठते हुए एक पैर को दूसरे पर जमा लिया।

"अति सुन्दर! मुझे आप से यही आशा थी।"

स्वामी जी की बांछें खिल गईं। दिल्ली आकर जब से सरोज वाली मुठ-भेड़ हुई थी, केवल इसी समय स्वामी जी के गम्भीर मुख पर मुस्कुराहट आई स्वामी जी का मुखमंडल खिल उठा और उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो उनका दैनिक पत्र प्रकाशित होना प्रारम्भ हो गया और उन्होंने अपने विपक्षियों का मुंह-तोड़ उत्तर दे दिया।

मंत्री जी ने मशीन खरीदने के सब कागजात और रसीद निकालकर स्वामी जी के चरणों पर रख दिये।

स्वामी जी ने रसीद देखी तो वह सात हजार दो सौ रुपये की थी। आश्चर्य से पूछा, "परन्तु आप तो केवल पांच हजार रुपये ही लेकर गये थे मंत्री जी! शेष रुपये का क्या प्रबन्ध किया?"

"तब क्या हुआ स्वामी जी?" मुस्कुराकर मंत्री जी बोले, "मेरे पास पैसा न सही, बाजार में साख तो है। कल जल्से का सब प्रबन्ध आप जानते हैं बिना जेब में एक कौड़ी-पैसा हुए ही किया था। मैं कठिन-से-कठिन समय में भी साहस और धैर्य को हाथ से नहीं जाने देता और सच बात तो यह है कि जहां साहस और धैर्य होता है वहां ईश्वरीय शक्ति काम करती है। भगवान आपसे आप सहायता करते हैं।" कह कर गम्भीर मुद्रा बनाते हुए मंत्री जी ने आकाश की ओर थूथड़ी उठाकर नेत्र बन्द करते हुए अपने दोनों कर कमल जोड़ दिये और एक क्षण इसी मुद्रा में बैठे रहे।

'इसमें कोई संदेह नहीं मंत्री जी ?" स्वामी जी अपनी सेठ गूदड़मल वाली घटना को स्मरण करके बोले।

"आप जानते हैं कि मैं लगन का कितना पक्का आदमी हूं ? जब से आपने दैनिक पत्र का प्रस्ताव मेरे सामने रखा है तब से मशीन की खोज करना, टाइप वालों के पास जाना, संपादकों से मिलना, कम्पोजीटरों का प्रबन्ध करना, अखबार बेचने वाले हॉकरों को संगठित करना, डिक्लेरेशन फाइल करना, कागजी के पास जाना, विज्ञापनदाताओं की लिस्ट बनाना — आप नहीं जानते स्वामी जी कितने काम पत्र-संचालन के लिए मुझे करने पड़े हैं।" गम्भीरतापूर्वक मंत्री जी कह कर मुस्करा दिये ।

स्वामी जी ने कामों की इतनी लम्बी सूची सुनकर कार्य के महत्व को समझा और मंत्री जी की कार्य-कुशलता और संलग्नता की सराहना करते हुए दो हजार दो सौ रुपये निकालकर मंत्री जी को देकर बोले, "ये लीजिये मंत्री जी ! मशीन का चुकता हिसाब कर आइये। रुपये की अपने पास कमी नहीं है। भगवान सब देगा। जब है तो क्यों किसी का उधार किया जाय ?"

दो हजार दो सौ रुपये हाथ में लेकर मंत्री जी मुस्कराए और फिर उनमें से एक हजार रुपये के नोट गिनकर वापिस करते हुए बोले, "ये लीजिए एक हजार रुपया। एक हजार रुपया मैंने आपके पत्र के लिए उसी देवी से दान स्वरूप लिया है जिससे आपकी मुठभेड़ हुई थी।"

इतना कहकर अपनी कार्य-कुशलता पर मंत्री जी स्वयं खिलखिलाकर हंस पड़े। मंत्री जी के इस हंसने में क्या रहस्य था, यह समझना कठिन था परन्तु स्वामी जी उससे प्रभावित हुए बिना न रह सके।

"सरोज से ?" आश्चर्य के साथ स्वामी जी ने पूछा।

"हां हां सरोज से। इन औरतों की अक्ल गुद्दी के पीछे होती है। अकड़ कर आपने उससे कल अपना अपमान करा लिया और प्रशंसा करके आज मैं उससे आपके ही पत्र के लिए एक हजार रुपया ऐंठ लाया। कहिये कैसी रही ? कार्य-कुशलता से काम लेना होगा स्वामी जी ! संसार के व्यवहार-क्षेत्र में हम राजनीति में हस्तक्षेप करने चले हैं तो कोरी रूढ़िवादी नीति से ही काम नहीं चलेगा।" मंत्री जी ने कहा और गर्व के साथ दो तीन बार अपने मोटे-मोटे नथुनों को फुलाकर सांस इतने जोर से छोड़ा कि मूंछ के

बाल आंधी में झुंडों की तरह हिल उठे।

स्वामी ज्ञानानन्द ने मंत्री जी के वाक्यों को जब बुद्धि की तराजू पर तोला तो मंत्री जी के वाक्य नपे-तुले और व्यवहारिक क्षेत्र में बहुत प्रगतिवादी प्रतीत हुए। "तब फिर हम अपना दैनिक पत्र कब तक प्रकाशित कर सकेंगे मंत्री जी ?" स्वामी जी ने पूछा। "एक सप्ताह के अन्दर," गर्व के साथ मंत्री जी ने अपना आसन बदलते हुए कहा। "मुझे अभी-अभी एक मशीन मैन की खोज में जाना है जो आकर मशीन की फिटिंग करेगा। मूलचन्द जी मशीन का ठेला लेकर आते ही होंगे। एक तरफ सुरक्षा के साथ मशीन को उतरवा लीजिए। कोई पुर्ज़ा गिर कर टूटने न पाये" इतना कहकर मंत्री जी अपना पोर्टफोलियो बगल में दबाकर खड़े हो गये।

"आप जाइए ! यह सब मैं करा लूंगा" स्वामी जी ने खड़े होकर मंत्री जी के कार्य में हाथ बंटाते हुए कहा और मंत्री जी अपनी जेब से पान का बीड़ा निकाल दाढ़ में दबा कर शहर की तरफ मस्तानी चाल से झूमते हुए चल दिये।

मंत्री जी को यहां से गये कुछ अधिक समय नहीं हुआ था कि वकील साहब आते हुए दिखाई दिये। वह दूर से ही अपना चश्मा उतार कर रुमाल से साफ करते हुए चले आ रहे थे। वकील साहब का वही पुराना सूट था जिस पर कई जगह छोटी-छोटी पैबंदें लगी हुई थीं और जिसे उतार फेंकने के लिए उनकी स्त्री बेला को एक बार एक दिन का उपवास भी करना पड़ा था परन्तु सफलता अंत में वकील साहब को ही मिली। वह अपनी जिद पर पत्थर की शिला की भांति अटल रहे परन्तु इतना वचन उन्हें बेला को अवश्य देना पड़ा कि जब वह बेला के साथ कहीं घूमने जायेंगे तो उस कोट को नहीं पहन सकेंगे। वकील साहब ने सामने आकर स्वामी जी को सादर नमस्कार किया। और फिर बोले, "कहिए किस चिन्ता में घूम रहे हैं स्वामी जी ?"

"चिन्ता !" आश्चर्यजनक मुस्कान के साथ गर्व से स्वामी जी बोले, "यदि चिन्ता ही करनी होती वकील साहब ! तो ये भिगवाँ वस्त्र न पहनते। आप अंग्रेजी रंग में रंग कर प्राचीन गौरव और संस्कृति से अनभिज्ञ हो गये हैं। एक संन्यासी से आप चिन्ता की बातें करते हैं।" और इतना कहते हुए एक गहरी श्वास लेकर स्वामी जी ने गर्व से अपना सीना उभारते हुए मस्तक ऊपर को

उठा लिया।

मंत्री जी ने उन्हें सरोज के मुकदमे वाले भय से मुक्त कर दिया था। इसलिए वकील साहब अब उनके सम्मुख केवल उपहास की सामग्री मात्र थे।

"परन्तु मैं तो आपको एक शुभ सूचना देने के लिए आया हूं।" वकील साहब ने स्वामी जी की बात पर ध्यान न देकर अपनी धुन में मुस्कुराते हुए कहा।

"अवश्य दीजिए शुभ सूचना।" व्यंग्य के साथ स्वामी जी बोले। "सरोज ने स्वामी ज्ञानानन्द के विरुद्ध मान-हानि का दावा कर दिया, यही शुभ सूचना है न आपकी ?" ज्ञानानन्द बोले।

"जी नहीं ! आप व्यर्थ मुझ पर क्रुद्ध हो रहे हैं। कल आपके चले आने पर मेरी धर्मपत्नी ने मुझे बहुत फटकारें बतलाकर लानतें-मलामतें दीं। बुरा भला कहा। वह बोलीं कि एक वेश्या-पुत्री चाहे लाख रुपया भी क्यों न दे परन्तु स्वामी ज्ञानानन्द के विरुद्ध अदालत में न जाना। मेरी धर्मपत्नी ने उस समय तक भोजन नहीं किया जब तक कि मैंने उसे यह लिखकर नहीं दिया कि मैं सरोज का पक्ष लेकर अदालत में नहीं जाऊंगा।"

स्वामी जी के नेत्रों में इस समय अपने दैनिक पत्र का स्वप्न झूल रहा था। वह देख रहे थे शहर से आने वाली सड़क पर किस प्रकार मूलचन्द के संरक्षण में ठेला सिलेंडर मशीन को लिए खड़-खड़ करता उनकी कुटिया की ओर चला आ रहा होगा। उन्होंने वकील साहब की बात अनसुनी करके कहा, "चलो अच्छा हुआ। आप से आपकी धर्मपत्नी ही चतुर निकलीं। मेरे विचार से अब आपको गृह-कार्य स्वयं संभाल कर बाहर का कार्य अपनी धर्मपत्नी के सुपुर्द कर देना चाहिए।"

यह बात स्वामी जी ने साधारण सरल स्वभाव में कही, परन्तु वकील साहब को इसमें गंभीर व्यंग्य की बू आई।

"आप मुझ से कुछ नाराज मालूम देते हैं स्वामी जी !" वकील साहब ने तनिक दीन होकर कहा।

"नहीं वकील साहब ! नहीं ! आप भ्रम में हैं। प्रथम तो आपने संन्यासी से रुपया ऐंठने की बात सोची। यह आपका भ्रम था। फिर आप यह समझ रहे हैं कि मैं आप से नाराज हूं। यह भी आपका भ्रम है। आप शायद यह

समझते होंगे कि मैं सरोज या ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश पर नाराज हूं। यह भी आपका भ्रम ही है। आप वकील हैं और कानूनी तर्क करने में दक्ष हैं परन्तु आपका कानून हमारे आध्यात्मिक क्षेत्र में नहीं चलता।

हमारे आदर्श अटल हैं, हमारे विचार अटल हैं, हमारे संकल्प दृढ हैं। हम परिवर्तनशील नहीं। जिस प्रकार ईश्वर के स्वरूप में अंतर नहीं आता उसी प्रकार हमारे सिद्धांतों में भी परिवर्तन नहीं हो सकता।" स्वामी ज्ञानानन्द ने कहा।

वकील साहब को स्वामी जी से बात करके आज ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों वह किसी अथाह समुद्र के सम्मुख खड़े हैं और जहां तक उनकी दृष्टि जाती है उन्हें सागर-ही-सागर दिखाई देता है। फिर उन्हें अपने कल के व्यवहार पर लज्जा आई। स्वामी जी से वह आज की ही भांति अनेकों बार प्रभावित हुए थे, परन्तु सरोज का संध्या का निमन्त्रण उन्हें भूला नहीं था।

यह इन्हीं विचारों में निमग्न थे कि इसी समय एक ठेले की खड़खड़ाहट सुनाई दी। स्वामी जी ने आगे बढ़ कर देखा तो मूलचन्द ठेले पर लदी मशीन को लिवा कर ला रहे थे। स्वामी जी हृदय के भाव को न रोक सके और वकील साहब को पीछे छोड़ कर मशीन के स्वागत के लिए मुंह पर मुस्कुराहट लिए प्रसन्नतापूर्वक आगे बढ़ गये।

ठेले को उधर आता देखकर वकील साहब को समझने में देर न लगी कि यह छापेखाने की मशीन है और वह समझ गये कि अवश्य कोई बड़ी योजना इस समय स्वामी जी के मस्तिष्क में है।

ठेला स्वामी जी की कुटिया के सम्मुख आकर खड़ा हो गया। मूलचन्द जी संलग्नता के साथ मजदूरों से मशीन उतरवाने लगे। स्वामी जी ने ठेले के चारों ओर घूमकर मशीन का निरीक्षण किया और फिर ठेले से पीछे हट कर खड़े हो गए।

वकील साहब तनिक और आगे बढ़ कर स्वामी जी के पास तक पहुंच गए और बहुत गम्भीर मुद्रा बनाकर बोले, "क्या किसी छापेखाने का आयोजन किया जा रहा है?"

"किसी छापेखाने से आपका क्या मतलब? दैनिक पत्र का आयोजन हो रहा है। धर्म की रक्षा के लिए धर्म-रक्षकों को सतर्क होना होगा। आज इस

विज्ञापन के युग में हमने यही विचारा है कि शांत रहने से काम नहीं चलेगा। पाखण्डियों को मुंह-तोड़ उत्तर दिया जाएगा। धार्मिक जनों का संगठन करके धर्म-विरोधियों से मोर्चा लेना होगा।

इस सप्ताह में यह पत्र यहां से प्रकाशित करके हम भारत के सभी केन्द्रों का दौरा करेंगे और सब जगहों से पृथक-पृथक दैनिक पत्रों का प्रकाशन किया जायगा। यह पत्र हमारे 'हिन्दू कोड बिल विरोधक मण्डल' के आन्दोलन को बल प्रदान करेंगे" गाम्भीर्य के साथ स्वामी जी ने कहा।

"आयोजन तो बहुत व्यापक और सुन्दर है" सराहना करते हुए वकील साहब बोले। वकील साहब को ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो भारत के सभी केन्द्रों से स्वामी जी के दैनिक पत्र प्रकाशित होने प्रारम्भ हो गये।

इस समय उन्होंने अपनी संकुचित विचारशीलता को मन में कोसा कि क्यों उन्होंने गत रात्रि को स्वामी जी जैसे महत्वपूर्ण व्यक्ति से जरा सी बात पर मतभेद कर लिया। वह कह उठे, "मशीन तो लाजवाब प्रतीत होती है, स्वामी जी !"

"अवश्य-अवश्य !" स्वामी जी प्रशंसा सुनकर बोले। "जिस व्यक्ति ने इस मशीन को पसन्द किया है वह बहुत योग्य व्यक्ति है, वकील साहब !'

"क्यों नहीं ? फिर आप तो व्यक्ति को छांटने में अपना सानी नहीं रखते। मशीन वास्तव में जबरदस्त है।" वकील साहब ने पहली बात को दृढ़ करते हुए कहा "क्या कहने हैं मशीन के !"

यह बातें चल ही रही थीं कि इसी समय मंत्री जी सरदार ऊधमसिंह को साथ लेकर आते दिखाई दिए। मन्त्री जी ने दूर से ही संकेत द्वारा सरदार जी को मशीन दिखाई और फिर पास आकर सरदार जी का स्वामी जी को परिचय कराते हुए बोले, "आप दिल्ली के सबसे प्रसिद्ध मशीनों के फिटर हैं। कल से आपकी तलाश में था। मैंने सरदार जी को बतला दिया है कि यह धर्म-कार्य है, व्यापार नहीं। वैसे यह मशीन फिट करने के ५००) लेते हैं परन्तु हमसे केवल ४००) ही लेंगे।" और फिर गर्व के साथ सरदार ऊधमसिंह को उन्होंने मशीन दिखलाई।

सरदार जी ने आगे बढ़कर स्वामी जी को 'सत् श्री अकाल' झुकाया और फिर मशीन के पुर्जों को इस प्रकार छू-छू कर देखा जिस प्रकार कसाई किसी

बकरे को मोल लेते समय उसकी बोटियों को दबा-दबाकर देखता है। सरदार जी ने दो-चार कील-कांटे देखकर जरा अपने हाथ काले किए और फिर मुस्कुराकर स्वामी जी की ओर मुख करते हुए बोले, "स्वामी जी ! लाजवाब चीज हाथ लगी है। मैं कहता हूं कौड़ियों के दाम मिली है, कौड़ियों के दाम। यदि एक हजार के लाभ से आप बेचना चाहें तो मेरे पास ग्राहक है, आज ही बात करा सकता हूं।"

स्वामी जी का मन बांसों उछलने लगा। वकील साहब एक क़दम आगे बढ़कर बोल उठे, "मैंने क्या कहा था अभी-अभी आप से ? लाजवाब सौदा है लाजवाब !

मंत्री जी गंभीर मुद्रा बनाये अपने सौदे की कुशलता पर मन-ही-मन लड्डू फोड़ रहे थे।

स्वामी जी एक क्षण मौन रह कर गंभीरतापूर्वक बोले, "मशीन फिट कीजिये सरदार जी। हमने मशीन लाभ लेकर बेचने के लिए नहीं ली है। हमने इसे किसी महान् उद्देश्य की पूर्ति के लिए ली है।" सरदार जी से २५०) एडवांस की रसीद मंत्री जी ने बनवाली थी। अपने कमीशन की रकम को कल पर छोड़ना मंत्री जी ने नहीं सीखा था। सरदार जी को भी इसमें कोई एतराज नहीं हुआ क्योंकि २५०) की रसीद देकर ५०) नकद उन्हें भी मिल गये। जब मंत्री जी ने सुना कि वकील साहब पहले से ही मशीन की प्रशंसा कर रहे हैं तो मंत्री जी का व्यवहार वकील साहब के प्रति बहुत शिष्टतापूर्ण हुआ।

स्वामी जी ने भी मंत्री जी से उनका परिचय अपने एक अभिन्न भक्त के रूप में कराया। आज प्रथम बार मंत्री जी का वकील साहब से परिचय हुआ और मंत्री जी ने तुरंत अपने मन में विचार कर लिया कि वह इस मोहरे का अपने शतरंज के खेल में कहां प्रयोग कर सकते हैं ?

: ११ :

सरोज आज बहुत प्रसन्न थी। ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश अकेले बाहर बागीचे में घूम रहे थे और सरोज अपनी बैठक में बैठी कुछ गुनगुना रही थी। यह सरोज का बंगला भी था और आफिस भी। जिस प्रकार डाक्टर की, वकील की, वैद्य की, चार्टर्ड एकाउंटेंट की, ज्योतिषियों की प्रैक्टिस चलती है उसी प्रकार सरोज की भी प्रैक्टिस थी।

ये सभी लोग अपनी विद्या से अपना व्यापार और अपनी जीविका चलाते हैं। उसी प्रकार सरोज भी अपनी विद्या का प्रयोग करती थी। सरोज के अपने कुछ नियम थे और उन्हीं के आधार पर वह जीवन में चलती थी। उसकी फीस बहुत बड़ी थी अथवा कुछ होती ही नहीं थी। सप्ताह में एक बार उसको अपनी कोठी पर ही मुजरा होता था, जिसका वह बाकायदा टिकट लगाती थी। मुजरे के मध्य में किसी दर्शक को उपहार स्वरूप कुछ भेंट करने की आज्ञा नहीं थी। ऐसा करने पर सरोज ने एक दिन एक एम० एल० ए० और एक राजा साहब को सख्ती के साथ मुजरे से बाहर निकलवा दिया था।

दिल्ली के कलाकारों का यह एक बड़ा केन्द्र था और उनका विशेष सम्मान यहां पर होता था। कलाकारों का यहां आना ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को भी बहुत प्रिय हो गया था। एक बार बचपन में ब्रह्मचारी का रुझान संगीत की ओर हुआ था परंतु समुचित सहयोग न मिलने पर ब्रह्मचारी का वह भावना वहीं पर दब कर रह गई। अब सरोज के सम्पर्क में आकर वह आपसे आप प्रस्फुटित होती जा रही थी। ब्रह्मचारी एकांत में कभी-कभी कुछ गुनगुनाया करता था। ब्रह्मचारी के गले मे एक लोच थी, इसका अनुभव सरोज ने भी कई बार किया था परन्तु ब्रह्मचारी से संगीत-विद्या सीखने के लिए कहने का उसमें साहस नहीं होता था। पांच बजे सरोज का आफिस टाइम समाप्त हो गया।

गर्मियों के दिन थे। कोठी के सामने लॉन में माली ने कुर्सियां डाल दी थीं और खड़ा होने वाला बिजली का पंखा फिट कर दिया था। ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश इधर-उधर फूलों की क्यारियों पर उड़ने वाली तितलियों को देख

कर मन बहला रहे थे।

सरोज बैठक से बाहर निकली और लॉन में आते हुए मुस्कान भरी दृष्टि ब्रह्मचारी पर फेंक कर बोली, "क्या तितलियों से खेल रहे हैं ब्रह्मचारी ?"

"खेल नहीं रहा सरोज !" अब सरोज के विशेष आग्रह पर ब्रह्मचारी ने सरोज को सरोज नाम से संबोधित करना प्रारम्भ कर दिया था और 'आप' के स्थान पर 'तुम' का ही प्रयोग होने लगा था। "तितलियों के सौंदर्य को देख रहा हूं। इनका मिलान जब मैं कनॉट प्लेस पर घूमनेवाली बालिकाओं से करके देखता हूं तो मुझे उनमें वह सजीवता नहीं मिलती जो इनमें है।" सरलता से ब्रह्मचारी ने कहा।

सरोज खिलखिलाकर हंस पड़ी और फिर ब्रह्मचारी का हाथ पकड़कर उसे लॉन में पड़ी कुर्सियों की तरफ ले जाते हुए मुस्कराकर बोली, "जब तक मैं आफिस का कार्य समाप्त करके आती हूं तब तक तुम अवश्य कोई ऐसी समस्या खड़ी कर लेते हो जिसमें मुझे उलझ जाना पड़ता है। मतलब यह है कि तुम मुझे चैन नहीं लेने देते।"

दोनों लॉन में सामने पड़ी कुर्सियों पर बैठ गए।

"नहीं नहीं सरोज ! तुम परेशान न हो। यह समस्या कुछ....."

"नहीं क्यों ब्रह्मचारी ! मैं अब इसका उत्तर अवश्य दूंगी।" सरोज बोली। "कनॉट प्लेस पर घूमने वाली बालिकाओं में तितली जैसी सजीवता खोजना चाहते हो ब्रह्मचारी ! तो तितली जैसी स्वतन्त्रता भी तो उन्हें प्रदान करो। तुम्हारा समाज, तुम्हारा धर्म, तुम्हारी जातियां और न जाने कितने जंजाल हैं जिन्होंने उन बालिकाओं के पर कैंच किये हुए हैं।"

"मैं ऐसा नहीं मानता सरोज !" ब्रह्मचारी सरलतापूर्वक बोला।

"तुम क्या मानते हो ब्रह्मचारी ?" सरोज ने प्रश्नवाचक दृष्टि से पूछा।

"जिन बालिकाओं के विषय में मैं कह रहा हूं वे समाज, धर्म और जाति के बन्धनों से मुक्त हैं। यह मुक्ति उन्होंने स्वयं अपने संघर्षों द्वारा प्राप्त की है, किसी ने दान स्वरूप नहीं दी—इसीलिए उनमें कुछ निर्भीकता है, बल है। परन्तु उस बल और निर्भीकता को लेकर वे गलत मार्ग पर चल पड़ी हैं।

नारी को प्रकृति से जीवन लेना है, रस लेना, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार यह तितलियां ले रही हैं सरोज ! परन्तु यह रस और यह जीवन भला

कागज और मिट्टी के फूलों में कहां मिलेगा ? इसके लिए तो प्रकृति की स्वच्छंद गोद में जाकर क्रीड़ा करनी होगी।" मुस्कराते हुए ब्रह्मचारी ने सरल भाव से कहा।

"तब क्या कनॉट प्लेस के लॉन, फूल-फुलवाड़ी, सुन्दर बाजार, सजे हुए होटल, कॉफी हाऊस, रेस्टोरां, बिलियर्ड रूम, इत्यादि का प्रकृति से कोई संबंध नहीं ?" सरोज ने पूछा।

"बिलकुल नहीं" ब्रह्मचारी ने दृढ़तापूर्वक कहा, "ये सब प्रकृति के विकृत चित्र मात्र हैं। संसार वासना-प्रधान बन चुका है सरोज! इस प्रवृति को रोकना यदि प्रगतिवाद के मार्ग में बाधा उपस्थित करेगा तो मुझे एक बार जीवन में इससे टक्कर लेनी होगी सरोज!" और इतना कहकर ब्रह्मचारी गंभीर हो गया।

सरोज इसका क्या उत्तर दे ? क्योंकि इसके उत्तर का अर्थ होगा ब्रह्मचारी से टक्कर और यह वह कर नहीं सकती। शांतिपूर्वक सुनने के पश्चात बात का विषय बदल देना ही उसने उचित समझा और भाग्यवश उसे मंत्री संकटानंद आते दिखाई दिये। उन्हें देखकर सरोज ने ब्रह्मचारी का हाथ दबाते हुए कहा, "मंत्री जी आ रहे हैं। इनसे स्वामी ज्ञानानंद का समाचार मिलेगा। इस व्यक्ति को भी आप काले विषधर के समान समझिए, जिसके काटे का कोई उपचार नहीं। परन्तु यह मणिधर नाग है—इतना ध्यान रहे।"

"सरोज ! मुझे तो भय मालूम देता है इस व्यक्ति से।" सरल स्वभाव से ब्रह्मचारी बोला।

सरोज मुस्करा दी। मंत्री जी निकट आ गये। सरोज ने खड़े होकर मंत्री जी का स्वागत किया और आज सरोज के खड़े होने पर ब्रह्मचारी भी खड़ा हो गया।

मंत्री जी यह देखकर मन-ही-मन कुप्पा हो गये और सरोज को भी लगा मानो ब्रह्मचारी कुछ व्यवहार-कुशल हो चला है। मंत्री जी अपनी चप्पलों को कुर्ते की जेब से खद्दर का रुमाल निकालकर झाड़ते हुए सरोज के पास वाली कुर्सी पर गंभीरतापूर्वक बैठ गये। आज मंत्री जी का पूरा लिबास खद्दर का देख कर सरोज मुस्कराते हुए बोली, "आज तो मंत्री जी नीचे से ऊपर तक खद्दर में है। क्या कोई नया गुल खिला है आज ?"

"आज क्या, अब तो नित्य नया गुल खिलेगा सरोज ! मुझे अब खद्दर-धारियों से टक्कर लेनी है। जहर को जहर मारता है सरोज !" गंभीरता-पूर्वक मंत्री जी बोले।

मंत्री जो 'हिंदू कोड बिल विरोधक मंडल' की १०००) की रसीद निकाल कर सरोज को देते हुए बोले, "यह लीजिए मिस सरोज ! रुपया मैंने आपका जमा कर दिया है।"

सरोज ने रसीद हाथ में ले ली और मुस्कराते हुए कहा, "कल पच्चीस रुपए लौटा कर आपने आज एक हजार की चपत लगा दी ? परन्तु देना यह आपको ही है। मैं तो बच्ची हूं आपकी।"

"देना नहीं मिस सरोज ! दे दिया इसकी तुमने क्या चिंता की ?"

इतना कहकर गर्व के साथ मंत्री जी ने अपने सिर हाथ फेरा। सरोज मंत्री जी की ही बच्ची है यह जानकर मंत्री जी का कलेजा बांसों उछल पड़ा। सरोज की एक-एक अदा पर हजारों रुपए न्यौछावर करने वाले मनचले युवक मंत्री जी ने न जाने कितने देखे थे। सरोज के सामने आकर मंत्री जी का स्वयं अपना भी पुराना मन कभी-कभी भावुक हो उठता था।

सरोज को आज तक मंत्री जी की बदौलत लाखों की आय हुई थी। इस लिए मंत्री जी के कहने पर एक हजार रुपये दे देना उसके लिए साधारण बात थी। फिर मंत्री जी ने कमीशन के नाम पर एक पैसे की याचना कभी नहीं की थी इसलिए इस प्रकार के जो भी चंदे सरोज को मंत्री जी के लिहाज में देने पड़ते थे उन्हें वह अपने कमीशन खाते में जमा कर इस चन्दे वाली परिपाटी से अपना काम चला लेते थे।

स्वामी ज्ञानानंद जी के विषय में बातचीत छिड़ी। मंत्री जी बोले, "उन्होंने यमुना किनारे अपनी कुटिया बनाली है और वहीं से 'सत्य-मार्ग' दैनिक पत्र निकलेगा। दैनिक पत्र का अपना छापाखाना लग चुका है, एक बड़ी जबरदस्त सिलेण्डर मशीन लगाई गई है। इस पत्र से हिंदू कोड बिल का खुल कर विरोध किया जायेगा। भारतीय संस्कृति की रक्षा का प्रश्न है। इसलिए हम तन-मन-धन से इस कार्य में जुट चुके हैं।

मैंने अपना सर्वस्व इस योजना के अर्पण कर दिया है। स्वामी जी एक सप्ताह दिल्ली में रहकर फिर भारत के अन्य केन्द्रों का भ्रमण करेंगे और उनका

विचार है कि इसी प्रकार के दैनिक पत्र भारत के अन्य केन्द्रों से भी प्रकाशित किए जायेंगे। हमें धर्म-निंदक और धर्म-विरोधी पत्रों का मुंह तोड़ उत्तर देना है। हम संघर्ष के लिए उद्यत हैं और अधर्म को इस कलयुगी बाढ़ को रोकने के लिये संघर्ष करेंगे।"

सरोज कभी-कभी सोचती थी कि मंत्री जी नाटक के कितने सजीव पात्र हैं ? यदि इतना सुदर अभिनय यह रंगमंच पर करें तो सफलता की पराकाष्ठा पर पहुँच जायें।

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश मंत्री जी का लोहा मान चुके थे। दो दिन की भेंट में ही वह मंत्री जी से इतने प्रभावित हुए कि उन्हें उनसे भय लगने लगा। मंत्री जी की किसी भी बात पर टीका-टिप्पणी करने का अर्थ वह अपने गले में एक मुसीबत फंसा लेना समझते थे और इसी लिए मौन बैठे-बैठे सब कुछ सुनते रहते थे। एक शब्द भी मुख से नहीं बोलते थे और जीवन में घटने वाली घटनाओं और आने वाले पात्रों का मौन निरीक्षण कर रहे थे।

आज सरोज ने मंत्री जी को कनॉट प्लेस वाली घटना सुना कर ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश का मंत्री जी से परिचय कराया।

मंत्री जी बोले "ब्रह्मचारी ! तुम वह भाग्य लेकर आये हो जो किसी राज-कुमार के लिए भी डाह का कारण बन सकता है।"

इतना कहकर उसी गंभीर मुद्रा से अपने एक पैर के घुटने पर दूसरे पैर की पिंडली रखते हुए मंत्री जी ने तीखी दृष्टि से ब्रह्मचारी के भयभीत मुख-मंडल पर देखा।

मंत्री जी के इस रिमार्क को सुनकर ब्रह्मचारी और भी सहम गया और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि बस, अब खैर नहीं है। उसे लगा कि बिल्ली अपने शिकार की ओर मूछों को तिड़काकर लपकना ही चाहती है। ब्रह्मचारी ने अपने नेत्र झांप कर मुंह नीचे को कर लिया।

सरोज ब्रह्मचारी की भयभीत दशा का अनुभव कर रही थी और मंत्री जी एक सफल योद्धा की भांति उत्साह के साथ बोले, "तुम्हारा यह संकोच ही तुम्हारा सबसे बड़ा गुण है, ब्रह्मचारी ! कल स्वामी ज्ञानानंद ने तुम्हारे गुणों की मुझसे बड़ी प्रशंसा की।" और यह कहकर मंत्री जी चुप हो गये।

मंत्री जी के इस वाक्य ने ब्रह्मचारी के मर्म-स्थल को छू दिया। ब्रह्मचारी

आनंदप्रकाश कुछ कहने के लिए, कुछ पूछने के लिए उत्सुक हो उठे।

इससे पूर्व कि ब्रह्मचारी कुछ पूछते सरोज मंत्री जी की कुटिलता को समझकर मुस्कुराती हुई बोली "क्यों ? क्या स्वामी जी को अपनी सेवा करने के लिए अभी तक ब्रह्मचारी जैसा कोई अन्य मूर्ख नहीं मिला है ? आपके पास तो ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारणियों की कमी नहीं है।" तीखे व्यंग्य के साथ सरोज ऊपर से मुस्कराकर बोली।

मंत्री जी सरोज के इस कठोर व्यंग्य को ताड़ कर तिलमिला उठे। उन्हें लगा मानो सरोज उनकी ही बिल्ली होकर आज उन्हे ही म्याऊँ कर रही है।

ब्रह्मचारी का स्वप्न भंग हो गया। उसने सरोज की चतुर बुद्धि और व्यवहार-प्रवीणता की सराहना की। वह ज़रा और संवर कर बैठ गया।

सरोज ने अब और अधिक मंत्री जी को यहां रोकना उचित नहीं समझा क्योंकि वह अभी ब्रह्मचारी को कच्चा समझती थी। उसने तुरंत अपने दीनानाथ पंडित को बुलवाकर अपना पर्स लाने के लिये कहा और उसमें से १०००) निकाल कर मंत्री जी को देती हुई बोली "ये लीजिए मंत्री जी।"

फिर सरोज ने अपनी कलाई पर घड़ी देखी और कह उठी "ओह ! साढ़े छः बज गये। वे बेचारे तो मेरी राह देख रहे होंगे।" और तुरंत बिजली की तरह खड़ी हो गई।

"मैंने तुम्हारा कोई प्रोग्राम तो खराब नहीं कर दिया सरोज !" रुपये हाथ में लेते हुए खड़े होकर मंत्री जी बोले। "और इन रुपयों की क्या आवश्यकता थी ? ये तो मैं तुम्हारे नाम से जमा कर चुका।"

"आपका और मेरा नाम दो नहीं है मंत्री जी !" मुस्कुराते हुए सरोज ने कहा। मत्री जी १०००) लेकर विदा हो गये।

मंत्री जी के चले जाने पर ब्रह्मचारी ने सरल स्वभाव से पूछा "क्या तुम्हें कहीं जाना है सरोज ?"

सरोज बैठती हुई खिलखिला कर हंस पड़ी। फिर जरा हंसी रोक कर बोली, "ब्रह्मचारी ! तुम बहुत सीधे हो सचमुच ? इन महाशय से पीछा जो छुड़ाना था। यदि मैं यह बहाना न करती तो मंत्री संकटानंद आज रात का भोजन किये बिना न टलते।"

ब्रह्मचारी समझ गया कि सरोज बहाना बनाने में बहुत चतुर है और

मुस्कुराकर बोला, "सरोज ! कुछ भी क्यों न हो इस व्यक्ति का रूप देखकर मेरे देवता कूच कर जाते हैं। मुझे तो यह साक्षात प्रेत का अवतार प्रतीत होता है। यह सब कुछ कर सकता है, कोई भी कार्य इसके लिए कठिन नहीं। आवश्यकता पड़ने पर यह खून भी कर सकता है सरोज !"

"खून !" सरोज काँपती हुई बोली, "यह तुम क्या कह रहे हो ब्रह्मचारी ?" सरोज का मुख एक दम गंम्भीर हो उठा और उसका तन थर-थर काँपने लगा। वह अचानक भयभीत हो गई।

"हाँ सरोज ! इस व्यक्ति के नेत्र, तुमने ध्यानपूर्वक नहीं देखे, ऐसे प्रतीत होते हैं मानो दो मशालें जल रही हों। काले विकराल रूप में मानव की एक ऐसी विडंबना छुपी है कि मुझे तो उसमें मानव जैसा कुछ दिखाई नहीं देता। इस व्यक्ति में स्वार्थ की मात्रा आवश्यकता से अधिक है। तुम इससे बचकर रहना सरोज !"

ब्रह्मचारी कह रहा था और सरोज अभिनयपूर्ण वेश धारण करके सुनते हुए ब्रह्मचारी के परीक्षण की सराहना कर रही थी।

सरोज वेश्या पुत्री थी। ऐसे न जाने कितने मंत्री उसकी रंगशाला में अपना अभिनय दिखाकर चले गये। परन्तु फिर भी वह ब्रह्मचारी की आज की बातों से प्रभावित न हुई हो ऐसी बात नहीं थी। मंत्री जी के विषय में वह पहले से ही सतर्क रहती थी। उसने उड़ती हुई अफवाह एक वेश्या के मुख से एक दिन सुनी थी कि उसकी माता को ज़हर देकर वह उसे रात को चुपके से निकाल लाया था।

सरोज को भी सामने रख कर कुछ दिन तक मंत्री जी ने खूब खाया-कमाया परंतु सरोज अधिक दिन मंत्री जी के हाथों का खिलौना बनकर न रह सकी। सरोज ने अपने को स्वतंत्र कर लिया और आज वह पूर्ण स्वतंत्र थी। उसका यह रहस्य केवल वही जानती थी।

: १२ :

ब्रह्मचारी चिंता निमग्न सा इधर-उधर घूमने लगा। सरोज उसी प्रकार बैठी थी कि सामने से वकील साहब आते दिखाई दिये। वकील साहब ने दूर से ही सरोज को देख कर तनिक अपनी पेंट की क्रीज़ ठीक की और आँखों से चश्मा उतार कर रूमाल से उसे साफ़ करते हुए फिर आंखों पर चढ़ा लिया। वकील साहब सीधे बैठक की तरफ़ गये और वहां दरबान के बतलाने पर लॉन की तरफ लौट पड़े।

सरोज ने वकील साहब को प्रेमपूर्वक कुर्सी पर बिठाया और मुस्कराकर बोली, "कहिए वकील साहब ! क्या विचार किया आपने हमारे केस के विषय में ? अब तो हमारा मत और भी दृढ़ हो गया है। 'भारत मित्र' दैनिक पत्र ने हमारी घटना को विशेष महत्व देकर मुख्य पृष्ठ पर छापा है। मैं समझती हूँ कि अब हमें अधिक गवाह भी पैदा करने की आवश्यकता नही रही। अपने कथन के समर्थन में हम अख़बार की प्रति अदालत के सामने रख सकते है।"

वकील साहब को देखकर ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश भी नमस्कार करता हुआ पास की कुर्सी पर आ बैठा और सोचा कि अब अवश्य कुछ दिलचस्प किस्सा छिड़ने वाला है। ब्रह्मचारी के मुख पर से मंत्री संकटानन्द की गहरी छाया जरा दूर हटी।

"मज़ाक करने के लिए भी आपको मैं ही मिला हूँ मिस सरोज !" वकील साहब चश्मे के ऊपर से झाँकते हुए बोले।

"क्यों !" आश्चर्य के साथ गम्भीर होकर आँखें मटकाती हुई सरोज बोली, "यह आपने क्या कहा वकील साहब ? आपसे और मज़ाक ! आपने भी ग़ज़ब कर दिया, हद कर दी, बस मैं यही कहूँगी। क्या मेरे और आपके संबंध मज़ाक के हैं ?"

"क्या आपने १०००) दान नहीं दिया 'हिन्दू कोड बिल विरोधक मंडल' को ?" गम्भीरता पूर्वक वकील साहब ने पूछा।

"दिया है। और अभी-अभी दिया है। मंत्री संकटानन्द जी लेकर गये हैं।" सरोज बोली ।

"तब फिर ! एक ओर तो आप उन्हें १००० रुपया दान दे रही हैं और दूसरी ओर····"

"क्या व्यर्थ की बातें करते हो वकील साहब ? दान देना पृथक बात है और अपमान सहना पृथक । और यह दान मैंने मंत्री संकटानंद को दिया है ज्ञानानंद को नहीं।" सरोज ने गम्भीरतापूर्वक कहा ।

"तब क्या आप वास्तव में केस दायर करना चाहती हैं ?" वकील साहब ने पूछा ।

"तब क्या मुझे व्यर्थ दिमाग-पच्ची करने में आनंद आता है ?" उसी प्रकार गभीरतापूर्वक सरोज ने अकड़कर कहा ।

वकील साहब के मन में एक बार फिर आशा की लहर दौड़ गई और वह आसन बदल कर कुर्सी पर बैठते हुए बोले, 'तब फिर आपको दृढ होकर केस की पैरवी करनी होगी मिस सरोज ! ऐसा न हो कि आप मेरा स्वामी ज्ञानानंद से व्यर्थ झगड़ा करा डालें और····"

"यह आपका व्यापार है । जो चार पैसे देगा उसी की हां-में-हां आपको मिलानी होगी । सही को गलत और गलत को सही कहना होगा । आपने ही तो उस दिन कहा था कि कानून बहुत एलास्टिक है इसे जिधर चाहो उधर खीच लो । बस वकील काबिल होना चाहिये । मैं अभी-अभी आपकी ही राह देख रही थी ।"

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश ने जो अभी तक गंभीरतापूर्वक ये बातें सुन रहे थे, अब कुछ विचार कर मुंह खोला और बोले—"वकील साहब ! क्या मैं भी स्वामी जी पर कोई मुकदमा चला सकता हूं ?"

"ऑफ कोर्स, ऑफ़ कोर्स ! क्यों नहीं ब्रह्मचारी ! तुम्हारे अधिकारों पर आघात किया है स्वामी ज्ञानानंद ने । सर्व अधिकारों से वंचित किया है तुम्हें।" इतना कह कर वकील साहब ने अपना चश्मा उतार कर फिर रूमाल से साफ किया और इधर-उधर गर्दन हिला कर बोले, "इस समय मैं अपने स्टडी रूम में नहीं बैठा हूं वरना कैलकटा हाईकोर्ट, लाहौर हाईकोर्ट, इलाहाबाद हाईकोर्ट और न जाने कहां-कहां के रूलिंग्स आपके सामने उपस्थित कर देता इस विषय पर।"

"परंतु जिन अधिकारों से उन्होंने मुझे वंचित किया है वे अधिकार दिए हुए भी तो स्वामी ज्ञानानंद के ही थे।" ब्रह्मचारी ने कहा।

"तब क्या हुआ ? देने का अधिकार उन्हें था, लेने का नहीं। एक बार किसी बच्चे को गोद लेकर फिर यों ही छोड़ा नहीं जा सकता।" गर्व के साथ अकाट्य प्रमाण देकर वकील साहब बोले, "बच्चे पैदा करने का अधिकार प्रत्येक स्त्री पुरुष को है, परंतु वह उनका गला नहीं घोट सकते।"

'एक्सीलेंट ! वकील साहब एक्सीलेंट !" सरोज बोली, "आपने लाजवाब बात कह डाली। तब तो स्वामी जी जो प्रेस लगा रहे हैं उस पर ब्रह्मचारी का भी अधिकार हो सकता है। आपका क्या मत है इस विषय में वकील साहब ?"

"मेरा मत" कह कर वकील साहब मुस्करा दिये, "मैं तो कहता हूं कि आपका केस इतना स्ट्रांग है कि यदि आप चाहें तो मैं स्वामी जी के प्रेस पर क्या डंड-कमंडल तक पर आपको इंजंक्शन दिला सकता हूं। एक बार वह गुल खिला दूं कि दिल्ली में तहलका मच जाय।" इतना कह कर वकील साहब ने अपना मस्तक गर्व के साथ ऊपर कर लिया।

सरोज वकील साहब की गंभीरता को देखकर बोली—"ब्रह्मचारी ! तुम्हें अपने सब अधिकार मुझे बेच देने होंगे। तभी मैं तुम्हारा केस लड़ाने के लिए तुम्हें रुपया दे सकती हूं।"

"यही मैं भी कहने वाला था।" बीच ही में वकील साहब बोल उठे—"तुम्हारे पास तो इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है ब्रह्मचारी ! बैस्ट सजैशन है सरोज का। तुम्हें यह आंखें मींचकर मान लेना चाहिए।"

"परंतु वकील साहब ! इससे मुझे क्या लाभ होगा ? जो रुपया मिस सरोज से लूंगा उसे आपके और अदालत के हवाले करना होगा और अधिकार मिस सरोज के नाम पर बेच दिये जायेंगे। मुझे अदालत की खाक छानने के अतिरिक्त और क्या मिलेगा ?" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

ब्रह्मचारी की यह बात सुनकर वकील साहब को तुरंत कोई उत्तर न सूझा और वह अपनी खोपड़ी खुजलाते हुए बोले—"कहते तो तुम भी ठीक हो ब्रह्मचारी ! परंतु मैं इस विषय में आपको अपनी ला बुक्स कंसल्ट करके कल परामर्श दूंगा।" यह वाक्य वकील साहब निरुत्तर होने पर अपनी आड़ स्वरूप तुरंत कह डालते थे चाहे उस प्रश्न का कानूनी पुस्तकों से कोई संबंध हो अथवा

नहीं। और इतना कहकर गर्व से सर्वदा उनका मस्तक ऊपर को उठ जाता था क्योंकि वह यह समझते थे कि ऐसा कहकर उन्होंने अपने क्लाइन्ट (मुअक्किल) को व्यर्थ की जबानी लपालपी करके भ्रम में नहीं रखा। मामलात कानूनी हैं इसलिए कानूनी पुस्तक देखकर ही उनका सही उत्तर दिया जायगा। वकील साहब के इस रिमार्क से कुछ मुअक्किल प्रभावित भी हो जाते थे और कभी-कभी उनकी स्पष्टवादिता की दाद भी देते थे परंतु ऐसे मुअक्किलों की भी कमी नहीं थी जो यह कह डालते थे कि जो इस समय तुरंत उत्तर नहीं दे सकता वह अदालत के सामने क्या झक मराएगा ? वहाँ भी यदि कोई उल्टा सीधा सवाल हो गया तो यह अपनी कानूनी पुस्तकों को ही कसल्ट करने के लिए दौड़ते फिरेंगे।

समय पर्याप्त हो चुका था। विद्युत का प्रकाश चारों ओर झमझमा उठा। कोठी के सामने वाली बत्ती दरबान ने खोल दी और महाराज ने भोजन तय्यार होने की सूचना दी। वकील साहब से आज वहीं पर भोजन करने का आग्रह किया गया परंतु उन्हें उनकी पत्नी का कड़ा आदेश था कि वह अन्य स्थान पर उनसे आज्ञा प्राप्त किये बिना भोजन न करें। इस आज्ञा का पालन करना उनके लिए अनिवार्य था।

अपनी स्त्री से वकील साहब बहुत डरते थे। उनकी यह डरने की बात उनके इष्ट मित्रों से भी छुपी नहीं थी। इसीलिए उनके मित्र कभी-कभी मज़ाक में उन्हें 'जोरू का गुलाम' भी कह डालते थे।

"इसका मतलब यह हुआ कि आप खाने से इंकार करते हैं।" सरोज ने कहा।

"इंकार मैं आपकी बात को भला कैसे कर सकता हूं परंतु....." वकील साहब दाँत खिसकाकर चुप हो गये।

"अच्छा वकील साहब ! न खाइये, परंतु हम तो आपके यहाँ किसी दिन दावत अवश्य खायेंगे।" मुस्कुराकर सरोज ने कहा।

"अवश्य ! अवश्य ! कल ही मिस सरोज।" वकील साहब ने सरोज के मुख से 'हाँ' सुनने के लिए सरोज के मुख पर अपने कानों को लगा दिया।

"केवल मैं अकेली ही, और ब्रह्मचारी नहीं।" सरोज मुस्कुरा रही थी। उसने वकील साहब के घर पर दूसरे दिन संध्या को दोनों की दावत पक्की कर ली।

इसके पश्चात् वकील साहब चले गये और फिर कितनी ही देर तक सरोज और ब्रह्मचारी आपस में बैठे बातें करते रहे। वकील साहब की मूर्खता और मंत्री संकटानंद की धूर्तता ही आज की बातों के प्रधान विषय रहे।

अन्त में स्वामी ज्ञानानंद की विचारधारा पर भी प्रकाश डाला गया। हिंदू कोड बिल को लेकर भी काफ़ी देर तक बहस चली और अच्छा खासा वाद-विवाद हुआ, परंतु कोई महत्वपूर्ण निष्कर्ष नहीं निकला। कुछ समय का दिल-बहलावा अवश्य हो गया।

ब्रह्मचारी के जीवन में प्रगति है, परन्तु भौतिकवाद के संघर्षों की उस पराकाष्टा तक वह नहीं पहुंच सकता जहां जाकर मानव मानव नहीं रहता, बल्कि राष्ट्र के हाथों में खेलने वाली एक मशीन बन जाता है। वह विचार व्यक्ति के रूप में न करें, समाज के रूप में करें, परंतु व्यक्ति का अस्तित्व नष्ट नहीं हो जाना चाहिए, क्योंकि व्यक्ति का अस्तित्व नष्ट हो जाने से तो समाज का ढाँचा ही निर्जीव बन जायगा। फिर उसकी मरम्मत नहीं होगी। उसमें सुधार के लिए स्थान ही न रहेगा।

"हो जाने दो निर्जीव। नये समाज का निर्माण तो होगा।" सरोज मुस्करा कर बोली। "यह समाज भी तो एक दिन नया रहा होगा। नई वस्तु में जो बल रहता है वह मरम्मत की हुई वस्तु में कहां।"

"परंतु समाज का निर्माण खेल नहीं है सरोज! मैं किसी भी समाज के दोष अथवा गुणों का वर्णन यहां नहीं कर रहा हूं, परन्तु इतिहास उठा कर देखो ब्रिटेन, अमेरिका, रूस, जापान, भारत इनके समाजों को बनने और समाज कहलाने में कितना समय लगा है। किसी भी समाज की कल्पना बहुत सरल है और उसका सुसंगठित होना एक महान कार्य है। इसलिए समाज के ढांचों को आवश्यकतानुसार सुधारा जा सकता है। उनको एकदम समूल नष्ट करके नव-निर्माण करना—एक कठिन कार्य है जिसमें सुधार और लाभ की अपेक्षा हानि की अधिक संभावना है।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"और जो सुधारना भी न चाहें?" सरोज ने पूछा।

"वह इस समय की प्रगति के शक्तिशाली आघात के सम्मुख नहीं ठहर सकेंगे। उनके प्रतिबंध, उनकी रुकावटें सब कृत्रिम हैं। प्राचीनता के प्रति झूठा प्रेम दिखा कर अपने जर्जरित होते हुए अस्तित्व को रोके रखने की मृग तृष्णा

है। जिन हाथों द्वारा कभी राष्ट्र की समस्त शक्तियों का संचालन होता था, उन हाथों से जब आज अंतिम झाड़ फूंक कर फेरे कराने वाली शक्ति को भी छीना जा रहा है तो तुम कैसे अनुमान कर सकती हो कि वे हाथ अपना अंतिम पराक्रम दिखाने से चूक जायेंगे।" ब्रह्मचारी ने गम्भीरता पूर्वक प्यार से सरोज का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा।

"तब तो यह संघर्ष धर्म की आड़ में शक्ति का हुआ ब्रह्मचारी!" सरोज ने पूछा।

"संघर्ष सभी शक्ति के लिए होते हैं। शक्ति हस्तगत करने के लिए ही मानव जीवन में संघर्षोन्मुख हुआ है। वह शक्ति धन की हो, राज्य की हो, सेना की हो अथवा नारी की।" गंभीरता पूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"नारी की शक्ति!" आश्चर्य चकित सरोज बोली।

"हां सरोज! नारी तो स्वयं शक्ति है। नारी आकर्षण प्रधान है और आकर्षण से शक्ति का उदय होता है। रानी एलिज़बेथ ने फ्रांस और स्पेन को बेवकूफ बनाकर इंग्लैंड की शक्ति को बढ़ाया। सीता और द्रोपदी को लेकर रामायण और महाभारत के महायुद्ध हुए। संयोगिता के कांड ने भारत को दास बना दिया और इसी प्रकार संसार के इतिहास में नारी शक्ति के अनेक उदाहरण हैं।

दूर क्यों जाती हो? उस दिन तुमने स्वामी ज्ञानानंद के साथ क्या कुछ नहीं किया?" कहकर ब्रह्मचारी मुस्कराता हुआ चुप हो गया।

सरोज को कुछ विचार निमग्न सा देखकर बोला, "आज भूखा ही मार डालना है क्या? तुम्हारा तो पेट बातों से कभी भरता ही नहीं सरोज।"

भूख का शब्द सुनकर सरोज का स्वप्न टूटा। रानी एलिज़बेथ की बात ब्रह्मचारी के मुख से सुनकर सरोज आश्चर्य में डूब गई। वह ब्रह्मचारी को केवल संस्कृति-ग्रंथों का ही घोटा बसंत समझती थी। आज प्रगतिवाद और इंग्लैंड के इतिहास की झलक उसकी बातों में पाकर सरोज चकित रह गई।

उसे ब्रह्मचारी के विषय में संशय होने लगा और उसे प्रतीत हुआ कि ब्रह्मचारी कोरा ब्रह्मचारी नहीं है। वह अपना रहस्य छुपाये हुए अवश्य ही कोई भेद पूर्ण व्यक्ति है। इतना विद्वान होते हुए भी वह कितना सरल है, यह देख

कर सरोज श्रद्धा से झुक गई।

महाराज ने मेज पर खाना लगा दिया। ब्रह्मचारी का भोजन बहुत ही सात्विक होता था। वह केवल एक ही शाक से भोजन करता था और घी का प्रयोग उसे प्रिय नहीं था।

एक दिन सरोज के बहुत आग्रह करने पर उसने कहा, "सरोज! मैं एक बात की तुम से प्रार्थना करता हूं कि तुम कभी मेरे भोजन के विषय में मुझसे बहस न करना। जो कुछ मैं खाता हूं, मेरे शरीर की पुष्टि के लिए पर्याप्त है। मैं भोजन का महत्व शरीर की पुष्टि के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझता।"

बिना तर्क बात थी। सरोज ने उस दिन के पश्चात फिर कभी खाने पर उस विषय को नहीं उठाया। परन्तु इसका प्रभाव इतना अवश्य हुआ कि सरोज का अपना भोजन भी कई-कई शाकों की दिशा से हट कर सात्विकता की ओर आने लगा। अधिक नमक, मिर्च, खटाई आदि का लोप दिखाई देने लगा।

: १३ :

मंत्री संकटानंद काम के धनी थे। जब वह काम करने पर तुलते थे तब तो उनकी कर्मठता देखकर उनकी धूर्तता की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता था। उनकी धूर्तता भी उनका एक गुण था। इस दिशा में वह अपने को कम्यूनिस्ट कहते थे और बड़े गर्व के साथ मूछों के दो चार बालों पर हाथ फेर कर कहा करते थे, "कार्य की सिद्धि प्रधान लक्ष्य होना चाहिए। कार्य-संचालन की विधि समय और परिस्थिति को देख कर बनानी होती है।"

स्वामी ज्ञानानंद मंत्री जी के कार्यक्षेत्र में कोई हस्तक्षेप नहीं करते। रात दिन एक करके मंत्री जी ने मशीन फिट करा डाली, टाइप भरा जा चुका, रैकें बनकर तैयार हो गई, कम्पोजिंग का काम ठेके पर दे दिया गया और मशीनमैन स्थायी रूप से रख लिया गया।

'सत्य-मार्ग' दैनिक पत्र का श्रीगणेश हुआ और मंत्री संकटानंद जी पत्र संचालन के लिये कार्यालय के प्रधानाधिकारी बने। मंत्री संकटानंद के साथ मूलचन्द जी की भी गहरी छन रही थी। वह आफिस के हैड क्लर्क थे और पान बीड़ी के अतिरिक्त अब उनके शरीर पर न मैला और फटा कुर्ता था और न कई जगह से गंठा हुआ पायजामा ही। नया और कोरा लट्ठे का पायजामा था और उसपर सिल्क का कुर्ता। पैरों में चप्पल भी नये थे और वह स्वयं मंत्री संकटानंद ने उन्हें खरीद कर दिये थे। आजकल सावित्री देवी से भी मूलचन्द जी की खूब पट रही थी और उसने फिर आकर मूलचंद जी के ही घर पर रहना प्रारम्भ कर दिया था।

इसी बीच में मंत्री संकटानंद ने वकील साहब से अपना बहुत मेल-जोल बढ़ा लिया था। नित्य संध्या को वह घूमने के पश्चात वकील साहब के घर पर चले जाते थे। प्रेस से उठे, निगमबोध घाट पर से आत्मा की शुद्धि करते हुए कुदसिया घाट तक पहुँचे; जमना-जल में हाथ, पैर, मुंह धोये, संध्या इत्यादि से निवृत्त हुए और सीधे वकील साहब के घर पर पहुंच गये। वकील साहब को पहले ही दिन मंत्री जी अपने चातुर्य और बुद्धिमत्ता से प्रभावित कर

चुके थे और फिर सरोज के मुख से उनकी प्रशंसा सुनकर तो वह उन्हें स्वामी ज्ञानानन्द का भी गुरु मानने लगे थे।

स्वामी ज्ञानानंद और 'सत्य-मार्ग' कार्यालय को जमा कर एक दैनिक पत्र निकाल डालना कोई साधारण काम नहीं था। मंत्री जी में वकील साहब को दैविक-शक्ति का आभास मिला। उनका वकील साहब के घर सम्मान होने लगा। वकील साहब के घर में गुणों के लिये स्थान था रूप के लिए नहीं। यही कारण था कि मंत्री जी का सम्मान वहाँ विशेष रूप से हुआ।

वकील साहब की धर्मपत्नी आधुनिक थी, रहन-सहन में, वेशभूषा में, वस्त्राभूषणों में, सैर-सपाटे में, फैशन और चपलता में, जीवन की रंगीनियों में परन्तु ईश्वर की वह अनन्य भक्त थी। उसमें संतान प्राप्ति की प्रबल आकांक्षा थी। यदि झूठे को भी कोई धूर्त्त उसे 'पुत्रवती हो' कह कर आशीर्वाद दे डालता था तो वह गद्‌गद् होकर उसके चरण चूम लेती थी। मंत्री जी स्त्री और पुरुष दोनों की नसों को पहचानने में दक्ष थे। जहाँ एक ओर उन्होंने वकील साहब की स्त्री की इस कमजोरी को पहिचान लिया था; वहाँ दूसरी ओर वकील साहब की कमजोरियाँ भी उनसे छिपी न रह सकीं। मंत्री जी वकील साहब के जीवन में गहराई के साथ उतर चुके थे।

"पुत्रवती हो बेटी ! वकील साहब नहीं आए अभी।" मंत्री जी ने घर के छोटे से बागीचे में घूमती हुई वकील साहब की पत्नी बेला को संबोधित करते हुए कहा।

बेला चौंक कर पीछे हटती हुई बोली, "ओह ! मंत्री जी ! मैं तो सचमुच आपकी ही राह देख रही थी। कल मैंने पत्र में आपका लेख पढ़ा। आपने नारी की आत्मा का निचोड़ उस लेख में प्रस्तुत किया है।"

मंत्री जी कुछ सकुचाते से अपना पोर्टफोलियो बगल में दबाये कुर्सी पर बैठ गये।

"वकील साहब नहीं आये ?" मंत्री जी ने बेला की बात अनसुनी करके दुबारा पूछा।

"अभी नहीं आये।" बेला ने उत्तर दिया।

"आज तुम्हारे उत्तर में मुझे कुछ मानसिक क्लेश की गंध आती है। सच कहो बेला ! जब मैं तुम्हें पुत्री कह चुका तो तुम्हारी हर विपत्ति में साथ दूंगा।"

गंभीरतापूर्वक मंत्री जी इस प्रकार बोले मानो बेला के हृदय का संताप और उसकी मानसिक वेदना मंत्री जी के हृदय में उतर आई। मंत्री जी का अभिनय इतना कलापूर्ण था कि उससे बेला प्रभावित हुए बिना न रह सकी और उसने मंत्री जी को अपने धर्मपिता के रूप में देखा।

संवेदना के ये शब्द सुनकर बेला अपने को न संभाल सकी। उसके नेत्रों से निकल कर दो मोटे-मोटे आँसू उसकी साड़ी पर गिर पड़े। यह देख कर मंत्री जी का मुख और भी गंभीर हो उठा। उन्होंने मन में अपनी कुशलता की दाद दी।

एक क्षण ठहर कर मुंह को संवेदनाजनक बनाते हुए वह फिर बोले, "तुम निर्भय होकर कहो बेला ! जो कुछ तुम कहना चाहती हो। तुम्हें हर प्रकार की सहायता मिलेगी। मेरा तो जीवन ही नारी-जाति के उद्धार में व्यतीत हुआ है। नारी जाति को खिलौना समझकर उस पर अत्याचार करने वाले बड़े-बड़े महारथियों के मैं मुंह मोड़ चुका हूं। मेरा संरक्षण पाकर तुम अपने को आज से निर्भय मानो ! मैं तुम्हें जीवन के अंधेरे कूप से निकाल कर उस फुलवाड़ी में ले जाकर खड़ा कर दूंगा जहाँ चारों ओर आनंद-ही-आनंद होगा।"

"इधर कुछ दिन से मन्त्री जी ! हमारे वकील साहब मिस सरोज के पीछे पड़े हैं। उस औरत ने इनपर ऐसे डोरे डाले है कि यह हर समय उसी की तारीफ करते है। मुझ से झूठा बहाना बनाते हैं। कहते है कि मैं उसके पास किसी केस के सिलसिले में जाता हूं और केस कुछ दूसरा ही बनता जा रहा है।" कहकर बेला के मुंह में और शब्द न आ सके। वह चुप हो गई और उसके नेत्रों से आंसुओं की धारा बह चली। बेला मन्त्री जी के आने से पूर्व बहुत दुखी थी और किसी प्रकार फूलों से खेल कर अपने हृदय के भावों को दबाने का असफल प्रयास कर रही थी।

"तुम चिंता न करो बेला ! सब ठीक हो जायेगा।" गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

तभी वकील साहब सामने से आते दिखाई दिये। वकील साहब को आता देखकर बेला खड़ी हो गई और मंत्री जी उसी प्रकार इस परिवार के गुरु के रूप में पैर पर पैर रखे निश्चिंत भाव से बैठे रहे। वकील साहब ने स्वयं आकर मंत्री जी को नमस्कार करते हुए पूछा, "अधिक देर तो नहीं हुई आपको पधारे !"

"परन्तु आप थे कहां अब तक ?" ये शब्द मंत्री जी ने इतने अधिकार-

पूर्ण स्वर में कहे कि पास खड़ी बेला भी सहम गई और वकील साहब तो बगलें ही झाँकने लगे। चश्मा उतार कर रुमाल से उसे साफ किया और फिर सामने की कुर्सी पर बैठते हुए बोले, "जरा देर हो गई आज आने में। एक केस में ऐसा उलझ गया कि इस समय से पूर्व चलते ही न बन सका।" नीचे गर्दन करके वकील साहब ने कहा।

"जरा देर हो गई !" अपने कुर्ते की जेब से काले डोरे में बंधी जेबघड़ी निकाल कर वकील साहब की तरफ करते हुए बोले, "आठ बजे हैं महाशय ! बेला अकेली तुम्हारी इन्तजार में छटपटा रही है। आदमी को अपने घर का भी ध्यान रहना चाहिए।" उपदेशात्मक मुंह बना कर मंत्री जी बोले, "और देखिए वकील साहब ! ऐसे अव्यवस्थित परिवार में हम अपना आना-जाना नहीं रख सकते।" कहकर मंत्री जी बहुत गंभीर होकर खड़े होने लगे।

आज वकील साहब ने मंत्री जी को बहुत मिन्नत समाजत करके बिठाया और आइन्दा समय पर आने का वचन दिया।

बेला मन में प्रसन्न थी कि वकील साहब पर अच्छी फटकार पड़ी। वकील साहब अपनी कमजोरी को जानते हुए इसलिए चुप थे कि कहीं बेला ने इस समय क्रोध में आकर उनकी और कुछ दुर्बलताओं पर प्रकाश डाल दिया तो वह मंत्री जी के सम्मुख मुंह लेकर बोलने के योग्य भी न रहेंगें। उन्होंने मौन ही रहना उचित समझा।

"आपको सरोज के विरुद्ध कल एक केस दायर करना होगा।" गंभीरता-पूर्वक मंत्री जी बोले।

'सरोज के विरुद्ध केस दायर करना होगा', यह सुनकर बेला के आनंद का ठिकाना न रहा। वह मारे प्रसन्नता के वहाँ और अधिक न ठहर सकी। सीधी घर के अन्दर घुसती ही चली गई। अन्दर जाकर नौकर से बोली, "जाओ, बाहर वकील साहब से कह दो कि मंत्री जी का भोजन आज यहीं होगा। वह बिना भोजन किये नही जा सकेंगे।"

"सरोज के विरुद्ध ! यह क्या कह रहे हैं आप मंत्री जी ?" आश्चर्य चकित वकील साहब ने पूछा। "आपके और उनके सम्बन्ध तो·····"

"हाँ सरोज के विरुद्ध। संबंध संबंध के स्थान पर है और व्यवहार व्यवहार के स्थान पर ! केस स्वामी ज्ञानानन्द की ओर से चलाया जायगा

और साथ ही यह केस 'भारत-मित्र' के मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक के भी विरुद्ध होगा। आपको मंडल की ओर से इसकी पूरी-पूरी फीस दी जायगी। फीस का बिल कम बनाने की आवश्यकता नहीं, दिल खोल कर बिल बनाना। बिल हमें ही पास करना है।" ये अन्तिम शब्द कहकर मंत्री जी ने कुशलता-पूर्वक वकील साहब के उस मर्मस्थल को छू दिया जिससे वकील साहब के नेत्रों में कृतज्ञता के डोरे खिंच जायें। वकील साहब का हृदय गद्‌गद् हो उठा और वह बिल्कुल ही भूल गये कि अभी अभी सरोज की कोठी पर उसे वह क्या आश्वासन देकर आ रहे हैं।

मंत्री जी कूटनीति में अपने को चाणक्य का प्रगतिवादी संस्करण मानते थे। एक सौ रुपये का नोट वकील साहब को एडवांस करके बोले, "लीजिए एडवांस, और मंडल के नाम पर एक पक्की रसीद बनाकर भेज दीजिएगा।"

"इसकी इस समय क्या आवश्यकता थी?" नोट को हाथ में लेते हुए वकील साहब बोले। "मंत्री जी! मैंने कई दिन पूर्व स्वामी जी को यह केस दायर करने की राय दी थी, परन्तु उनके मस्तिष्क में बात जमाने के लिए आप जैसे योग्य व्यक्ति की आवश्यकता है।"

इस समय मंत्री और वकील दोनों के मस्तिष्क की दशा बड़ी विचित्र थी। वकील साहब समझ रहे थे कि उन्होंने ग्राहक पटा लिया और मंत्री जी समझ रहे थे कि उन्होंने १००) में वकील को अपना गुलाम बना लिया। वकील साहब ने मंत्री जी की कार्य-कुशलता, प्रभावात्मकता और दिव्य-दृष्टि की अपने मन में प्रशंसा की और आज हृदय से उन्हें अपना गुरु मान लिया।

बेला ने मन्त्री जी के लिए विशेष रूप से भोजन का आयोजन कराया और स्वयं अपने हाथ से खाना परसा। बेला के विशेष आग्रह से ही मंत्री जी भोजन करने के लिये उद्यत हुए। आज वकील साहब ने अपनी स्त्री बेला की चतुरबुद्धि की दाद दी और उन्होंने प्रथम बार समझा कि बेला न केवल एक सुन्दर युवती है वरन् कार्यकुशलता और चतुरता में भी उससे बाजी मार जाना सरल कार्य नहीं।

भोजन करके मन्त्री जी ज्यों चलने को उद्यत हुए पति पत्नी दोनों ने सादर नमस्कार किया। मंत्री जी नमस्कार ग्रहण करके प्रसन्नतापूर्वक विदा हुए।

: १४ :

मंत्री जी की चाल मस्तानी थी । सीधे वहाँ से बाहर निकल कर बेला रोड पर आ गये और घूमते हुए आनंद के साथ अपने कार्यालय की ओर चल दिये ।

मार्ग में निगमबोध घाट को ज्यों ही पार कर रहे थे तो वहाँ से टाल वाले ने मन्त्री जी को पहचान कर नमस्कार किया । वहाँ के सभी आदमी मंत्री जी को जानते थे । मंत्री जी वास्तव में गुण और अवगुणों के ऐसे सम्मिश्रण थे कि दिल्ली का बच्चा-बच्चा आपसे परिचित था ।

बेला के हाथ की पूड़ियां खाकर आज मंत्री जी की बांछें खिल उठी थीं । मंत्री जी जिस दिन किसी नारी के हृदय पर विजय प्राप्त करके आते थे उस दिन उनकी मुख-मुद्रा देखते ही बनती थी । मस्तक पर रह-रह कर गंभीर उभार आते और प्रसन्नता में विलीन हो जाते । नेत्रों में एक प्रकार की मादकता झलकने लगती और हृदय में कई-कई उभार आते । पैरों की गति में आपसे आप ऐसी उत्साह-पूर्णता आ जाती थी कि कई-कई मील विचारों में डूबे हुए चले जाने पर भी थकावट नहीं होती थी ।

कभी-कभी मंत्री जी सोचते थे कि नारी को रिझाने के लिए जिस रूप की आवश्यकता है क्या उसका उनमें अभाव है ? नारी विचित्रता चाहती है और वह उनमें भरी पड़ी है ।

न सही मंत्री जी का गौर-वर्ण; वर्ण सांवला भी आकर्षक हो सकता है । इन्हीं विचारों में झूलते-झूलते भगवान कृष्ण की सांवली मूर्ति उनके नेत्रों में उतर आई ।

उनकी मूछों के बाल यद्यपि कुछ कम अवश्य थे परन्तु जो थे वे सम्भवत: इतने लम्बे थे कि महाराणा प्रताप की मूछों के बड़े से बड़े बालों से भी बाजी मार सकते थे । मंत्री जी वस्त्र सादे पहनते थे परन्तु सादे वस्त्र पहनकर ही तो महात्मा गांधी ने अपने को देवता बनाने का प्रयास किया ।

आधुनिक नारी आज के पुरुष में कुछ प्रगति और आधुनिकता देखना

चाहती है। इसलिए मंत्री जी ने चमड़े का बढ़िया पोर्टफोलियो खरीदा था जो उनकी शक्ल सूरत, वेश-भूषा और शरीर के समस्त ढांचे पर छोटा सा साइन बोर्ड बनकर लटका हुआ प्रतीत होता था।

मंत्री जी जब कार्यालय पहुँचे तो वहां पर एक ओर कुटिया में स्वामी ज्ञानानन्द बैठे कुछ लिख रहे थे और दूसरी ओर कम्पोजीटर लोग 'सत्य मार्ग' दैनिक पत्र का मैटर कम्पोज कर रहे थे।

मंत्री जी पहली कम्पोजीटर्स के पास गये। सबने एक साथ मंत्री जी को नमस्कार झुकाया। उन सबको शाबासी देकर आप स्वामी जी के पास आये। स्वामी जी बड़ी देर से मंत्री जी की राह देख रहे थे। मशीन मैन कह चुका था कि मशीन खराब हो गई है। पत्र नही छप सकेगा। पत्र नहीं छपेगा तो सब चौपट हो जायगा क्योंकि आज चौथा ही परचा था। यदि इस प्रकार की अव्यवस्था हुई तो पत्र किस प्रकार चल सकेगा।

"आप चिन्ता न करें स्वामी जी! सूर्य पूर्व में न निकल कर चाहे पश्चिम में निकले पर 'सत्य-मार्ग' ठीक समय पर निकलेगा। मंत्री संकटानन्द के रहते पत्र न निकले यह असम्भव है।" गर्व के साथ मंत्री जी ने कहा।

और मंत्री जी उसी समय जाकर सरदार जी को लाए। सरदार जी ने मशीन के चारों और पहले दो चार परिक्रमा दीं और फिर उसके सिलेण्डर की गरारी पर हाथ रखकर मशीन मैन से बोले "सिलेंडर फ्री हो जाता है?"

"जी!" मशीन मैन ने उत्तर दिया।

"प्लेटन झटका देता है?" सरदार जी ने तनिक फिर नीचे ऊपर झुक कर देखते हुए पूछा।

"तीसरे राउन्ड पर" मशीन मैन बोला।

फिर बहुत गंभीरता के साथ सरदार जी ने सिर हिलाया और तुरन्त अपनी आस्तीनें चढ़ा कर पतलून उतार दी, कच्छा पहिन मशीन पर जुट गये। मशीन की दो बीमारियों की ओर जो सरदार जी ने संकेत किया था वह नपा तुला था और उसे सुनकर स्वामी जी को उसी प्रकार तसल्ली हो गई जिस प्रकार मरीज को डाक्टर से अपना रोग और उसके कारणों को सुनकर अथवा किसी ज्योतिषी से अपने गत जीवन की घटनाओं का सही विवरण जान लेने पर किसी व्यक्ति को होती है।

सरदार जी के लिए यह देर का काम नहीं था परन्तु फिर भी उन्होंने एक घंटा लगा दिया। एक सिलेंडर का दांता बदला और कुछ पीछे से चाल में आगा पीछा किया। मशीन सुचारू रूप से चलने लगी।

मशीन ठीक होने पर सरदार जी के साबुन से हाथ धुलवाये गए और बहुत आवभगत के साथ उनकी प्रशंसा करते हुए मंत्री जी उन्हें अपने आफिस की ओर ले गये। वहां २५) रु० सरदार जी को देकर १००) का वाउचर भरवा लिया। स्वामी जी मंत्री जी की कार्यकुशलता पर इस समय बहुत प्रसन्न थे। पत्र स्वामी जी को जिस समय निकालना था उसी समय निकल गया।

: १५ :

"शताब्दियों से बनी परतंत्रता की शृंखलाओं को छिन्न-भिन्न करता हुआ भारत अपने नवीन सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक दृष्टिकोण में समन्वय की भावना को लेकर आगे बढ़ रहा है। विश्व की कुछ क्रांतियां अपने में अपना और विश्व-व्यापी महत्व रखती हैं। इंग्लैंड के प्रजातंत्रवाद, इटली का डिक्टेटरशिप, रूस के कम्यूनिज्म और भारत के गांधीवाद ने अपने-अपने स्थान पर विश्व की प्रगति में विशेष योग दिया गया है। सभी अपनी-अपनी परिस्थितियों में पनपे हैं। डिक्टेटरशिप के खंडहरों पर आज प्रजातंत्र के भवन निर्माण किये जा रहे हैं उनके रूप में कुछ अंतर हो सकता है, मूल में नहीं। उसी प्रकार कम्यूनिज्म के भवन का भी निर्माण डिक्टेटरशिप के ही वक्षस्थल पर ही हुआ है परंतु यहां रूप में कम अंतर होने पर भी मूल में एक गहरी खाई खुद गई है। परंतु गांधीवाद का निर्माण डिक्टेटरशिप के खंडहरों पर न होकर विदेशी साम्राज्यवाद के विकृत प्रजातंत्रवाद के ढकोसले को छिन्न-भिन्न करके हुआ है।

"भारत केवल आर्थिक संकट का ही शिकार नहीं था, धार्मिक भूत भी इसके सिर पर सवार था और धार्मिक रूढ़िवाद, आर्थिक विषमता तथा सामाजिक पतन ने देश को हर प्रकार से विदेशी नीति के कुचक्रों का ग्रास बनाया हुआ था। जन साधारण कुचला जा रहा था, मानवता-समाप्त हो चुकी थी, स्वार्थपरता का बोल-बाला था, शक्ति का स्रोत रुका हुआ था। स्वामी दयानंद और राजा राममोहन राय ने भारत की सामाजिक-स्थिरता में (रूढ़ि में) एक प्रगति का संचार किया। महात्मा गांधी ने धर्म, समाज और राष्ट्र को लेकर देश की सुप्त शक्तियों को झंझोड़ कर उठाया। उनमें गति पैदा की और प्रगति का मार्ग सुझाया। विश्व की क्रांतियों से पृथक पथ भारतीय प्रगतिवाद के लिये उन्होंने निर्धारित किया और अपना डंड कमंडल संभाल कर लंगोटी लगा ली।" बहुत ही गंभीर व्याख्या के साथ ठाकुर राजबहादुर सिंह ने बतलाया और फिर पसीना आ जाने के कारण अपनी किश्तीनुमा गांधी कैप को बहुत करीने के साथ उतार कर गोल मेज पर रखते हुए एक बार

सरोज के मुख पर सगर्व देखा। उनका हृदय इस समय कह रहा था कि उनके इतने विद्वतापूर्ण भाषण देने पर कोई कारण नहीं है कि सरोज प्रभावित न हुई हो। इसके पश्चात कुंवर साहब ने अपनी रेशमी शेरवानी का गले का बटन खोला।

ठाकुर राजवहादुर सिंह बिहार के एक ताल्लुकेदार थे। देश की आजादी के लिए आप कई बार जेल गये और इस समय लोक सभा के सदस्य थे।

आज ठाकुर साहब को सरोज के यहां आकर वह आनन्द प्राप्त नहीं हुआ जिसकी आशा से वह यहां आये थे। ब्रह्मचारी को देखकर उनका माथा ठनका और सरोज को आज बनारसी साड़ी के स्थान पर सफेद, मलमल की सादी साड़ी पहने देखकर तो मानो उनका हृदय रो ही उठा। अंदर-ही-अंदर मन को मसोस कर उन्हें क्रोध भी आया कि इस कम्बख्त सदा-सुहागिनी नारी ने आज विधवा जैसा वेष क्यों धारण कर लिया।

परंतु कहा कुछ नहीं। आज कुछ पीने-खाने का भी रंग-ढंग दिखाई नहीं दिया। न राग-रंग था, न चहल-पहल, न साज़िंदों का कहीं पता था और न उस्ताद करीम खां ही वहां दिखाई दिये।

ठाकुर साहब सरोज पर अपनी राजनीतिज्ञता की धाक जमा कर हाल-चाल, प्रेम-भाव, मोद-प्रमोद, आनंद-उमंग के क्षेत्रों में क्रमशः उतरते थे परंतु आज न तो व्याख्यान की रुचि हुई और न उसके प्रेम-प्रवाह के लिए कुछ विशेष प्रश्रय मिला। ब्रह्मचारी ध्यानपूर्वक ठाकुर साहब का मुख देख रहा था—मानो वह इन्हें पहचानता था।

ठाकुर साहब निर्भीक होते हुए भी ब्रह्मचारी के इस प्रकार घूर-घूर कर देखने से मन-ही-मन भयभीत हो रहे थे। अंत में ठाकुर साहब बोले, "सरोज आज तुम इतनी गंभीर क्यों बनी हो?"

"कहीं भी तो नहीं।" मुस्कुराकर सरोज बोली, "मुझे तो आज आप ही कुछ भयभीत से प्रतीत हो रहे हैं। न वह मुस्कुराहट है, न वह छैलापन। कुछ उतरी-उतरी जवानी की छाया मात्र सी प्रतीत हो रहे हैं आप। समझ नहीं पा रही हूँ कि इतने शीघ्र आप में इतना परिवर्तन कैसे हो गया?"

"कारण मैं बतलाता हूँ।" बीच में ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश गंभीरता पूर्वक बोले, "आज आप दोनों एक दूसरे के वास्तविक रूप को देख रहे हैं। इसमें धोखा नहीं है। पहले आप लोग एक रंगीन दुनिया के व्यक्ति बन कर

एक दूसरे को देखते थे। उसमें बनावट थी, धोखा था। यदि आपका वह रूप आज की अपेक्षा अधिक आकर्षक था तो आज आप अपने वास्तविक रूप को पहचान लीजिये।

धोखा दूसरों को भी देना बुरा है, परन्तु अपने को धोखा देना तो मृत्यु है।" इतना कहकर ब्रह्मचारी गंभीर घन-गर्जन की भांति मौन हो गये।

सरोज शांत थी परन्तु ठाकुर साहब का तो जीवन में यह प्रथम अवसर था इस प्रकार की बातें सुनने का। क्या मजाल जो उन्हें कोई उपदेश दे सके। उनके बदन का रक्त खौल उठा। गांधीवादी नेता, त्याग और तपस्या की मूर्ति, कई बार सत्याग्रह में जेल गये, विशुद्ध खादी के पहनने वाले, तकली पर सूत उन्होंने अपने हाथ से काता, अछूतों के यहाँ जाकर उनके हाथ का पानी पिया फिर वह उपदेश भला किस प्रकार सहन करते।

ठाकुर साहब सहन न करते हुए कुछ व्यंग्य भाव से बोले, "परन्तु क्या मैं पूछ सकता हूं कि ब्रह्मचारी जी का आगमन इस कुटिया में किस अभिप्राय से हुआ?" इतना कहकर ठाकुर साहब ने यह समझते हुए कि उन्होंने तीर ठीक निशाने पर मारा, अपनी मूछों को ताव दिया और उत्तर सुनने के लिए संभल कर बैठ गये।

"अवश्य ठाकुर साहब! अवश्य!" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी बोला, "मैं एक विद्यार्थी हूँ। अध्ययन करने के लिये घर से निकला था। पहले काशी के एक विद्यालय में गया। वहाँ कुछ सीखा। जब वहां की विद्या समाप्त हो गई तो वहाँ के गुरू जी ने मुझे निकाल दिया। फिर यहाँ आया तो मैंने अनुभव किया कि मेरी विद्या अभी अपूर्ण है। नये गुरू की खोज करने पर" सरोज की ओर श्रद्धा भाव से संकेत करके बोला, "आपसे भेंट हो गई। आपके विद्यालय में आये लगभग दो मास हो गये परंतु यह सच है ठाकुर साहब कि किसी अन्य विद्यालय में दो वर्ष रह कर भी वह ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता था जो यहाँ दो महीने में हो गया।

एक से एक नया मॉडल यहाँ नित्य देखने को मिलता है। नित्य कोई न कोई नवीन परीक्षण होता है। इस रंगशाला में जिन-जिन महान् व्यक्तियों से भेंट हुई, सम्भवतः मैं जीवन भर भटकने के पश्चात् भी उनकी चरण-रज लेने के योग्य न हो पाता।"

बात ब्रह्मचारी ने इतनी गंभीरतापूर्वक कही कि ठाकुर साहब उसके गंभीर उपहास में छुपी हुई व्यंग्य की रेखा को न पहचान कर अपने को वहाँ आने वाले महान् व्यक्तियों में समझकर स्वयं अपने मन में गौरवान्वित हो उठे और ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश भी एक बार ठाकुर साहब की सादगी पर रीझ कर उनकी मूर्खता की सराहना अपने मन में किये बिना न रह सका। ब्रह्मचारी के इन शब्दों ने ठाकुर साहब के मन में ब्रह्मचारी के प्रति जो भावना बन चुकी थी उसे नष्ट कर दिया और उनकी द्वेषपूर्ण कर्कशता में सरसता का संचार होने लगा।

"मुझे खेद है कि आज आपको अपने सत्कार में अभाव की छाया प्रतीत हो रही है ठाकुर साहब! परन्तु यदि आप विश्वास कर सकें तो इस कोठी पर आज प्रथम बार ही आपका सत्कार हो रहा है।" ब्रह्मचारी ने कहा और फिर अपनी बात के समर्थन के लिये सरोज के मादक नेत्रों में नेत्र डाल कर विश्वास की एक गहरी छाप लगा दी।

"यह किस प्रकार?" ठाकुर साहब ने पूछा।

"बनावट के वातावरण में वास्तविकता का रहस्योद्घाटन नहीं होता।" ब्रह्मचारी बोला।

"परन्तु इस रूप में तो संस्कार भी बनावटी ही है?" बीच में सरोज बोल उठी। दोनों का मुख सरोज की ओर आकर्षित हुआ और ठाकुर राजबहादुर सिंह ने आज प्रथम बार सरोज को गुरु के रूप में देखा। सरोज की कला और सौंदर्य का यह पहले से मान करते थे और उसे प्रेम करते थे यह कहना भी अनुचित न होगा क्योंकि उनका आकर्षण भौतिक-वासना रहित था, ऐसा वह मानते थे परन्तु सरोज का जो रूप आज सामने आया वह पिछले रूप से सर्वथा पृथक था, सर्वथा भिन्न था। इस समय वह यह निश्चय करने में असमर्थ थे कि वह सरोज की रंगशाला के विद्यार्थी थे अथवा उसमें आने वाले एक महान् व्यक्ति। उन्हें स्वयं को अपना अस्तित्व लघु सा प्रतीत हुआ परंतु फिर भी वह इतने दिन के अपने स्थापित किए हुए सम्मान को इस प्रकार एक क्षण में कैसे पानी में बहा सकते थे? मन में लघुता का अनुभव करते हुन भी उन्होंने उसकी छाया को मुख पर नहीं आने दिया और अपने नेतावी ठाट-बाट के साथ गम्भीरता को बनाये रखने का

प्रयत्न किया।

"आज आपसे भेंट करके बहुत प्रसन्नता हुई।" गम्भीरतापूर्वक ठाकुर साहब बोले।

ब्रह्मचारी मुस्कराकर विनय-भाव से बोला—"मुझे आपसे बहुत कुछ सीखना है। आपका त्याग और बलिदान सराहनीय है। आपने भारत की स्वतंत्रता में जो योग दिया वह अद्वितीय है। आप जैसे व्यक्तियों पर भारत को गर्व है, समाज को गर्व है, कला को गर्व है।"

ठाकुर साहब इन शब्दों को सुनकर प्रशंसा के वेग में बह गये। वह अपने पराक्रमों का स्वयं बखान करने लगे। उन्होंने बतलाया, "सन् तीस में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की हिलती हुई दीवारों को देखकर मैं कांग्रेस आन्दोलन में कूद पड़ा परंतु दुर्भाग्यवश वह आंदोलन भारत को स्वतंत्र न करा सका। नाम हुआ, परंतु कोई विशेष लाभ नहीं। जेल में 'ए' क्लास मिली। कोई कष्ट नहीं था। सब सुविधायें थीं। प्रत्येक वस्तु पैसा खर्च करने पर प्राप्त हो जाती थी। चौकीदार के हाथ पर रुपया रखकर जो इच्छा होती थी वह मंगा लेता था।

छोटे जेलर से मित्रता इतनी घनिष्ट हो गई थी कि अवसर पाकर उसकी कोठी पर मदिरापान होता था, नृत्य भी देखा जाता था। हर प्रकार की सुविधा थी।

कलक्टर साहब जब जेल के दौरे पर आते थे तो मुलाकात करते थे। प्रलोभन देते थे, फुसलाते थे। परंतु मैंने अपनी राजपूती शान को कायम रखा। कोई प्रलोभन मुझे हिला नहीं सका, डिगा नहीं सका।

जेल से छूटने पर नेता बन गया। धूम-धाम के साथ स्वागत हुआ। कई बार महात्मा गांधी से भी मिलने गया।

ज़िले का कलक्टर मेरे यहां शिकार खेलने आया था। मिस डेविड को मेरे यहां आकर शिकार खेलने का बड़ा शौक था। कांग्रेसी होने का मेरी डिक्शनरी में यह अर्थ नहीं था कि मैं कलक्टर को डाली न देता।

इलाके में एकछत्र मेरा राज्य था। स्वतंत्र होने पर मेरे मार्ग में कुछ कठिनाइयां आईं। काश्तकारों ने सिर उठाया। उन्हें पहले की भाँति दबाया नहीं जा सकता था। प्रयत्न मैंने अवश्य किया, परंतु खुलकर नहीं; क्योंकि आने वाले चुनाव का ध्यान था। नेतागिरी हाथ से जाने पर तो अस्तित्व ही खतरे

में पड़ने का भय था।"

एम० एल० ए० बनने के पश्चात ठाकुर साहब ने अपना ध्यान जिमीदारी की तरफ़ से हटाकर पूर्ण रूप से व्यापार की ओर लगा दिया।

ठाकुर साहब ने अपनी कुशलता के पुल बाँध दिये और बताया, "मैंने अपने व्यक्तिगत संबंधों के फलस्वरूप वे कार्य, जिन्हें करने में दूसरे व्यक्ति कई बार मर-मर कर जन्म लेते, चंद घंटों में फ़ोन पर चार शब्दों में समाप्त कर दिये। साइकिल-डीलर को दस लाख साइकिलें भारत में लाने का परमिट मात्र दिलाने पर पाँच लाख रुपया उल्टे हाथ से जेब में डाले। रुपया कमाना मेरे लिये बच्चों का खेल है। करोड़ों के वारे-न्यारे कर चुका हूं।

ताल्लुके के कुछ बाग-बगीचों को छोड़ कर शेष सब भूमि काश्तकारों को बाँट दी। ताल्लुके भर में नाम हो गया। काश्तकारों के जो नये नेता बनने चले थे उनके मुंह पर इस प्रकार मैंने एक ऐसी करारी चपत लगाई कि यह चुनाव तो क्या आने वाले कई चुनावों में भी मुझे हराना असम्भव है।"

ठाकुर साहब अपनी कार्य-कुशलता की प्रशंसा करते हुए बराबर अपनी मूंछों को ताव दे रहे थे। "नेता बनना राजनीति है। साम, दाम, दंड, भेद, इसमें सभी का प्रयोग किया जाता है। नेता बनने के भी गुण होते हैं ब्रह्मचारी जी!" अन्त में ठाकुर साहब ने कहा।

ब्रह्मचारी ने भारत की राजनीति पर दृष्टि डाली और इन खद्दरधारी महाशय के दर्शन किये। खद्दर की सुफ़ेदी के अन्दर काला नाग छुपा था, भारत का भविष्य-निर्माता? ब्रह्मचारी ने मन-ही-मन ठाकुर साहब की तुलना मंत्री संकटानंद से की और दोनों में उन्हें कोई अन्तर प्रतीत नहीं हुआ। दोनों एक दूसरे के गुरु जान पड़े। ठाकुर साहब की अवसरवादिता देखकर ब्रह्मचारी का मन विक्षुब्ध हो उठा।

ब्रह्मचारी न जाने क्या-क्या सोचता परन्तु सरोज के लिए यह कोई विशेष बात नहीं थी।

ब्रह्मचारी को यहां आकर कुछ जीवन का ज्ञान हुआ। जीवन के प्रत्येक पहलू का धुरंधर विद्वान यहां आकर टकराता था। ब्रह्मचारी के लिए प्रत्येक नया पहलू एक समस्या थी। वह विचारता था और उसका हल खोजने का प्रयत्न करता था।

: १६ :

इसी समय सरोज ने सामने संकेत करते हुए कहा, "लो मंत्री संकटानंद भी आ रहे हैं। आज का ठाट-बाट भी निराला है। रेशमी कुर्त्ता, रेशमी जवाहरकट और कैलिको मिल्ज़ की धोती है। हवा में कैसी फ़र-फ़र उड़ रही है। क्या बाँकापन है मंत्री जी की चाल में ? मद भरे हाथी की तरह झूमते चले आ रहे हैं।"

"मंत्री संकटानंद आ रहे हैं।" मुस्कुराकर ठाकुर साहब बोले।

मंत्री जी ने कमरे में प्रवेश किया। सरोज ने उठकर मंत्री जी का स्वागत किया और सम्मानपूर्वक सामने के सोफ़े पर बिठाया। सभी परिचित व्यक्ति थे। किसी का किसी को परिचय कराने की आवश्यकता नहीं थी।

"कहिये मंत्री जी ! किस मूज़ी पर आजकल हाथ साफ़ हो रहा है ?" मुस्कुराते हुए ठाकुर साहब ने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा।

"हमें तो आप जैसा मूर्ख कोई-न-कोई मिल ही जाता है ठाकुर साहब !" ईंट का जवाब पत्थर से देते हुए मंत्री जी बोले, "परन्तु आप कहिये कि अब किधर छापा मारने का विचार है ? कम-से-कम उस बेचारी विधवा को तो बख्श देते।" मंत्री जी ने ठाट के साथ आसन जमाते हुए कहा और सरोज की तरफ़ मुस्कुराकर बोले, "ठाकुर साहब ! दाई से पेट छुपाने का प्रयत्न न करना।"

विधवा की बात सुनकर ठाकुर साहब सहम कर रह गये। उनके चेहरे पर जो उपहास की रेखायें मंत्री जी को देख कर अंकित हुई थी वे सब लुप्त हो गईं। उनका मन उचाट हो उठा और वह किसी प्रकार वहाँ से भाग निकलने का प्रयत्न करते हुए घड़ी देखकर बोले, "ओह ! यह तो तीन बज गये। मुझे लोकसभा में जाना है।"

इतना कह कर खड़े होना ही चाहते थे कि मंत्री जी तिरछी दृष्टि से देख कर बोले, "इस तरह भागने से काम नहीं चलेगा ठाकुर साहब ! विधवा का माल अकेले-ही-अकेले आप हज्म नहीं कर सकते। यह आप निश्चित रूप से

जान लीजिए वरना....."

"वरना की क्या बात है मंत्री जी ! आपकी और हमारी तो पुरानी मित्रता है। कोठी पर किसी समय पधारिये। आपको अप्रसन्न करके भला क्या हम दिल्ली में रह सकते हैं ? इस समय जाना आवश्यक है, इसीलिए जा रहा हूँ।" विधवा की बात को वहीं दबाकर ठाकुर साहब उठ खड़े हुए।

"अच्छा-अच्छा !" कह कर मंत्री जी नाटकीय ढंग से मुस्करा दिये और ठाकुर साहब सरोज तथा ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश से नमस्कार करके चले गये।

इसके पश्चात् मंत्री जी से काफ़ी देर तक सरोज और ब्रह्मचारी की बातें होती रहीं। विधवा वाली घटना पर उन्होंने प्रकाश न डाला।

सरोज और ब्रह्मचारी ने उस ओर संकेत भी नहीं किया।

मंत्री जी ने सरोज और ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को अपने कार्यालय पर आने का निमंत्रण दिया।

दोनों ने मंत्री जी का निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया।

स्वामी ज्ञानानंद जी आजकल हिन्दू कोड बिल के विरूद्ध आन्दोलन के लिए टूर पर गये हुए थे।

: १७ :

सेठ गूदड़ मल जी आज बहुत प्रसन्न थे। सेठ जी बचपन से ही व्यवहार कुशलता के पंडित थे । रुपये को वह हाथ का मैल समझते थे । सर्वदा करोड़ों मे खेले थे । अंग्रेजी शासन-काल में अमन सभा, हिंदु महासभा और कांग्रेस इनके लिए तीनों संस्थाएं समान थीं । याचक आपकी ड्योढ़ी से खाली हाथ नहीं लौटता था, परन्तु व्यर्थ के याचकों को एक कौड़ी भी देना आप पसन्द नहीं करते थे । आज देकर कल सूद सहित लेना गूदड़ मल जी ने सीखा था, चाहे वह किसी रूप में क्यों न हो ।

सेठ जी के कई व्यापार थे । कपड़ा जूट और कोटोजम की मिलें थीं। इनके अतिरिक्त सट्टे के सेठ जी धनी थे । आपकी आवाज़ पर बाजार का भाव चढ़ता और उतरता था । जिस मार्केट में भी पहुंच जाते थे तहलका मच जाता था । देश और विदेश के बाजारों में सनसनी फैल जाती थी । आपके विषय में कहावत प्रसिद्ध थी 'आज का बाजार यह है और कल का सेठ गूदड़ मल जी जानें ।'

पाकिस्तान माल भेजने का परमिट न होने पर भी आपका कपड़ा बराबर पाकिस्तान जाता रहा । जूट का पाकिस्तान से आना बन्द था, परंतु आपका मिल बराबर चलता रहा । आपका कार्य भी सरकार की भांति प्रत्यक्षविभाग और गुप्त विभाग द्वारा संचालित होता था । बड़े-बड़े मंत्री और सैक्रेट्री आपके मकान पर मैत्री-भाव से आते थे । असेम्बली के मैम्बरों की तो कोई गिनती हीं नहीं थी । सेठ जी वास्तव में बड़े उदार व्यक्ति थे । सन् १९४२ के आंदोलन में जब उनके कई कांग्रेसी मित्र पकड़-पकड़ कर जेलों में ठूंस दिये गए तो आपने उनके परिवारों का भरण-पोषण का भार अपने ऊपर लिया था ।

आपके गुप्त-विभाग ने उस समय बहुत कुशलतापूर्वक कार्य किया था । उस कठिन काल की बोई हुई खेती को इस समय सेठ गूदड़मल जी काट रहे थे ।

कई बार आपको चोर-बाजारी में फाँसने का डिपार्टमेंट ने प्रयत्न किया परन्तु ऊपर की छत्रछाया में रह कर धन की शक्ति से आपने उस आपत्ति

का डटकर सामना किया। सेठ जी का बाल भी बांका न हो सका।

सेठ जी प्रत्येक वस्तु की क़ीमत चुकाने में दक्ष थे और इसीलिए वह सर्वदा जब किसी व्यक्ति से मिलते थे तो उसके शरीर का ही नहीं उसकी आत्मा का भी सौदा कर डालते थे। समय और मूल्य में संबंध स्थापित करना उन्हें खूब आता था।

इस समय सेठ जी 'भारत नाट्य समिति' का भारत के अकाल पीड़ितों की सहायतार्थ किया गया नाटक देखकर आ रहे थे। यह खेल भारतीय रंगमंच पर एक महत्वपूर्ण प्रदर्शन था, जिसमें भारतवासियों का भारतीय अकाल-पीड़ितों के प्रति कर्तव्य दिखाया गया था। देश के बड़े-बड़े नेता खेल देखने आये थे।

आज के समारोह में सेठ गूदड़ मल जी की दान राशि सबसे अधिक थी। सबने गूदड़मल जी के मुख पर दृष्टि डाली और प्रस्तुत एम० पीज ने तो ललचाई दृष्टि से उस ओर न जाने कितनी बार देखा।

नाटक की प्रधान कला अभिनेत्री दिल्ली की ख्याति-प्राप्त नर्तकी सरोज थी। खेल से अकाल-पीड़ितों की सहायतार्थ चार लाख रुपया प्राप्त हुआ। अकाल-पीड़ितों के जो दृश्य प्रस्तुत किये गये थे वे बहुत सजीव थे।

सेठ गूदड़मल जी कल ही जापान से वापस आये थे। सरोज से भेंट हुए दो मास हो चुके थे। जापान से उन्होंने एक पत्र सरोज को लिखा था परन्तु उसका कोई उत्तर उन्हें प्राप्त नही हुआ। सम्भवतः सरोज इसी नाटक के आयोजन में व्यस्त रही होगी, इसीलिए उत्तर न दे सकी, यह उन्होंने मन में अनुमान लगा लिया।

"सेठ जी गाड़ी आ गई।" तभी ड्राइवर ने आकर सूचना दी।

"बाहर ठहरो, अभी आते हैं।" कहकर सेठ जी खड़े हो गये।

बगल वाले कमरे में जाकर देखा कि आचार्य किशनचन्द जी एक पत्र लिखने में व्यस्त थे। सेठ जी बोले, "क्या लिख रहे है आचार्य जी!"

"कुछ नहीं।" सकपकाकर आचार्य किशनचंद जी पत्र छुपाने का प्रयास करते हुए बोले। परंतु इससे पूर्व कि वह छुपा पाते सेठ जी ने उसे उठा लिया और ऊपर दो पंक्ति पढ़कर बोले, "ओह! तो यों कहिये कि आप यह पत्र सरोज को लिख रहे हैं।"

"वास्तव में इस कला-अभिनेत्री ने आज प्रदर्शन में विशेष योग्यता का परिचय दिया। मैंने इससे पूर्व इतना स्वाभाविक अभिनय कभी नहीं देखा", विनय-भाव से आचार्य जी ने कहा, "क्या मेनका जैसा सौन्दर्य था ? देखते ही बनता था सेठ जी ! यदि स्वयं मेनका भी सरोज के सम्मुख उतर आती तो उसे भी लजा जाना होता। और वह अभिनेता भी खूब था। राधिका के साथ कृष्ण का रूप धर कर आया तो ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो स्वयं कृष्ण अवतार लेकर आ गये हों।

"आप भी कला के पूरे पारखी निकले आचार्य जी !" प्रशंसा की ध्वनि में सेठ जी ने कहा।

आचार्य जी ने आर्य समाज में रहकर पहले अछूतोद्धार किया। फिर लाला लाजपत राय की लोग में आकर एक अछूताश्रम के संरक्षक बन गये। कांग्रेस के ज़ोर पकड़ने पर एक दो चार बार जेल चले गये। अब लोकसभा के मेम्बर हैं और सरोज जैसी अप्सराओं के मुफ्त में नृत्य देखने को मिलते हैं। तभी तो बेचारे भावुकता में आकर यह पत्र लिख रहे हैं। सेठ जी आचार्य जी के इस छिछोरेपन पर मुस्कराकर बोले, "अच्छा अब खड़े हो जाइये। ड्राइवर गाड़ी लेकर आ गया है।"

"परन्तु चलना कहां है ?" आचार्य जी ने पूछा।

"यह आप न पूछा कीजिये आश्चर्य जी !" मुस्कराते हुए सेठ जी बोले।

आचार्य जी खड़े हो गये। आचार्य जी की सेठ जी से पुरानी मैत्री थी। सन् ४२ के आंदोलन में जब सरकार ने आपको नज़रबन्द कर दिया था तो सेठ जी आपके परिवार को बराबर ५०) मासिक सहायतार्थ भेजते थे।

आचार्य जी सेठ जी के इस भार से दबे थे और आजकल तो पेशाब करने के लिए जाने से लेकर लोकसभा जाने तक के लिए हर समय सेठ जी का ड्राइवर और उनकी कार आचार्य जी के नीचे रहती थी। सेठ जी का विचार अब आचार्य जी के लिए एक नई कार खरीदने का हो रहा था।

इसी प्रकार सेठ गूदड़ मल जी ने और भी न जाने कितने एम० पीज-शेम्पीज़ खरीदे हुए थे। धन और अहसान की मार से अपना नमक खिला-खिला कर न जाने कितनी आत्माएं उम्होंने कम्यूनिस्ट भाषा में प्रोलितेरियत-अधिकारों का भक्षण करने पर बाध्य कर रखी थीं। सेठ जी का प्रतिक्षण मुस्कुराता हुआ चेहरा

'ना' कहना तो किसी को जानता ही नहीं था। कचहरी के चपरासी से लेकर लोक सभा के सदस्यों तक सब आपसे प्रसन्न थे। सभी की मांगों में वह यथा-योग सहयोग देना जानते थे और बड़े गर्व के साथ खुल्लमखुल्ला कहा करते थे, "भाई जो चाहो ले जाओ, परंतु आप जानते ही हैं कि तेल तो तिलों में से ही निकलता है। मेरे पास तो जो कुछ भी है वह सब राष्ट्र की सम्पत्ति है।"

गाड़ी सरोज की कोठी पर रुकी। वहां सरोज को कांग्रेचुलेशन्स देने वालों की कमी नहीं थी। कोठी के सामने वाले लॉन में कुर्सियां पड़ी थीं। ताड़ के गमले के पास सरोज बैठी थी और सामने कुर्सियों पर वकील साहब, ठाकुर राजबहादुर सिंह, मंत्री संकटानंद इत्यादि विराजमान थे। सेठ जी का स्वागत बड़ी आवभगत के साथ किया गया और साथ ही आज आचार्य किशनचंद जी का सेठ जी ने सरोज से परिचय कराया। ठाकुर साहब आचार्य जी से पूर्व परिचित थे परंतु वह उनके लोकसभा में बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर मन में कुढ़ने लगे थे।

"ओह आचार्य जी!" व्यंग्य के साथ ठाकुर साहब बोले। "आपके अन्दर भी ललित-कलाओं के प्रति स्फूर्ति का जागरण होने लगा। यह हर्ष का विषय है। अब कांग्रेस के कार्यक्रम में नीरसता के स्थान पर सरसता का प्रादुर्भाव होगा। नवीन जागरुकता का उदय होगा।" कहकर ठाकुर साहब मुस्कुरा दिये।

आचार्य जी ठाकुर साहब के इस मर्मभेदी तीखे व्यंग्य को सहन न कर सके और तिलमिलाकर आँखें चढ़ाते हुए बोले, "क्षमा कीजिये ठाकुर साहब! गधे पर वेद लाद देने से गधा आचार्य नहीं बन जाता। नाच और गानों की मंडलियों में मिरासियों के साथ कूल्हे मटकाने से ललित-कला के मर्म को नहीं पहचाना जाता।"

केवल इतना कहकर उन्होंने गर्व के साथ सेठ जी के मुस्कुराते हुए मुख-मंडल पर दृष्टि डाली।

"ठाकुर साहब आप नहीं जानते, परंतु मैं आचार्य जी को भली प्रकार जानता हूं। आप संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं और मेघदूत तथा शकुन्तला आपको कंठस्थ हैं। लाजपत राय-आश्रम के अनाथ अछूत बच्चों को ललित कला का पाठ पढ़ाते हुए मैंने आपको कई बार देखा है।" कहकर मंत्री संकटानंद ठाकुर साहब के मुख पर व्यंग्य-दृष्टि डालकर मुस्कुरा दिये।

मंत्री जी का मुस्कुराना था कि ठाकुर साहब के हास्य का बांध टूट गया और वह खिलखिला कर हंसते हुए बोले, "खूब कहा आपने मंत्री जी ! खूब कहा। अनाथ, अछूत बालकों को ललित कला का पाठ पढ़ाते-पढ़ाते आज आचार्य जी सरोज को ललित कला का पाठ पढ़ाने आये हैं।"

आचार्य जी की तरफ़ से गंभीर वातावरण को संभालते हुए मुस्कुराकर सरोज बोली, "यह कोई विशेष बात नहीं। आचार्य जी विद्वान हैं। यदि मुझे कोई शिक्षा दें तो मैं उसे सहर्ष ग्रहण करने को उद्यत रहूंगी।"

विनम्र भाव से ये शब्द कहकर सरोज ने आचार्य जी के हृदय को आन्दोलित कर दिया और उन्होंने आज प्रथम बार अपने जीवन में उस आनंद का अनुभव किया जिसे परमानंद कहा जा सकता है। इस आनद में विजय की पुट थी और और वह भी ठाकुर साहब पर। आज उन्होंने ठाकुर साहब को दिखा दिया कि यह सुधार का युग है, सामन्तशाही का युग नहीं। जिस क्षेत्र में भी जाओगे, विजय आचार्य की ही होगी, ताल्लुकेदार की नहीं।

मंत्री संकटानन्द इस नोंक-झोंक में आनन्द ले रहे थे। वकील साहब अपना फाइल लिए बैठे थे और उनकी मुख-मुद्रा आज बहुत ही गंभीर बनी हुई थी। उन्हें इस हास-उपहास में आनन्द नहीं आ रहा था। वह निश्चय करके घर से निकले थे कि आज इस केस का अन्तिम निर्णय करके ही लौटेंगे।

उन्हें कुछ परेशानी अवश्य थी परन्तु १००) मंत्री संकटानन्द जी से और १००) सरोज से उन्हें एडवांस प्राप्त हो चुके थे, इसलिए कोई विशेष चिन्ता की बात नहीं थी। अन्य व्यापारों में माल न लेने पर एडवांस लौटाया भी जा सकता है परन्तु वकालत में जो रुपया एक बार वकील के पास गया तो वह बस हज़्म ही समझा जाता है।

: १८ :

इसके पश्चात चाय पार्टी में बैठ कर इधर-उधर की न जाने कितनी बातें हुई। नृत्य-कला और संगीत-कला को लेकर वार्ता चली। आचार्य जी ने सरोज की प्रशंसा के पुल बांधे। संस्कृत के सभी प्रशंसा-सूचक शब्द, जो किसी भी सुन्दर अभिनेत्री के लिए प्रयुक्त किये जा सकते थे, सरोज के लिए किये।

ठाकुर साहब ने आज अपने प्रभाव का अनुभव किया। एक ताल्लुकेदार का पुत्र होने के नाते ऊंचे दर्जे की सभा-सोसाइटियों में उठना बैठना आपका अवश्य रहा था परन्तु विद्या देवी के मन्दिर का प्रसाद तो आप केवल कक्षा एक तक ही प्राप्त कर सके थे। यही कारण था कि लोकसभा में भी आपकी आवश्यकता केवल हाथ उठाने के ही अवसरों पर होती थी यह सब होने पर भी आप कार्य-कुशल व्यक्ति थे, इसलिए यहाँ पर भी आचार्य जी का बढ़ता हुआ प्रभाव देखकर आपने हाथ उठाने की ही नीति का अनुसरण किया।

जब ठाकुर साहब और आचार्य जी की हाँ-में-हाँ मिलने लगी तो सेठ जी ने भी कुछ आगे बढ़ने का निश्चय किया और इस प्रकार अपने व्यापारिक-क्षेत्र की कुशलतापूर्वक रक्षा करते हुए आपने आज के आमोद-प्रमोद में भाग लिया।

मंत्री संकटानन्द का रंग इस समय कुछ फीका पड़ता जा रहा था। एम० पीज और सेठ गूदड़मल जी के रहते हुए सरोज की कृपाकोर संकटानन्द के मुख मंडल से टकरानी असम्भव थी।

मंत्री संकटानन्द सरोज के दुर्व्यवहार पर कुढ़ रहे थे। सेठ गूदड़मल से सरोज का परिचय मंत्री संकटानन्द ने ही कराया था परन्तु आजकल मंत्री जी और सेठ जी की कुछ तनातनी चल रही थी। मंत्री जी धड़ल्ले के आदमी थे, जिन्होंने जीवन में झुकना नहीं सीखा था।

सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए वह वकील साहब की तरफ मुंह करके बोले, "वकील साहब मैंने सुना है कि कल अदालत में कोई चोर बाजारी का मुकदमा आया था और कहते हैं कि उस केस में किसी

बदमाश मालिक ने अपने सेल्ज मैनेजर को फंसवाकर उसको सज़ा करा दी।" बहुत गम्भीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

"जी, मंत्री जी!" फुदककर बहुत देर बाद बोलने का अवसर पाते हुए वकील साहब बोले, "जज साहब ने फैसला सुनाते हुए स्वयं कहा कि यह सच है कि इस केस में बदमाशी मालिक की ही है परन्तु न्याय की दृष्टि से दंड मैनेजर को ही मिलेगा।"

"नीचता की पराकाष्ठा है।" मंत्री संकटानन्द ने अपने मोटे-मोटे नथनों को फुलाकर पैर पर पैर रखते हुए कहा, "सुना सरोज तुमने। अब कहो वह राज्य जिसमें बकरों के कसूर पर मुर्गे हलाक किये जायेंगे कितने दिन चलेगा?"

इस बुराई को सहन न करते हुए शास्त्री जी बोले, "महाशय! इसमें सरकार का क्या दोष है? न्याय की दृष्टि से जो दोषी निश्चित होगा उसी को तो दंड दिया जायगा।"

यह सुनकर मंत्री जी कड़ककर लाल-पीली आंखें निकालते हुए बोले, "जी हाँ! सरकार का इसमें कोई दोष नहीं। आपका भी इसमें कोई दोष नहीं और सेठ गूदड़ मल का भी इसमें कोई दोष नहीं। शास्त्री जी! मैं आप लोगों की पोल-पट्टियां खूब जानता हूं। मुझ से पेट छिपाने का प्रयास न कीजिए। बताइये क्या यह गलत है कि आप जज साहब की कोठी पर गूदड़मल की सिफारिश के लिए तीन बार गये!" और इतना कहकर मूंछों के बाल तिड़का कर नथने फुलाते हुए मंत्री जी ने आखों को तीन बार खोल-मीच की।

मंत्री जी की बात सुनकर शास्त्री जी का दम खुश्क हो गया और वह खिसर-खिसर करने लगे।

"सत्य-मार्ग पत्र की स्थापना मैंने तुम जैसे पाखंडी, देश-द्रोही तथा जनता-द्रोही व्यक्तियों की पोल खोलने के लिए ही की है। इसी सप्ताह के विशेषांक में देखना तुम्हारे किन-किन षड्यंत्रों की पोल खोली जायगी!"

इतना कहकर सीने में उभार लाते हुए मंत्री जी ने आंखें लाल करके आकाश की ओर देखा।

"मेरे षड्यंत्रों की पोल?" क्रोध में भरकर गूदड़मल जी बोले, "मेरे ही पैसे से चले हुए पत्र में मेरे ही षड्यंत्रों की पोल।" गूदड़मल का बदन भयभीत

सा होकर कांप उठा।

मंत्री जी ज़ोर से खिलखिला कर हंस पड़े। उनके हंसने में कितना भारी व्यंग्य छुपा हुआ था इसे केवल सरोज ही पहचान सकती थी। शास्त्री जी अपने को कोस रहे थे कि क्यों व्यर्थ वह यहां आए।

उनका इतना अपमान भी हो सकता है, यह वह स्वप्न में भी अनुमान नहीं लगा सकते थे।

ठाकुर साहब मन में मंत्री जी की निर्भीकता और गंभीर खोजों की सराहना कर रहे थे।

शास्त्री जी के हृदय पर एक प्रकार का आतंक सा छा गया। उन्होंने एक दो बार मंत्री जी के मुख पर देखने का प्रयत्न भी किया परंतु उनमें साहस न हुआ और भयभीत होकर उन्होंने अपना मुंह दूसरी ओर को कर लिया।

"मंत्री जी ! मैंने सुना है कि वह सेठ बड़ा ही धूर्त है जिसने अपने मैनेजर को सजा कराई।" गंभीरतापूर्वक वकील साहब बोले।

वकील साहब का गांभीर्य देखकर सरोज को हंसी आ गई और सरोज की हंसी में हंसी मिला कर ठाकुर साहब भी हंस पड़े।

मंत्री जी और भी गंभीर बनकर बोले, "अच्छा वकील साहब ! आपकी राय में ऐसे सेठों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए ?"

"गोली से उड़ा देना चाहिए।" क्रोध में भरकर कम्युनिस्ट-भाषा में वकील साहब बोले।

"और उनकी सहायता करने वाले व्यक्तियों को क्या दण्ड मिलना चाहिये ?" मंत्री जी ने पूछा।

"आजन्म कारावास।" वकील साहब ने कहा।

: १९ :

सबकी आंखें इस समय मंत्री जी के मुख पर टिकी हुई थीं कि इतने में एक ओर से ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश आते दिखाई दिए। ब्रह्मचारी को आते देख कर सरोज खड़ी हो गई और सरोज का खड़ा होना था कि मंत्री जी को छोड़ कर शेष सभी उपस्थित व्यक्ति खड़े हो गये। शास्त्री जी को भी खड़ा होना पड़ा क्योंकि यह लोक सभा नहीं थी। वह यहां आये थे कला केन्द्र में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने।

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश ने सर्वप्रथम मंत्री संकटानंद को प्रणाम किया और मंत्री जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया। इसका सरोज को छोड़ कर, शेष सभी पर प्रभाव पड़ा।

"नाटक के सफल निर्देशन के लिए आनंदप्रकाश जी आप बधाई के पात्र हैं।" गहन गंभीरता के साथ मंत्री जी ने कहा। "आप जैसे कलाकार को स्वामी ज्ञानानंद के धूल भरे कमंडल से निकाल लाने का श्रेय सरोज जैसी सफल अभिनेत्री को ही प्राप्त हो सकता है।"

"परंतु····"

"परंतु नहीं ब्रह्मचारी ! तुम हमें अंतर्यामी समझो। सरोज के अभिनय में तुमने प्राण फूंक दिए। मैंने प्रथम बार इतनी सजीवता सरोज के अभिनय में देखी थी।" कहकर मंत्री जी ने स्वयं सरोज से अपनी बात का समर्थन कराने के लिए उसके मुंह पर दृष्टि डाली और साथ-साथ सभी ने सरोज के मुख पर देखा।

सरोज के मुख से एक भी शब्द न निकला परंतु उसकी मौन भाषा मंत्री जी की बात का समर्थन कर रही थी।

"नाटक का अभिनय वास्तव में सराहनीय था। भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के सभी गुण निर्देशन में थे।" शास्त्री जी ने प्रशंसासूचक स्वर में कहा।

"कमाल था, कमाल ! बस सरोज हम तो यही कहेंगे।" ठाकुर साहब बोले और बहुत ही ललचाई हुई दृष्टि से उन्होंने सरोज की छटा को अपनी आंखों में भरने का प्रयत्न किया।

"इससे अधिक आप और कुछ कह भी क्या सकते हैं ? नाट्य-शास्त्र का आपको ज्ञान नहीं । अभिनय और निर्देशन क्या होता है, यह आपने पढ़ा नहीं, रस और पात्रों के क्रिया-कलापों से आप अनभिज्ञ हैं ठाकुर साहब ! यह कला है और कला की अभिव्यंजना करना लोक सभा में मत देते समय हाथ उठाना नहीं होता ।" गंभीरतापूर्वक अपनी धोती की चूनट संवारते हुए शास्त्री जी बोले ।

ठाकुर साहब को आज मात पर मात पड़ रही थी, चोट पर चोट हो रही थी। ठाकुर साहब का पलड़ा कुछ हल्का देखकर ब्रह्मचारी बोले, "यह बात नहीं है शास्त्री जी ! केवल अभिव्यंजना ही सब कुछ नहीं होती । केवल विश्लेषण के ही आधार पर कला जीवित नहीं रह सकती । कला को आवश्यकता है हृदयवान व्यक्तियों की और ठाकुर साहब के पास वह रसिक-हृदय है जिसमें कला के लिए कसक है, संवेदना है, आकर्षण है। ठाकुर साहब में ये सभी गुण वर्तमान हैं ।"

ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश के मुख से अपनी प्रशंसा सुनकर ठाकुर साहब फूल गये और अब उन्हें अपने विषय में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं रही । मंत्री संकटानंद ने भी ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश की बात का समर्थन किया ।

सेठ गूदड़मल जी बहुत देर से चुप थे । आपकी कला-प्रशंसा सर्वदा एकांत में मुखरित होती थी । इस समय वह अपने को व्यापारिक कनवैसिंग ट्रिप पर समझ रहे थे और शास्त्री जी का ही मनोरंजन कराना उनका लक्ष्य था । परंतु मनोरंजन के स्थान पर यहां छिड़ गया शास्त्रीय विवेचन और उसमें भी कभी-कभी तीखापन आ जाता था ।

सेठ गूदड़मल ठाकुर साहब के भी अभिन्न मित्रों में से थे और ठाकुर साहब को साइकिलों में पांच लाख का मुनाफा आपने ही कराया था । साइकिल के उस लाइसेंस के लिए ठाकुर साहब और शास्त्री जी ने प्रयत्न किया था, परंतु शास्त्री जी को सफलता न मिल सकी । ठाकुर साहब भी व्यवहार-कुशल व्यक्ति थे, इसलिए सेठ जी से उनका कोई विशेष संबंध है इस रहस्य को वह यहां उद्घाटित नहीं करना चाहते थे । सेठ जी का फाइनेंस प्रत्येक ठोस प्रोपोज़ल के लिए उद्यत रहता था, चाहे वह ठाकुर साहब का हो अथवा शास्त्री जी का ।

ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को देखकर सेठ गूदड़मल अवश्य कुछ विचार में थे और उनकी आंखों में खटक भी रहा था । ब्रह्मचारी का सरोज के साथ रहना देख कर सेठ जी की आंखों से पिछले दिन के नाटक का नशा उतर गया और

उन्हें वह नाटक बिलकुल फीका और सारहीन प्रतीत होने लगा। उन्हें कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो उनका कुछ छिन गया हो।

अभी दो मास पश्चात वह जापान से लौट कर आए थे। जापान से उन्होंने सरोज को एक पत्र लिखा था और उसका उत्तर उन्हें नहीं मिला था। ब्रह्मचारी के यहां आने से पूर्व पत्र का उत्तर न देने का कारण वह नाटक की व्यस्तता को समझ रहे थे परंतु अब उनके मन की बेचैनी बढ़ने लगी और वह अधिक देर और न ठहर सके। कुछ विचलित से भाव में वह खड़े होकर बोले, "अच्छा सरोज ! अब चले।"

शास्त्री जी भी सेठ जी के साथ खड़े हो गये और सरोज दोनों को उनकी कार तक छोड़ने के लिये गई। चलते समय शास्त्री जी और सेठ जी दोनों ने प्रणाम किया।

समय काफ़ी हो चुका था। मंत्री जी और ठाकुर साहब भी विदा होने की राह देख रहे थे और ज्यों ही सेठ जी की कार के पास से सरोज लौटी तो इन दोनों ने भी विदा ली ! मंत्री जी को ठाकुर साहब अपनी कार में बिठाकर साथ ले गये।

अब रह गये केवल वकील साहब। सब के चले जाने पर वकील साहब ने अपना फ़ाइल खोलना प्रारंभ किया और उसे खोलते देख कर सरोज ने बीच ही में रोकते हुए विनम्र भाव से कहा, "इस समय बहुत थकी हुई हूं, इसे कल पर रहने दीजिये।"

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश एक ओर को मुंह करके मुस्कुरा रहे थे।

वकील साहब अपना फ़ाइल ले, कल इसी समय आने का निश्चय करके विदा हुए।

सब के चले जाने पर सरोज ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश की ओर सरल भाव से देखकर बोली, "ब्रह्मचारी ! तुमने वास्तव में मेरे अभिनय में प्राण फूंक दिये।"

"सच" आश्चर्य प्रकट करते हुए ब्रह्मचारी ने सरोज के मुख पर देखा।

"सच ब्रह्मचारी ! वास्तव में सच ! मैंने जीवन में प्रथम बार इतना सजीव अभिनय किया।" ब्रह्मचारी के नेत्रों में नेत्र डालकर सरोज बोली।

इसके पश्चात् दोनों मौन हो गये और इसी मौन-मुद्रा में कुछ देर बैठे रहकर एक दूसरे का हाथ हाथ में लिये खड़े होकर कोठी के अंदर चले गये।

: २० :

बेला का मन वकील साहब के बंधन में इस प्रकार छटपटाता था कि जिस प्रकार अहेडिए के जाल में फंसकर कोई चिड़िया इधर-उधर फुदकती है, परंतु उड़ नहीं पाती। बेला को स्वतंत्रता थी केवल इधर-उधर देखने की जिस प्रकार जाल में फंसी हुई चिड़िया को होती है, परंतु डाल-डाल और पात-पात पर फुर्र-फुर्र करके वह नहीं उड़ सकती थी। बेला के हृदय का रहस्य कोई जान नहीं पाता था और वह यों ही किसी पर उसे प्रकट भी नहीं कर सकती थी।

मंत्री संकटानंद प्रथम भेंट में ही इस रहस्य को ताड़ गये।

वह इस घर के पूज्य गुरुदेव बन बैठे और उनका मान वकील साहब भी करते थे। वह कभी-कभी वकील साहब को कुछ रुपये देकर उनके विशेष शुभ-चिंतक बन गये थे। वकील साहब उनमें श्रद्धा रखने लगे थे।

अब मंत्री जी वकील साहब के घर इस प्रकार पहुंच जाते थे मानो वह उनका अपना ही घर है और बेला को तो 'बेला' कहकर वह ऐसे पुकारते थे मानो वह सचमुच उनकी पुत्री हो। यहां उनका नित्य का आना जाना बन गया था।

वकील साहब तथा बेला के मर्मस्थलों का पूर्ण परिचय मंत्री जी को प्राप्त हो चुका था। उन्हें किस प्रकार हंसाया और रुलाया जा सकता है यह रहस्य वह जान गये और किस स्थान पर चोट करने से वह फुदकने या बिलबिलाने लगेंगे इस भेद से उन्होंने पूर्ण परिचय प्राप्त कर लिया था। इस समय बेला के इतना निकट अन्य कोई व्यक्ति नहीं था जितने मंत्री संकटानंद। बेला के दुःख में रोना और हर्ष में प्रसन्न होने का अभिनय करना वह जानते थे और भारी मन को सांत्वना देने की कला में भी वह पूर्ण रूप से प्रवीण थे।

बेला के हृतंत्री के तारों पर उंगलियां फेर कर कब क्या स्वर निकाला जा सकता है इसका उन्हें पूर्ण ज्ञान हो गया था। उनके हाथों में आ चुका था बेला का मन, बेला का हृदय और बेला की भावनायें तथा कल्पनायें।

आज तीन बजे ही मंत्री संकटानंद ठाकुर राजबहादुर सिंह को लेकर बेला

के मकान पर पहुंच गये। बेला अपने कमरे में बैठी ग्रामोफ़ोन-रिकार्ड सुन रही थी। वकील साहब के कारावास में बेला के पास ग्रामोफ़ोन और रेडियो ही दिल बहलाने के साधन थे।

मंत्री जी को देखकर बेला खिल उठी। मानो उसे कोठी से बाहर की हवा मिल गई।

अपना ही घर समझते हुए मंत्री जी ने ठाकुर साहब को बैठक में बिठाया। बेला पहाड़ी नौकर को चाय बनाने का काम सौंप कर अतिथियों के स्वागत के लिए बैठक में आगई और मंत्री जी ने बेला का परिचय ठाकुर राजबहादुर सिंह से कराया, "इनके विषय में मैंने पहले भी कई बार तुमसे कहा है बेला! यही तो हैं वह जिनकी स्पीचों से संसद में बड़े-बड़े नेता थर्रा उठते हैं और मंत्री लोग भी बंगलें झांकने लगते हैं। क्या शेर जैसी सूरत पाई है ठाकुर साहब ने।

परंतु बेला! यह ऊपर से जितने सख्त दिखाई देते हैं दिल के उतने ही कोमल हैं। इनके हृदय में कोमलता है, भावुकता है, सरसता है, मिठास है और प्रेम की वह मधुर स्मृति है कि जिसकी पूर्ति आज तक जीवन में कोई नहीं कर सका।" मंत्री जी ने इतना सब कह कर ठंडा सांस लिया।

मंत्री जी के साथ ही साथ ठाकुर साहब ने भी एक लम्बा सांस लेकर मंत्री संकटानंद के कथन का अनुमोदन किया और बिना एक शब्द भी मुख से कहे ललचाई दृष्टि से बेला के मुख पर देखा।

मंत्री जी ने फिर कहना प्रारम्भ किया, "भारत का दुर्भाग्य है बेला! कि यहां पर बेमेल जोड़े बांधे जाते हैं। मानव को पैसे की तराजू पर तोला जाता है। नारी के हृदय का मूल्यांकन करना कोई नहीं जानता।"

इतना कहकर मंत्री जी ने अपना रुख ठाकुर साहब की तरफ़ किया और संवेदनापूर्ण स्वर में बोले, "ठाकुर साहब! यह बेला है। इसे मैं अपनी पुत्री के समान मानता हूं। मेरा हृदय रो उठता है जब मैं यहां आता हूं। कहां यह फूल सा सलौना मुखड़ा और कहां वह खूसट, चार हड्डियों का ढाँचा, वकील का बच्चा। परंतु क्या किया जाये? दुर्भाग्य है बेचारी का। पिता ने धन के लालच में वकील के गले मंढ़ दी। जीवन भर तड़प-तड़प कर इस कारावास में जीवन व्यतीत करना होगा इसे।"

"हृदय विदीर्ण होने लगता है मंत्री जी ऐसी कथा सुनकर।" बहुत ही

गम्भीर स्वर में ठाकुर राजबहादुर बोले। "वास्तव में यह भारत का दुर्भाग्य है। भारत की देवियों की इसी दुर्दशा को देखते हुए हमने 'हिन्दू कोड बिल' प्रस्तावित किया है। उसके पास होने पर हिंदू-नारियों को पूर्ण स्वतंत्रता होगी। स्त्रियां अपने पति को नापसंद करेंगी, उन्हें तलाक़ देने का पूर्ण अधिकार होगा।" कहकर गर्व के साथ ठाकुर साहब ने अपना सीना तानकर मूंछों पर ताव दिया।

ठाकुर साहब ने तलाक़ का ज़ोरदार शब्दों में समर्थन किया और मंत्री जी ने भी विशेष टीका-टिप्पणी करना उचित नहीं समझा।

मंत्री जी ने भेदपूर्ण दृष्टि से बेला के मुख पर देखा तो उसके नेत्र सजल हो रहे थे। मंत्री जी की भावुकता बांध तोड़ कर वह निकली और वह बेला के पास सोफ़े पर जा बैठे। उन्होंने अपनी जेब से सिल्क का रूमाल निकाल कर बेला के नेत्र पोंछते हुए कहा "बेटी चिंता न करो। यदि भगवान ने चाहा तो तुम्हें बहुत शीघ्र इस बंधन से मुक्त करके स्वच्छंद वायुमंडल में श्वास लेने योग्य बना दूंगा। ठाकुर साहब को मैं आज तुम्हारे ही बंधन दिखाने के लिये लाया हूं। यह संसद के सदस्य हैं। क्या कुछ नहीं कर सकते?"

इतना कह कर मंत्री जी ने प्यार से बेला को अपनी बगल में भरते हुए बेटी-बेटी कह कर हंसने के लिए कहा।

बेला के मुख पर भी एक आशा और उमंग के साथ मुस्कुराहट की रेखा दौड़ गई। दांतों की पंक्ति एक बार सच्चे मोतियों की लड़ी के समान दमक उठी और वह मस्ती के साथ झूमती सी उठकर घर के अन्दर चली गई।

ठाकुर साहब ने मंत्री जी को आंखों ही आंखों में संकेत किया और मंत्री जी ने गर्व के साथ कहा, "हम खाली तीर चलाना नहीं सीखे ठाकुर साहब! लेकिन काम के बाद आंखें बदलने वाले आदमी हो तुम।" और तनिक मुस्कुरा कर मंत्री जी ने अपनी झींगुर जैसी मूंछों पर हाथ फेरा।

"क्या बात करते हैं मंत्री जी! ठाकुर की बात में कभी बल नहीं आ सकता।" इतना कह कर ठाकुर साहब ने अपने खिजाब लगे बालों पर हाथ फेरा और मूंछों की दो पैनी नोकों को ऐंठते हुए कहा "रघुकुल रीति सदा चलि आई, प्राण जायं पर बचन न जाई।' मैं नहीं कह रहा हूं मंत्री जी! गोस्वामी तुलसी दास जी लिख गये हैं।" और फिर जरा बन-ठन कर बैठ गए। रेशमी शानदार अचकन में जो एक दो सलवटें पड़ गई थीं उन्हें क़रीने के साथ निकाल

कर जरा कृतज्ञतापूर्वक मंत्री जी के मुंह पर दृष्टि डाली।

"समय आने पर देखेंगे ठाकुर साहब! समय से पहले गाल बजाना मैं नहीं जानता। मैं तो काम करना जानता हूं।" मंत्री जी ने कहा।

इसी समय अंदर से किसी के आने का शब्द हुआ और दोनों गंभीर मुद्रा में बैठ गये। पहाड़ी चाय लेकर आगे-आगे था और बेला पीछे-पीछे।

मंत्री जी ने छोटी गोल मेज़ बीच में सरका ली और पहाड़ी ने चाय की ट्रे उस पर रख दी। चाय के साथ नमकीन और मिठाई भी थी।

ठाकुर साहब ने बेला से भी अपने साथ चाय चाय पीने का आग्रह किया परन्तु वह सकुचा रही थी।

मंत्री जी बेला की परिस्थिति को समझते थे इसलिए उन्होंने स्वयं ही उसे मना कर दिया और वह पास वाली कुर्सी पर बैठ गई।

बातों का विषय बदल गया। मंत्री जी ने अपने कार्यालय की बात छेड़ छेड़ दी। ठाकुर साहब विशेष दिलचस्पी के साथ बोले, "तो मंत्री जी आपके 'हिंदू कोडबिल विरोधक मंडल' का क्या प्रोग्राम है?"

'उसके प्रोग्राम की बात न पूछिए ठाकुर साहब! लोकसभा के सामने सत्याग्रह किया जायगा। स्वयं स्वामी ज्ञानानन्द उस सत्याग्रह का नेतृत्व करेंगे।

परन्तु इधर कुछ दिन से, जब से बेटी बेला के सम्पर्क में आया हूं, मेरा मन अपने मंडल के प्रति भी विद्रोह करने लगा है ठाकुर साहब! मैं प्राचीन संस्कृति का पक्षपाती अवश्य हूं परन्तु जब प्राचीन रूढ़ियों के जाल में बेला जैसी सुकुमार बच्चियों को फँसा पाता हूँ तो 'हिंदू कोड बिल' में मेरी आस्था होने लगती है।" गंभीरतापूर्वक चाय की प्याली में चुस्की लगाते हुए मंत्री जी बोले।

ठाकुर साहब ने समोसा कतरा और मुस्कुराकर कहा, "आपके हृदय की प्रगतिवादी विचार धारा अवरुद्ध नहीं हो सकती, मंत्री जी! बेला के अवरुद्ध पंथ को मुक्ति प्रदान करने के लिए आपके हृदय में जो क्रांति की ज्वाला सुलग रही है वह सम्भवतः लैनिन और स्तालिन के दिलों में भी प्रोलीतेरियत क्लास की अवरुद्धगति को देखकर नहीं सुलगी हो। आप जैसे निस्वार्थ व्यक्तियों के हाथों में यदि भारत की पतवार आजायें तो भारतीय-मानव-सुख

की साँस ले।" ठाकुर साहब ने मंत्री जी की प्रशंसा के पुल बाँध कर कहा।

बेला ने मंत्री जी के महत्व को सही-सही आज परखा जब ठाकुर राज-बहादुर के मुंह से उनकी इतनी प्रशंसा सुनी। उसने अपने को धन्य माना कि उसका सम्पर्क देश की ऐसी महान् आत्माओं से हुआ कि जिनका यश और गौरव आज भारत के कोने-कोने में आच्छादित है।

बेला का मन मुक्त होने के लिए फड़फड़ा रहा था।

इन महानुभावों का सम्पर्क पाकर वह अवश्य उन्नति के पथ पर अग्र-सर हो सकेगी और इस गर्त से निकल कर स्वच्छंद वातावरण में विहार करेगी। बेला का मन भविष्य के स्वप्नलोक में भ्रमण करने लगा और वह मन-ही-मन कृतज्ञ हो उठी मंत्री जी की, जिन्होंने इतने बड़े व्यक्ति के सम्पर्क में उसे ला दिया। धूलि-कण को उठाकर राजमुकुट पर रख दिया।

मंत्री जी ने इसके पश्चात भारतीय इतिहास की विदूषी नारियों के चरित्रों पर प्रकाश डाला। आधुनिक प्रगतिवाद के प्रकाश में प्राचीन रूढ़िवाद का खंडन करते हुए नारी की स्वतन्त्रता को शास्त्रोचित ठहराया।

उन्होंने कहा, "जब एक विधवा दूसरा विवाह कर सकती है तो क्यों नहीं एक अयोग्य व्यक्ति की स्त्री को यह अधिकार प्राप्त हो सकता? अयोग्य व्यक्ति मृतक से भी अधिक कष्ट-प्रद है।"

मंत्री जी ने प्याली हाथ में उठाकर कहा, "बेला की चाय बड़ी लाजवाब होती ठाकुर साहब!"

ठाकुर साहब ने चुसकी लगाते हुए गर्दन हिला-हिला कर मंत्री जी की बात का समर्थन किया।

"मैं कहता हूं सरोज की चाय में भी मुझे कभी इतना आनन्द नहीं आता जितना बेला की चाय में आता है। आप जानते हैं इसका कारण ठाकुर साहब?" मंत्री जी बेला की ओर मुस्कुराते हुए बोले।

"भाई हम तो नहीं जानते, परंतु हां जानने की उत्कंठा अवश्य है दिल में।" ठाकुर साहब ने कहा।

"क्या कारण है तनिक मैं भी जानूं।" सरल मुस्कान के साथ बेला बोली, "मने तो सुना है कि सरोज की चाय पीकर दिल्ली के बड़े-बड़े व्यक्ति अपने को भूल जाते हैं।"

"भूल जाते होंगे, मुझे तो सच जानो बेला ! जो आनंद तुम्हारे हाथ की चाय में आता है वह अन्य किसी के हाथ की चाय में नहीं आता !"

"इसका कारण मैं बतलाता हूं।" बीच में ठाकुर साहब बोल उठे, "बेला की चाय में अपनापन रहता है और सरोज की चाय में चलतापन।"

"बिलकुल ठीक !" मंत्री जी बोले।

"बस रहने दीजिये मंत्री जी ! शायद चाय पसंद नहीं आई है। इससे आप व्यंग्य कस रहे हैं।" मुंह बनाकर बेला ने कहा।

"पसंद नहीं आई ! यह तुम क्या कह रही हो बेला ? तुम्हारी चाय और पसंद न आए। मैं तुम्हारे दिल को पहचानता हूं बेला ! प्रेम-भाव छुप नहीं सकता। भक्त अपने भगवान में जब लीन हो जाता है तो उसकी भक्ति उसके नेत्रों में मूर्तिमान रूप धारण करके उतर आती है। तुम्हारे दिल के भाव तुम्हारी नेत्रों की पुतलियों में साकार हो उठे हैं। मुझ पर तुम्हारे दिल का कोना-कोना खुला हुआ है बेला !" बहुत गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

बेला को लगा मानो कि मंत्री जी के रूप में श्याम वर्ण स्वयं कुछ वेश बदल कर अन्तर्यामी कृष्ण मुरारी ही सामने सोफे पर बैठ चाय पी रहे हैं।

इसी समय सामने कोठी के दरवाजे से वकील साहब घुसते दिखाई दिए। उन्हें आता देख तीनों सतर्क होकर बैठ गये। वकील साहब ने अंदर आते ही मंत्री जी को नमस्कार किया और ठाकुर साहब को अपने मकान पर देखकर वकील साहब फूले ही न समाए। इतना बड़ा आदमी और उनके मकान पर !

वकील साहब ने आदर भाव से नमस्कार किया। उसके पश्चात मंत्री जी बोले, "ठाकुर साहब ! हमारे वकील साहब दिल्ली में अपना सानी नहीं रखते। कानून तो मानो आपका कान पकड़ा चेला है। आपकी प्रखर-बुद्धि के सामने कानून इस प्रकार नाचता है जैसे मदारी की डुगडुगी पर बंदर अथवा पीलवान के अंकुश पर हाथी या कोचवान के चाबुक पर घोड़ा। चित्त को पट्ट और पट्ट को चित्त करना आपके लिए बाएं हाथ का खेल है।" और इतना कहकर मंत्री जी संवर कर बैठ गये।

"ओह ! यह बात है !" ठाकुर साहब ज़रा तन कर बोले, "तब तो हम अपना केस आपके ही सुपुर्द करेंगे।"

"आपके पास केस आजाने का अर्थ है निश्चित सफलता। घर बैठे

'डिग्री ले लीजिये ठाकुर साहब। जजों पर बड़ा प्रभाव है इनका ?" गर्व के साथ मंत्री जी बोले, "परंतु फ़ीस आपकी ज़रा·····"

"फ़ीस की क्या चिंता करते हो मंत्री जी !" और इतना कहते हुए ठाकुर साहब ने जेब से सौ-सौ रुपये के कई बंडल निकाल लिये ।

नोटों के बंडलों को देखकर मंत्री जी का मन भी मचला परंतु उन्होंने धैर्य से काम लिया । किसी प्रकार के भी भाव चेहरे पर नहीं आने दिये । ठाकुर साहब ने दस नोट वकील साहब को देते हुए कहा, "ये लीजिये वकील साहब, परंतु केस में जी-जान लगा दीजिये ।" केस क्या होगा यह वह कल आकर समझायेंगे ।"

इसके पश्चात् मंत्री जी तथा ठाकुर साहब वहां से विदा हुए।

मंत्री जी ने सौदा उधार करना नहीं सीखा था इसलिए उन्होंने ठाकुर साहब से उनकी कोठी पर पहुंचते-पहुंचते दस हज़ार रुपए मार्ग में ही झटक लिए । वह जानते थे कि इन मामलों में उधार के माने बट्टे खाते ही समझा जाता है ।

ठाकुर साहब की कोठी औरंगज़ेब रोड पर थी और पिछले साइकिलों के डील में सेठ गूदड़मल से प्राप्त किये पाँच लाख रुपये में से तीन लाख की आप ने यह कोठी खरीद ली थी । ठाकुर साहब छड़े आदमी थे और ऐश का जीवन व्यतीत करना ही अपने जीवन का लक्ष्य समझते थे । विवाह आपका अवश्य हुआ था परंतु पत्नी विवाह होने के दो मास पश्चात् ही स्वर्ग सिधार गई थी । इसके पश्चात आपने अपने को विवाह बंधन में बांधना उपयुक्त नहीं समझा । जीवन में कई युवतियां आईं, कुछ आज भी थीं और कुछ चली गईं, परन्तु उनके जीवन में कोई अपना स्थाई स्थान न बना सकी । इसीलिए ठाकुर साहब की स्वच्छंदप्रियता रुक न सकी; निरन्तर बढ़ती ही रही और आज तक बढ़ती ही जा रही थी ।

कोठी पर पहुंचकर ठाकुर साहब ने अपनी शेरवानी उतार दी और मंत्री जी के कंधे पर हाथ रखते हुए सामने के सोफ़े पर बैठ कर बोले "मंत्री जी ! आज से पूर्व भी मैं आपको योग्य अवश्य समझता था, परन्तु यह पता नहीं था कि आप इतने पानी में हैं ।" यह बात ठाकुर साहब ने एक बड़ी सचाई को लेकर कही ।

"ठाकुर साहब ! क्या पूछते हैं आप ? मेरा तो पारखी ही मुझे नहीं मिला। वरना उसे वह जौहरी बना देता कि दुनिया भर के सौदागर उसकी चौखट पर आकर सिर पटकते और मुंह मांगे दाम देकर जाते।

ठाकुर साहब ने मंत्री जी के वाक्य की सचाई और गम्भीरता को अनुभव किया और सोचा कि वास्तव में यह व्यक्ति हीरा है। ठाकुर साहब का हृदय मंत्री जी की तरफ़ खिंच गया और वह अपना सर्वस्व मंत्री जी की योग्यता पर न्यौछावर करने को उद्यत हो गये।

आज वह कितनी ही देर तक मंत्री जी के गले में हाथ डाले बैठे रहे। संध्या को गौधूलि में सूर्य के प्रकाश की अंतिम छटा विलीन होने लगी और राशि का अंधकार धीरे-धीरे चारों ओर छा गया।

ठाकुर साहब की कोठी बिजली की बत्तियों से जगमगा उठी। उनकी शीशे की मेज पर एक बड़े जार में अंगूरी स्वर्ण वर्ण में झमझमा उठी। मेज़ ठाकुर साहब ने स्वयं उठकर अपने पास को सरका ली और दो जाम भरकर दोनों ने हाथों में ले लिये। दोनों ने अपने-अपने गिलास आपस में टकराये और एक दूसरे के स्वास्थ्य तथा सच्ची मित्रता के लिए उनका पान किया। एक-एक घूट भरकर दोनों ने गिलास बदल लिये और आज से दोनों ने एक दूसरे के अभिन्न मित्र बनने की शपथ ली।

"मंत्री जी ! यह मदिरा देवि के मंदिर में ली गई शपथ है" ठाकुर साहब ने कहा।

'प्राण रहते निभाऊँगा ठाकुर साहब !" मस्ती में झूमकर मंत्री जी ने कहा।

दोनों ने जी भर कर मदिरा पान किया और आज रात को मंत्री जी का विश्राम ठाकुर साहब की ही कोठी पर हुआ।

: २१ :

लोक सभा पर हिंदू कोड बिल विरोधक हाय-हुल्लड़ मचाने के अपराध में स्वामी ज्ञानानंद पकड़ लिये गये थे। आज एक मास पश्चात वह मुक्त हुए। स्वामी जी का स्वागत बड़ी धूम-धाम के साथ मंत्री संकटानंद ने किया। एक ठेले पर उन्हें आसीन कराकर फूल मालाओं से लाद दिया और फिर जुलूस बनाकर शहर में ले गये। स्वामी जी के नाम की जै के नारे मुक्त कंठ से लगाने वाले व्यक्तियों की मंडली पहले से ही मंत्री जी ने तैयार कर ली थी, जो वायु-मंडल को एक ताल और स्वर के साथ गुंजा देती थी।

यह मंडली मंत्री संकटानंद की थी जिसकी बड़ी भारी धूम थी। जिस प्रकार विवाह शादियों में बैंड बाजे वालों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार जुलूसों को सफल बनाने के लिए इस मंडली का महत्व था। इस मंडली का प्रयोग भी सभी लोग करते थे, क्या धार्मिक, क्या सामाजिक और क्या राजनीतिक ? इस मंडली के रिंग लीडर मूलचंद जी थे।

स्वामी ज्ञानानंद के स्वागत में 'सत्य मार्ग' का भी आज विशेषांक निकाला गया था और उसके मुख पृष्ठ पर स्वामी जी का रंगीन चित्र छपा। 'सत्य मार्ग' कार्यालय में पहुंचते ही उनके सम्मुख जब यह अंक आया तो उनकी आत्मा प्रसन्न होकर खिल उठी।

उनका लगाया हुआ पौधा पुष्पित और पल्लवित हो रहा था। उन्हें यह पता नहीं था कि 'सत्य मार्ग' का यह अंक जिस दिन वह जेल गये थे उस दिन के पश्चात आज ही प्रकाशित हुआ था।

संध्या तक मिलने वालों का तांता लगा रहा। एक जाता था तो तीन नये महानुभाव आकर उपस्थित हो जाते थे। सेठ गूदड़मल भी आये और उन्होंने स्वामी जी की भेंट पूजा भी की। चरण-रज लेकर अपने को कृत कृत्य किया। धर्म-रक्षा के हेतु स्वामी जी के किये गये त्याग की मुक्त कंठ से सराहना की और अपनी हार्दिक तथा आर्थिक सहानुभूति प्रकट करते हुए एक बार फिर श्रद्धा के साथ स्वामी जी के चरण छुए। चलते समय सेठानी जी के लिए दर्शनों का

समय लेकर सेठ जी विदा हुए ।

वकील साहब भी आये और श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया । उनका फ़ाइल अब भी उनकी बगल में दबा था ।

स्वामी जी ने वकील साहब की कुशल मंगल पूछी । कुशल मंगल का समाचार देकर वकील साहब तख्त पर अपनी पेंट की क्रीज़ संभालते हुए बैठ गये ।

इसके पश्चात और भी स्वामी जी के अनेक मिलने वाले महोदय पधारे और उनके भविष्य के प्रोग्राम पर भी बातें कीं ।

: २२ :

सब प्रबंध ठीक करके मंत्री जी ने स्वामी जी से विदा ली। उनके पास अधिक समय नहीं था। सुबह से अब तक का समय उन्होंने स्वामी जी की आवभगत में लगा दिया।

संध्या समय उन्हें ठाकुर राज बहादुर सिंह को लेकर बेला के मकान पर जाना था। जब से ठाकुर साहब ने वकील साहब के सुपुर्द अपना केस किया तब से उनके घर पर ठाकुर साहब का बेतकल्लुफ़ी से आना-जाना प्रारंभ हो गया था।

बेला अब कुछ स्वतंत्र थी। संतान न होना, जिसे वह जीवन की कमी मानती थी, उसे वह अब गुण प्रतीत होने लगा। अन्न की कमी में अधिक संतान उत्पन्न करना देश के साथ अन्याय है।

परंतु बेला को क्या पता था कि जीवन में एक दिन उसे इतनी स्वतंत्रता मिल सकेगी और मंत्री जी तथा ठाकुर साहब जैसे लीडरों के संपर्क में आकर वह ख्याति के उत्तम शिखर पर पहुंचने का स्वप्न देख सकेगी।

बेला की सुगंधि अब सीमित न रह कर असीम वायुमंडल में प्रसारित होने लगी थी।

मंत्री जी ठाकुर राज बहादुर की कोठी की ओर चल दिये। ठाकुर साहब शेरवानी डाटे, चुस्त पायजामा पहने, पेटेन्ट लैदर के जूतों में चर मर करते हुए अपनी कोठी के बरामदे में चहल क़दमी कर रहे थे। बार-बार वह कोठी के दरवाजे की ओर मंत्री जी की प्रतीक्षा में झांक लेते थे और कभी-कभी घूमते हुए फाटक तक आ जाते थे। तभी मंत्री जी आते हुए दिखाई दिये और ठाकुर साहब ने ड्राइवर को गैराज से कार निकालने भेज दिया।

"आपकी ही राह देख रहा था मंत्री जी!" मुस्कुराते हुए ठाकुर साहब ने कहा।

"मैं भी लपका हुआ आ रहा हूं ठाकुर साहब! आज तमाम दिन स्वामी ज्ञानानंद के प्रोग्राम में निकल गया। किसी प्रकार अब उनसे छुट्टी लेकर आ रहा

हूं।" व्यस्तता प्रकट करते हुए मुंह बनाकर मंत्री जी न कहा।

"मैं कहता हूं मंत्री जी! आप व्यर्थ एक पागल के पीछे लगे हैं। यह धार्मिक पौंगापंथ अब राष्ट्रीय-क्षेत्र में नहीं चलेगा। कांग्रेस इस पौंगापंथ को सहन नहीं कर सकती। ये लोग जनता के शत्रु हैं।" ठाकुर साहब आज संसद में जो सुनकर आये थे उसका सारांश मंत्री जी के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए बोले।

मंत्री जी गंभीर मुद्रा बना कर बोले, "ठाकुर साहब! मुझ से भला किसका पौंगापंथीपन छिपा है। मैं सब को जानता हूं। क्या कांग्रेस, क्या सोशलिस्ट, क्या हिन्दू महासभा, क्या राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, क्या जनसंघ और क्या इधर उधर की अन्य जमायतें? मैं कम्यूनिस्टों को भी खूब जानता और पहचानता हूं। परंतु अपने राम तो आनंद की छानने के लिए पैदा हुए हैं और भगवान् का लाख लाख धन्यवाद है कि आज तक तो उसने आनंद की ही छनवाई है। बाकी बात यह है कि स्वामी ज्ञानानंद का ढांचा अब उखड़ा-उखड़ा अवश्य प्रतीत होता है।" मूंछों पर ताव देकर मंत्री जी बोले।

ड्राइवर कार लेकर आ गया और दोनों उसमें बैठकर बेला की तरफ़ चल दिये। बेला के मकान पर पहुंचे तो वह पहले से ही साड़ी पहने तय्यार बैठी थी और सामने वाले बरांडे की खिड़की से इन्हीं दोनों व्यक्तियों की राह देख रही थी।

"आपने बहुत देर कर दी आने में।" मुंह बनाकर मुस्कुराते हुए बेला बोली।

"यह सब मंत्री जी की कृपा है।" मंत्री जी की तरफ़ संकेत करते हुए ठाकुर साहब ने अपने सिर से उलाहना उतार दिया। "जिस प्रकार आपको हमारी प्रतीक्षा करनी पड़ी उसी प्रकार मैं भी दो घंटे मन्त्री जी की राह देखता रहा।"

"चलिए कोई बात नहीं आज का सब दोष हमारे ही मत्थे रहा, परन्तु अब देर क्यों हो रही है।" मंत्री जी बोले। "मुझे रात को बड़ा काम है।"

"जी हाँ! आप बड़े कामी आदमी हैं, हम लोग आपका समय नष्ट करते हैं।" कहकर बेला ने मुंह बना लिया।

"यह तुम क्या कह रही हो बेला?" ठाकुर साहब बोले।

"आज आप उस धूर्त स्वामी ज्ञानानंद के चक्कर में फंसे होंगे। सरकार को

ऐसे पौंगापंथियों को आजीवन कारावास में डाल देना चाहिए। यह लोग समाज के प्राणी नहीं हैं।"

"हमारी कांग्रेस सरकार अभी बच्ची है। विरोध से डरती है। आप नाराज न हों। ज्यों-ज्यों सरकार में बल आता जायेगा त्यों-त्यों इन लोगों की सजाएं बढ़ती चली जायेंगी। इस बार एक मास को भेजे गये थे यदि फिर हाय-हुल्लड़ मचायेंगे तो एक वर्ष के लिए लाद दिए जाएंगे।" अधिकार पूर्ण स्वर में ठाकुर साहब ने कहा।

बेला समझ गई कि अवश्य ऐसा ही होगा। बेला समझती थी कि ठाकुर साहब के ही चलाये कांग्रेस सरकार चल रही है और उन्हीं के बनाये सब कानून बनते हैं। बेला की दृष्टि में कांग्रेस सरकार के सब कुछ ठाकुर साहब ही थे।

तीनों कार में जा बैठे। बेला बोली, "ठाकुर साहब! मेरे विचार से सरकार को ज्ञानानंद जैसे व्यक्तियों के लिए एक कार्य करना चाहिए।"

"क्या कार्य?" उत्सुकतापूर्वक ठाकुर साहब ने पूछा।

"सरकार जिस प्रकार जानवरों और पुरानी चीजों को सुरक्षित रखने के लिए चिड़िया घर और अजायब घर बनवाती है उसी प्रकार पुराने विचारों के व्यक्तियों को सुरक्षित रखने के लिए उसे एक 'रूढ़ि-ग्रह' स्थापित करना चाहिए और उसके अन्दर भांति-भांति के वेशधारी पाखंडियों को पाल कर जनता का मनोरंजन करना चाहिए।" यह बात बेला ने बहुत गंभीरता-पूर्वक कही।

ठाकुर साहब अपने हृदय के उद्‌गारों को रोकने में असमर्थ होकर मंत्री जी को झंझोड़ कर बोले, "मैंने कहा, सुना आपने। क्या लाजवाब बात कह डाली बेला ने। बात नहीं, इसे मैं खोज कहूंगा। आविष्कार कहूंगा। एक प्लान कहूंगा। वाह वाह, वाह वाह, क्या खूब ओरिजिनेलिटी (मौलिकता) है इस विचार में? मैं कहता हूं मंत्री जी कि आज सरोज के संपर्क में आये कई वर्ष हो चुके परंतु यह बात पैदा नहीं कर सकी वह कभी भी अपनी बात में। बेला का एक-एक शब्द चूम लेने योग्य है।"

"क्या कहा आपने?" जरा ध्यान इस ओर करते हुए मंत्री जी बोले "देश की समस्याएं इतनी जटिल होती जा रही हैं ठाकुर साहब कि चौबीसों

घंटे चित्त उन्हीं के विचारों में डूबा रहता है ! बेला को वचन दे दिया था आज आने का, इसी से सब कार्य अधूरा छोड़कर इधर चला आया। न आता तो आप भी गालियां देते।"

"बस रहने भी दीजिए इन व्यर्थ की बातों को। मैं दस बार आप से कह चुका हूं कि संध्या समय जब घूमने निकलें तो आप अपनी समस्याओं को अपने थैले में बन्द करके वहीं छोड़ आया करें। क्यों बेला देवी आपका क्या विचार है ?" बेला की ओर मुख करके ठाकुर साहब बोले।

"मेरे और आपके विचार दो नहीं हो सकते ठाकुर साहब ! मैं जानती हूं कि मंत्री जी का उत्तरदायित्व बहुत अधिक है, परन्तु इस प्रकार संध्या को घूमते समय भी यदि यह उन्हीं समस्याओं में उलझे रहेंगे तो अपना स्वास्थ्य खराब कर लेंगे।" बेला बोली।

यह बात बेला ने इतनी सहानुभूति के साथ कही कि मंत्री जी अन्दर ही अन्दर पिघलने लगे। एक बार उन्होंने बेला के सुन्दर चेहरे पर ललचाई दृष्टि से देखा और फिर अपने गाम्भीर्य को बनाये हुए बोले "बेला ! तुम सच कहती हो। मेरे आज के अव्यवस्थित जीवन में यदि मुझसे तुम्हारा और ठाकुर साहब का सहारा छूट जाय तो तुम लोग सच मानो कि मैं और मेरी समस्याएं सब समाप्त हो जायें।"

"यह क्या कहते हो मंत्री जी ! आपके लिए मैं अपने प्राण भी न्यौछावर करने को उद्यत हूं, और बेला देवी, जिन्हें आप गहरी खंदक से निकाल कर इस प्रकार प्रगति के पथ पर लाये हैं, वह क्या कभी आपका साथ छोड़ सकती है ?" गंभीर मुद्रा बनाकर ठाकुर साहब बोले।

"यह सच है !" बेला ने मुस्कुराते हुए कहा।

: २३ :

ठाकुर साहब की कार जाकर इम्पीरियल होटल के पोर्टिगो में रुकी और तीनों व्यक्ति कार से उतर लिए । बेला अब सोसाइटी को भली प्रकार समझने लगी थी । हर प्रकार के व्यवहार में वह दिन प्रति दिन कुशल होती जा रही थी । ठाकुर साहब, मंत्री जी और बेला का जोड़ा ऊपर के सर्किल में प्रसिद्धि प्राप्त करता जा रहा था । सेठ गूदड़मल की दृष्टि भी एक दो बार बेला पर पड़ चुकी थी । सरोज के सम्पर्क में सेठ गूदड़मल को लाने वाले मंत्री जी ही थे इस रहस्य को सेठ जी अभी तक भूले नहीं थे ।

ज्यों ही ये तीनों व्यक्ति रस्टोरेन्ट-हॉल में गये तो क्या देखा कि एक मेज पर सेठ गूदड़मल और आचार्य किशनचन्द डटे हुए हैं । सेठ जी ने ललचाई दृष्टि से बेला की तरफ देखा परन्तु मंत्री जी ने अपनी मूछों के एक दो बालों को पैनाते हुए उधर से मुँह फ़ेर लिया और उनकी ओर को पीठ करके बैठ गये ।

सेठ गूदड़मल से न रहा गया और वह थोड़ी देर पश्चात शास्त्री जी को वहां से बिदा कर बिना बुलाए ही महमान बनकर मंत्री जी की मेज के पास जा पहुंचे और प्रेम भाव से बोले, "ओह मंत्री संकटानन्द जी ! डटे हुए हैं ।"

"जी हां" ठाकुर साहब ने कहा ।

"और ठाकुर साहब भी !" मुस्कुराकर सेठ जी बोले; परन्तु मंत्री जी बिल्कुल शांत थे और उनका मुंह इस समय खस्ता कचौड़ी की तरह फूल रहा था ।

सेठ गूदड़ मल जी भी पूरे घाग थे । मंत्री जी के इस प्रकार न बोलने का उन पर कुछ प्रभाव नहीं हुआ और उन्होंने बहुत कलात्मक ढंग से मंत्री जी की कौली भरते हुए कहा, "देखिए मंत्री जी ! मैं जानता हूं कि आप मुझसे नाराज हैं, परन्तु आप यह याद रखिए कि मैं आपको गुरू मानता हूं और मैं आपको किसी दशा में भी नाराज नहीं रहने दे सकता ।" और इतना कह कर वह पास वाली कुर्सी पर जम गये ।

सेठ गूदड़मल जी ने मंत्री जी को गुरू कह कर उनके मर्म-स्थल को छू दिया। मंत्री जी अपने को जगत-गुरू मानते थे और जो कोई भी मंत्री जी की इस कमजोरी को जानता था वह उनके शरीर के कपड़े भी उतरवाकर उनसे ले सकता था।

भावुकता में मंत्री जी से बाजी ले जाना साधारण बात नहीं थी। मंत्री जी का हृदय बहुत साफ था और जब वह किसी में अपनापन देखते थे तो हृदय की बात तुरंत मुंह पर आ जाती थी। कुछ ठहरकर उसी प्रकार गंभीर मुद्रा में मंत्री जी बोले।

"गुरू तो आप बनते जा रहे हैं सेठ जी! जिसकी बिल्ली उसी को म्याऊं वाली बातें चल रही हैं आजकल तो। जापान से लौटकर कभी आपने यह भी कष्ट किया कि मंत्री जी कहां और किस दशा में पड़े हैं? परंतु यह ध्यान रहे सेठ जी कि मंत्री संकटानंद कभी सेठ गूदड़मल की ड्योढी पर नाक रगड़ने नहीं जायेगा।" और इतना कहकर मंत्री जी के मस्तक में तीन सलवटें पड़ गईं।

"यह भला क्या कह रहे हैं आप मंत्री जी!" गिड़गिड़ाकर सेठ जी बोले, "आप गुरू होकर भी क्या मेरी भूल क्षमा नहीं करेंगे?" इतना कहकर सेठ जी रुआनी सी शक्ल बना कर नत मस्तक हो गये।

यह सुन कर मंत्री जी ने सेठ जी को पास बुलाते हुए कहा, "क्षमा क्यों नहीं करेंगे सेठ! परंतु गुरू लोगों के सम्मुख अभिमान नही चलता। चेले बन कर तो चाहे तुम हमारा खून भी पी जाओ, परंतु गुरू बन कर तुम्हें सर्वदा मुंह की ही खानी पड़ेगी।" कह कर मंत्री जी गंभीर हो गये।

सेठ गूदड़ मल जी ने भावुकता में आकर सबके सम्मुख मंत्री जी के पैर पकड़ लिये।

सेठ जी के नाम से दिल्ली का बच्चा-बच्चा परिचित था। सेठ जी ने जब मंत्री जी के इस प्रकार पैर छुए तो चारों ओर से दृष्टि मंत्री जी के मुख-मंडल पर गई। कुछ ने श्रद्धा के साथ, कुछ ने आश्चर्य के साथ, कुछ ने उपहास के साथ मतलब यह कि जिसकी जैसी भावना रही, मंत्री जी की मूर्ति को उसने उसी रूप में देखा।

इस समय बेला के जीवन में मंत्री जी का स्थान कहाँ था, इसका अनुमान लगाना कठिन था। मंत्री जी का महत्व ठाकुर साहब की दृष्टि में भी आज तक

उतना नहीं था जितना इस समय बन गया।

मंत्री जी ने सेठ जी को उलाहना देते हुए कहा, "स्वामी ज्ञानानंद को रुपया देकर आपने अपने गुरू का अपमान किया। क्या नहीं किया आपने ?"

"अब और लज्जित न कीजिए मंत्री जी ! जीवन में फिर कभी ऐसा अवसर न आयेगा।" गंभीरता और कृतज्ञता के साथ सेठ जी ने कहा। सेठ जी की एक आँख बेला के मुख पर थी और दूसरी मंत्री जी के मस्तक पर।

उस दिन सरोज के यहां से बगली काट कर भाग निकला था परंतु भाग कर बच्चा आखिर कहां जायेगा ? आना अंत में उसे मंत्री जी के ही हाथ के नीचे होगा। आज ही तो वह स्वामी ज्ञानानंद जी को मंत्री जी के खिलाफ न जाने क्या-क्या भरकर आया है ? मंत्री जी जान-बूझ कर भी उसे शर्बत के घूंट की तरह पी गए। विश्व की प्रगति के साथ-साथ मंत्री जी का जीवन भी प्राचीन रूढ़ियों के प्रति विद्रोह कर रहा था। फिर भला उन्हें उस ज्ञानानंद की क्या चिन्ता हो सकती थी जिसे दिल्ली में स्वामी ज्ञानानंद ही मंत्री जी ने बनाया हो।

बेला श्रद्धा भाव से मंत्री जी के महान व्यक्तित्व पर विचार कर रही थी। मंत्री जी का व्यक्तित्व उसके नेत्रों में महान बनकर इतना बोझिल हो उठा कि उसने एक क्षण के लिए अपने नेत्र बंद करते हुए उसे हृदय में स्थान दे डाला। बेला मंत्री जी की इस समय इतनी कृतज्ञ थी कि उसके अटपटे शब्द उस कृतज्ञता को प्रकट करने में असमर्थ थे।

मंत्री जी बोले, "सेठ जी लोक सभा का चुनाव निकट आ रहा है।" और इतना कह कर चुप हो गये।

सेठ गूदड़मल भी बहुत गंभीर थे। एक शब्द से ग्रंथ की परिभाषा करना उन्हें आता था। परंतु इस समय क्या करे उनका गाम्भीर्य मंत्री जी की हां में हां मिलाये बिना बेला से परिचय प्राप्त नहीं हो सकता था और मंत्री जी भी परिचय देने से पूर्व अपना उल्लू सीधा कर लेना चाहते थे।

सेठ जी बोले, "इसमें जानने न जानने की क्या बात है मंत्री जी ! आपका वचन मेरे लिए वेद वाक्य है।"

मंत्री जी अवसर देख कर बोले, "मुझे तुमसे यही आशा थी सेठ जी ! ठाकुर साहब आपके और हमारे घनिष्ट मित्र हैं। आगामी चुनाव में इनको

सफल बनाने के लिए एक दैनिक पत्र की आवश्यकता है। वह पत्र हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में प्रकाशित होना चाहिए। श्रीमती बेला देवी उसकी मैनजर होंगी। आप ठाकुर साहेब और श्रीमती बेला देवी के इस शुभ कार्य में क्या सहयोग देंगे ?" कह कर मंत्री जी ने भेदपूर्ण दृष्टि से सेठ जी के मुंह पर देखा।

"जो आज्ञा।" मुक्त कंठ से सेठ जी ने कहा।

"पांच लाख रुपया" मंत्री जी ने कहा।

"सात लाख रुपया" सेठ जी बोले और सेठ जी ने उसी समय मन्त्री जी का फ़ाउन्टेन पेन लेकर खजांची के नाम मुंडी हिंदी में पर्चा लिख कर मंत्री जी के चरणों में रख दिया।

यह कार्य सम्पन्न करके मंत्री जी प्रेम भाव से सेठ जी से मिले और उन्होंने यह भी बताया कि वह गत मास में संन्यास लेकर पहाड़ों पर जा रहे थे। ठाकुर राजबहादुर सिंह के विशेष आग्रह ने उन्हें रोक लिया। बेला देवी ने ठाकुर साहब की योजना को बल देकर तो उनके पैरों में बेड़ियां ही डाल दीं।

ठाकुर साहब और बेला ने मंत्री जी की इस बात का समर्थन किया और मन-ही-मन मंत्री जी की कुशलता, योग्यता और प्रभावात्मकता की सराहना की।

: २४ :

ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश ने अकाल पीड़ितों की सहायता में किये नाटक का निर्देशन इतनी कुशलता से किया कि सरोज के हृदय में ब्रह्मचारी के प्रति आकर्षण के साथ-साथ श्रद्धा उत्पन्न हो गई। सरोज का जीवन बदलता जा रहा था। चांचल्य का स्थान गाम्भीर्य ने संभाला और बनावट के स्थान पर सादगी और सरलता का साम्राज्य छाता चला गया।

सरोज का जीवन मृगतृष्णा के पथ से हटकर वास्तविकता की ओर बढ़ रहा था। संध्या समय कोठी के सामने लॉन में कुर्सियां न डलवाकर आज घास पर ही ब्रह्मचारी और सरोज बैठे थे।

"सरोज ! तुमने अपना जीवन ही बदल डाला। आखिर यह सब क्या हुआ ?" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने एक गुलाब की कली सरोज की ओर फेंकते हुए कहा।

"मैं स्वयं नहीं जान पाई ब्रह्मचारी ! कभी-कभी मैं एकान्त में बैठकर अकेले में भी इस समस्या पर विचार करती हूं। विचित्र समस्या है यह भी ! जिस दिन मैं तुम्हें अपने साथ लेकर यहां आई थी उस दिन मैंने यह सोचा था कि मैं तुम्हें अपने सांचे में ढाल लूंगी। तुम्हारी प्रकृति को अपनी प्रकृति का एक अंग बना लूंगी, परंतु होता उसके विपरीत ही जा रहा है।" सरल भाव से गुलाब की कलिका को लपक कर हिलाते हुए सरोज बोली।

सरोज का सुन्दर मुख संध्या की स्वर्णिम आभा में दैदीप्यमान हो रहा था और ब्रह्मचारी के गम्भीर बड़े-बड़े नेत्र स्थिरता के साथ उसपर टिके थे।

"यह सच है सरोज ! परन्तु मैंने तुम्हारा कुछ छीनने का प्रयत्न नहीं किया। यही कारण है कि तुम्हारे जीवन से इतना कुछ निकल जाने पर कहीं अभाव प्रतीत नहीं होता।" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने पूछा, "क्या तुम भी ऐसा ही अनुभव नहीं करती हो सरोज ?"

"अभाव नहीं, मेरे जीवन में महान पूर्ति ने स्थान लिया है ब्रह्मचारी ! एक भटकती हुई आत्मा को तुमने आश्रय प्रदान किया है। चिर अतृप्ता को

तृप्ति प्रदान की है । मेरे शुष्क जीवन में रस का संचार हुआ है । जीवन के कोने-कोने को परिप्लावित कर डाला है तुमने । आज मेरा रोम-रोम वास्तविक आनन्द की छाया में विश्राम पा रहा है । जीवन की वह व्यापक जलन, तपन और न बुझने वाली प्यास आज नहीं है ! सब के स्थान पर तुमने अपना आसन जमा लिया है ब्रह्मचारी ! तुम मेरे जीवन में शांति, मंगल और सरलता के अग्रदूत बन कर आये हो ।" कहकर सरोज मंत्र-मुग्ध सी हो गई ।

"मैं तुम्हारे पास कुछ देने के लिए नहीं पाने के लिए आया था । तुमने मेरे जीवन को सरसता प्रदान की और उसी सरसता से बल प्राप्त करके मैं तुम्हारे जीवन में शांति और सुख का संचार कर सका । तुम मेरे जीवन की अभाव-पूर्ति बनकर मेरे जीवन में आईं और मैंने तुम्हारे जीवन के अभावों की पूर्ति बनने का प्रयास किया ।"

इसी प्रकार दोनों आपस में बैठे बातें कर रहे थे कि सामने से मंत्री संकटानन्द जी आते हुए दिखाई दिये । मंत्री जी का सरोज और ब्रह्मचारी ने खड़े होकर स्वागत किया । मंत्री जी प्रेम भाव से दोनों को आशीर्वाद देते हुए बोले, "बहुत खूब ! आज तो घास पर ही डटे हैं, दोनों प्राणी ।"

"प्रकृति की गोद में जितनी भी मैं उतरती जा रही हूं मंत्री जी ! उतनी ही जीवन में शांति प्राप्त होती जा रही है । तड़क-भड़क से मन ऊब चुका है !" सरल प्रकृति से सरोज बोली ।

"वाह-वाह, वाह-वाह ! क्या बात कह डाली तुमने सरोज ? प्रकृति-माता की गोद में ही तो लेटने के लिए चौदह वर्ष भगवान राम और सीता वन में रहे । पंचवटी के उपवन और जंगल की अपार शोभा क्या कोई भारतीय कभी विस्मरण कर सकेगा सरोज ! तुम अब जीवन के वास्तविक सत्य को प्राप्त करती जा रही हो और यही कारण है कि तुम्हारे जीवन में इतनी अपार शांति का साम्राज्य छाता चला जा रहा है ।" गंभीर मुद्रा बना कर मंत्री जी सरोज की भावनाओं का समर्थन करते हुए घास पर ही एक ओर बैठ कर बोले और उन्होंने अपना चमड़े का पोर्टफोलियो एक तरफ रख दिया ।

"आज तो कई दिन बाद दर्शन दिये मंत्री जी ! हम लोग तो नित्य ही संध्या को बातें करते समय आपको याद कर लेते हैं ।" ब्रह्मचारी ने मंत्री जी की ओर मुंह करके कहा ।

"सत्य तो यह है ब्रह्मचारी ! कि तुम लोगों से मिले बिना मैं भी नित्य अपने जीवन में अभाव सा अनुभव करता हूं, परन्तु कार्य-व्यस्तता के कारण इस बुरी तरह फंस गया हूं कि कहीं निकलना नहीं होता। सिर पर राष्ट्र का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। मेरा जीवन भी बदल रहा है ब्रह्मचारी ! एक महान परिवर्तन के अंदर से होकर गुजर रहा है।" हाथों को लचकाते हुए गंभीर मुद्रा के साथ मंत्री जी बोले।

"आप प्रगति के अग्रदूत हैं मंत्री जी ! आपका जीवन सतत परिवर्तनशील है। परिवर्तन ही तो जीवन की प्रगति है। कुछ लोग इसे अनिस्थिरता कहकर स्वार्थपरता भी पुकार उठते हैं। मेरे विचार से वे भूल करते हैं" मन में एक मुस्कान तथा चेहरे पर गाम्भीर्य लेकर ब्रह्मचारी ने कहा।

"भूल ही नहीं ब्रह्मचारी ! वे लोग धूर्त्त हैं। हम स्पष्टवादी हैं, ढोंगी नहीं। यदि आज तक हम किसी गलत मार्ग पर थे और आज हमें सही मार्ग मिल गया तो क्या हमें वह मार्ग नहीं अपनाना चाहिए ? कोई कुछ भी कहे, मुझे इसकी चिन्ता नहीं। गाड़ी चली जाती है और कुत्त भौंकते रह जाते हैं।" मंत्री जी गंभीरता पूर्वक बोले।

"परन्तु यह भी तो सुनें कि आपकी प्रगति किस दिशा में हुई ?" ब्रह्मचारी ने पूछा, "इतनी लम्बी भूमिका बन गई और रहस्योद्घाटन अभी तक नहीं हुआ।"

"यह मैं जानती हूं।" मुस्कुराते हुए सरोज ने कहा।

"तुम अवश्य जानती होगी। बताओ तो सरोज में क्या कहना चाहता था ?" मंत्री जी बोले।

"बतलाना आप को ही होगा।" कहकर सरोज सरलतापूर्वक मुस्कुरा दी।

मंत्री जी का सरस हृदय किसी भी सुन्दर स्त्री को देखकर विचलित हो उठता था परन्तु अपने हृदय की भावनाओं को प्रस्तावित करने की उनमें क्षमता नहीं थी। मंत्री जी के जीवन की यही कमी उन्हें सरोज की दृष्टि में महान बनाये हुए थी।

मंत्री जी ने अपने दो नये पत्रों की योजना पर प्रकाश डाला। स्वामी ज्ञानानन्द का साथ छोड़ देने की सूचना दी और कुछ क्रोध में आकर वह कहने लगे, "तुम जानती हो सरोज ! लाखों रुपया मेरे पैरों पर पड़ा रहता है

और वह स्वामी कहता है कि मैंने उसके अखबार में गबन किया है मैं जानता हूं कि उसे किसने भड़काया है, परन्तु अपने को क्या ? अपने राम तो जिस शाख पर बैठेंगे उसी को हरी कर लेंगे।"

दिल्ली में ज्ञानानन्द को इतना प्रसिद्ध कर देना मंत्री संकटानन्द का ही दम था। अब देखता हूं कैसा आंदोलन चलाते हैं ? सरकार पीसकर रख देगी, पीस कर। वह मेरा ही दम था कि चाहे जो कुछ भी बकते थे और आंच तक न आती थी। प्रधान मंत्री से लेकर प्रेस एड्वाइजर के चपरासी तक मानते और इज्जत करते हैं। अब देखना कैसा 'सत्य मार्ग' प्रकाशित होता है ?" मंत्री जी अपनी झोंक में कहते गये।

"तो यों कहिए कि अब आप रुढ़िवाद के प्रति विद्रोह करने पर उतारु हो चुके।" ब्रह्मचारी गंभीरतापूर्वक बोले।

"ठीक ब्रह्मचारी ! बिल्कुल यही। मैं अब जी-जान से हिन्दू कोड बिल का समर्थन करूंगा। और तुम देखोगे कि आगमी संसद के चुनावों में संकटानन्द के नाम की धूम रहेगी।"

संकटानन्द ने फिर मूछों पर ताव दिया और मुस्कुराते हुए जेब से निकाल कर बनारसी पान का एक बीड़ा गाल में दबा लिया।

"तो चुनाव की तैयारियों पर लगे हो ?" सरोज मुस्कुरा कर बोली, "इसीलिए आज कल ठाकुर साहब से गहरी छन रही है। उठना, बैठना, सोना, खाना-पीना सब कुछ वहीं पर होता है।"

"तुम क्या कुछ नहीं जानतीं ! परन्तु इस बार तुमने तो ऐसी चुप्पी लगाई है कि मेरी सब आशाओं पर तुषारापात कर दिया।" मंत्री जी बोले।

"यह आपने क्या कहा मंत्री जी ! आपके कार्य के लिए सिर के बल उपस्थित हूं। परन्तु मैं जानती हूं कि अब मेरी आवश्यकता नहीं रही आपको" सरोज ने कहा।

"ऐसा मत कहो सरोज ! तुम्हारी आवश्यकता मुझे हमेशा रहेगी।" गंभीर होकर मंत्री जी बोले।

"जाने दीजिए इन बातों को। अब जरा यह भी तो सुनूं कि इन योजनाओं की पूर्ति के लिए धन कहां से मिला ?" मुस्कुराकर सरोज ने पूछा।

मंत्री जी खिलखिलाकर हंस पड़े। "सरोज, हम कभी किसी गरीब को नहीं

सताते । धनवान से हम साम, दाम, दण्ड, भेद से काम लेते हैं। आचार्य चाणक्य ने एक दिन हमें स्वप्न में दीक्षा देते समय यह सब बताया था । हम जीवन में उन्हीं के बताये मार्ग पर चलते चले आ रहे हैं सरोज और यही कारण है कि सिद्धि हमारे पैर चूमती है ।" कह कर गर्व से मंत्री जी का मस्तक ऊपर उठ गया ।

"ये आपके सिद्धांत ही तो हैं जो आपको प्रगति की ओर खींच रहे हैं। स्वामी ज्ञानानंद से पृथक होना चाहे दुनिया की दृष्टि में आपकी स्वार्थ-सिद्धि कहलाये परन्तु है आपके सिद्धांतों की उत्तेजना ही आपको उन्नति के उस पथ पर अग्रसर कर रही है जिस पर चल कर आप राष्ट्र का बहुत बड़ा हित कर सकेंगे । आप जैसे महान व्यक्तियों के कंधों पर ही तो राष्ट्र का जुआ रखा हुआ है । वह पागल है जो यह कहेंगे कि मंत्री संकटानन्द बे पेंदी के लोटे हैं ।"

बात ब्रह्मचारी ने इतनी गंभीरता से कही कि मंत्री जी को इसमें व्यंग्य का आभास मिलना कठिन था । ब्रह्मचारी तथा सरोज की ओर से व्यंग्य की कोई सम्भावना ही नहीं थी उन्हें ।

सरोज मुस्कुराती हुई बोली, "मंत्री जी ! आपकी योजनाएं तो बहुत सुन्दर है परंतु इन्हें संचालित करने के लिए कोई सुन्दर सूत्रधार भी तो होना चाहिए ।"

मंत्री जी धीमे स्वर में बोले "परंतु सूत्रधार भी यदि परमात्मा ने चाहा तो मिल ही जायेगा ।" कह कर मंत्री जी चुप हो गये ।

बेला द्वारा यह कार्य संचालित होगा यह सूचना सेठ गूदड़मल जी गत रात्रि को आकर सरोज को दे गये थे । सरोज इतनी गंभीर बनी अभिनय कर रही थी कि मानो उसे कुछ पता ही नहीं था । उसे अभिनय करने में सरोज की पटुता के सम्मुख स्वाभाविकता लजा रही थी ।

"तुम किसकी ओर संकेत कर रही हो सरोज ! तनिक जानूं भी तो ।" मंत्री जी ने पूछा ।

"मेरा संकेत बेला की ओर है" मंत्री जी ! बहुत ही योग्य और चतुर स्त्री है और मैं समझती हूं कि वह हर प्रकार से आपके कार्य के लिये सफल संचालिका साबित होगी ।" उतनी ही गंभीरता से सरोज ने कहा ।

"मैं कहता न था कि तुम बहुत ही योग्य हो सरोज ! अब तुम फिर

कहोगी कि मैं तुम्हें बना रहा हूं। तुमने सचमुच ही मेरे मस्तिष्क पर विजय प्राप्त कर ली है। तुम मेरे मस्तिष्क का दर्पण हो सरोज! बेला ने स्वीकार कर लिया है। वह अवश्य एक सफल संचालिका सिद्ध होगी।" कह कर मंत्री जी ने जेब से निकालकर अपना दूसरा पान का बीड़ा गाल में लगा लिया।

"मैं इस कार्यक्रम को एक दूसरे ही दृष्टिकोण से देख रहा हूं मंत्री जी!" ब्रह्मचारी बोला, "मुझे आपकी प्रगति में एक ऐसी महान क्रांति की झलक दिखाई दे रही है जो स्वामी ज्ञानानंद से चलकर ठाकुर राजबहादुर सिंह के पास रुकने वाली नहीं। इस प्रगति में साम्यवाद की पुकार है, समाजवाद की रूपरेखा है और मानवता के अटल सिद्धातों का अमर संदेश है। इसके चरणों पर पूंजीवाद को मस्तक टेक देना होगा....।"

"टेक देना होगा नहीं ब्रह्मचारी! टेक दिया। पूंजीवाद मेरे चरणों पर मस्तक टेक चुका। कल सेठ गूदड़मल ने बेला और ठाकुर राजबहादुर सिंह के सम्मुख मेरे चरण छू कर क्षमा मांगली।"

"विजय! विजय! प्रगति की पूंजीवाद पर विजय यही तो मैं कहने जा रहा था।"

ब्रह्मचारी ने करतल ध्वनि की ओर सरोज ने भी अपने कोमल करों की ध्वनि को उसमें मिलाकर उसे और भी मीठा बना दिया।

मंत्री जी के जीवन की महानतम सिद्धि उनके चरणों में पड़ी थी। आज गर्व से इस व्यक्ति का मस्तक इतना ऊपर उठ गया कि वह अपनी उन्नति और योग्यता को बार-बार तराजू के दो पलड़ों पर रख कर तौलने लगा। इस तौल में उनकी योग्यता का पलड़ा अभी भी नीचे ही को जा रहा था। अर्थात् जीवन में उन्हें अभी और उन्नति करनी शेष थी।

: २५ :

सामने से वकील साहब आते दिखाई दिये और उनकी बगल में एक मोटा फ़ाइल दबा था। वकील साहब को देखकर मंत्री जी ने विदा लेते हुए कहा "अच्छा सरोज ! मैं चला। तुम लोगों के मनोरंजन का सामान आ रहा है। मुझे कुछ आवश्यक कार्य से अभी कई जगह जाना है।"

मंत्री जी चुपके से कोठी के दूसरे द्वार से निकल गये। वकील साहब की दृष्टि उनपर नही पड़ी।

वकील साहब का सरोज ने स्वागत किया और पास में घास पर बैठने का संकेत करती हुई बोली, "विराजिये वकील साहब !"

"परन्तु कहां ?" पेंट संवारते हुए दूसरे हाथ से चश्मा उतारकर वकील साहब तनिक नाक भों सिकोड़कर बोले, "आज आपके यहां की कुर्सियों का क्या बना ?"

सरोज ने मुस्कुराते हुए दरवान को बुलाया और एक कुर्सी लाने को कहा। ब्रह्मचारी और सरोज घास पर ही बैठे रहे। वकील साहब कुर्सी पर बैठे। पहले कुछ दम लिया और फिर फ़ाइल को एक तरफ़ पटक कर आंखों पर साफ़ किया हुआ चश्मा चढ़ाते हुए बोले, "मिस सरोज ! आजकल जीवन बड़ी परेशानी में चल रहा है।"

"क्यों ? क्या हुआ ?" आश्चर्य प्रकट करते हुए सरोज से इस प्रकार पूछा मानो उसे कुछ पता ही नहीं कि क्या हो रहा है ? "खैर तो है घर पर। बेला खुश है ना।"

"खैर ही तो नहीं है सरोज ! रही बेला की खुशी की बात, सो वह तो सब ठीक ही है।" गंभीरतापूर्वक वकील साहब बोले।

वकील साहब का पतला सूखा हुआ शरीर थर-थर कांप रहा था और वह बार-बार क्रोध में भर कर अपने दांतों को किटकिटाते हुए हाथ की मुट्ठियों को भींच लेते थे। उनके मस्तक पर अनेकों सलवटें पड़ जाती थीं और नेत्रों में रक्त वर्ण उतर आता था।

कुछ देर इसी प्रकार की आकृति बनाने के पश्चात् बोले, "बड़ा धूर्त निकला आस्तीन का सांप निकला। जिस बर्तन में खाया उसी में छेद किया। लेकिन अभी बच्चू ने देखा ही क्या है ? एक दिन में वारंट कटा कर हवालात में बंद न करा दूं तो मेरा नाम भी क्या है।" और इसी प्रकार न जाने क्या-क्या बड़बड़ाते हुए वकील साहब मौन हो गये।

"क्या हुआ वकील साहब ! कुछ कहिए भी तो। शायद मैं आपके कुछ काम आ सकूं।" सरलतापूर्वक सरोज बोली।

"तुम !" सरोज के मुंह पर देखकर वकील साहब बोले।

वकील साहब इस समय अर्ध-पागल की भांति बातें कर रहे थे। "तुम कर सकती हो सरोज ! यदि तुम चाहो तो तुम कर सकती हो। मेरी बेला मुझे दिलवा दो। मंत्री संकटानंद का बच्चा उसे उड़ाकर ले गया !"

इतना कह कर वह माथे पर हाथ रख कर बैठ गये और कितनी ही देर तक इसी प्रकार बैठे रहे। अन्त में बिना कुछ कहे सुने उठकर चले गए।

ब्रह्मचारी और सरोज कितनी ही देर तक फिर बेला के विषय में बातचीत करते रहे। वकील साहब की समस्या का कोई हल उनकी समझ में नहीं आया।

ब्रह्मचारी ने सरोज को बतलाया कि किसी मद में पागल व्यक्ति का उभरते समय पथ निर्धारित करना बहुत कठिन समस्या है, हां गिरते समय उसे अवश्य जीवन-दान दिया जा सकता है। बेला का यह उभार का समय है। उस पर अभी कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता। उसे जीवन की उभरती हुई आकांक्षाओं से अठखेलियां करने दो।

वकील साहब ने धन के लालच में मूर्ख बनकर मंत्री जी और ठाकुर साहब के सुपुर्द बेला को कर दिया। धन यदि तुम चाहो तो मन्त्री जी से कह कर उन्हें दिला सकती हो परन्तु धन वास्तव में जीवन की शांति नहीं।

: २६ :

सरोज की कोठी से चलकर मंत्री संकटानंद सीधे ठाकुर राजबहादुर की कोठी पर पहुंचे। ठाकुर साहब और बेला की आपस में गप-शप लड़ रही थी। कोठी के सामने वाले बरांडे में कुर्सियां पड़ी थीं। एक बत्ती जल रही थी।

दोनों मंत्री जी की प्रतीक्षा में बैठे थे। मंत्री जी को आते देखकर दोनों ने खड़े होकर आदर भाव से उनका स्वागत किया और मंत्री जी बेला को आशीर्वाद देते हुए एक आराम-कुर्सी पर जम कर बैठ गये।

मंत्री जी के आने पर वातावरण में गाम्भीर्य आ गया और बेला तथा ठाकुर साहब ने सोचा कि अब अवश्य कुछ गंभीर बातें होंगी।

बेला को मंत्री जी ने अपने सांचे ढाल लिया था। ठाकुर साहब के जीवन की तीन कमजोरियां शराब, स्त्री और नाम का रहस्य मंत्री जी पर विदित था। अक्ल के नाम पर वह पूरे काठ के उल्लू हैं यह बात भी उनसे छुपी नहीं थी।

बेला के जीवन की महत्वाकांक्षाएं ठीक उसी रूप में चल रही थीं जिस रूप में सिनमा अभिनेत्रियों की चला करती हैं।

इन दोनों सूत्रों का संचालन मंत्री जी बहुत कुशलतापूर्वक कर रहे थे। मंत्री जी एक दूसरे के पारस्परिक संबंधों के बीच अपना महत्व इस प्रकार स्थापित कर रहे थे कि उनके बिना एक स्थल पर रहते हुए भी दोनों का एक दूसरे पर खुल जाना असंभव था।

बेला और ठाकुर साहब मंत्री जी की मशीन के दो पुर्जे थे जिनका संचालन बिना मंत्री जी के नहीं हो सकता था।

"बड़ी देर लगा दी आपने मंत्री जी!" बेला बोली।

बेला की दृष्टि से इस समय यह स्पष्ट झलक रहा था कि वह मंत्री जी की काफ़ी देर से प्रतीक्षा में थी।

"देर तो अवश्य हो ही गई।" मंत्री जी सर से टोपी उतार कर पंखे के सामने अपनी कुर्सी सरकाते हुए बोले।

"फंसे भी तो न जाने कितनी बातों में रहते हैं। गली के भंगी और सफ़ाई के जमादार से लेकर प्रधान मंत्री की प्रेसीडेंट के पास शिकायतें करने तक की जिम्मेदारी आपके पास रहती है।" ठाकुर साहब बोले।

"मैं केवल बड़े कामों की ओर ध्यान नहीं देता। मैं छोटे कामों को बड़े कामों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण समझता हूं। देश के प्रबन्ध से गली की सफाई कुछ कम महत्वपूर्ण नही है, मेरी दृष्टि में।" गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने उत्तर दिया।

साधारण सी बात को महत्वपूर्ण बनाकर बेला को प्रभावित करने की कला में मंत्री जी निपुण थे।

बेला मंत्री जी के मुंह से निकले हुए प्रत्येक शब्द को वेदवाक्य मानकर सुनती थी और उनमें दार्शनिक चिंतन का आभास पाकर गद्-गद् हो उठती थी।

"यही तो आपकी महानता है मंत्री जी! जब मैं यह सोचती हूं कि किस प्रकार मुझ जैसी तुच्छ वस्तु के लिए आपने स्वामी ज्ञानानंद का साथ छोड़ दिया। 'हिन्दू कोड बिल विरोधक मंडल' से त्याग पत्र दे दिया। आपने योगी का स्वरूप पाया है। मंत्री जी!" श्रद्धा भक्ति के साथ बेला ने कहा।

"बेला सत्य कह रही है मंत्री जी! आप जैसा निर्लिप्त व्यक्ति मैंने आज तक नहीं देखा। जीवन में आदमी मैंने बहुत देखे हैं परन्तु उस समय पर काम आने वाला बिरला ही होता है।" ठाकुर साहब ने कहा।

मंत्री जी मन-ही-मन आनंद की मौजों में बह रहे थे। बेला पर मंत्री जी मुग्ध थे परंतु हृदय के भावों को स्पष्ट करने की क्षमता उनमें नहीं थी।

आदर्श मानव के सभी गुण मंत्री जी में वर्तमान थे। मन के भावों को घोल कर पी जाना उन्हें खूब आता था। इस कला में मंत्री जी निपुण थे।

"बेला जैसी चतुर लड़की को पाकर मैं अपने को धन्य समझता हूं ठाकुर साहब!" मंत्री जी बोले। "बेला वह पुष्प है जो अपनी सुगंध से केवल अपने ही देश को नहीं वरन विदेशों को भी महका देगी। बेला की योग्यता और प्रतिभा को परखने में अभी तुम्हें समय लगेगा ठाकुर साहब! यह वह हीरा है जिसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।"

"आपका कथन सत्य है मंत्री जी! बेला के गुणों की जितनी भी मैं परख करता हूं, उतने ही वे बढ़ते जाते हैं।"

"यही तो मैं कहता हूं ठाकुर साहब।" भगवान की बेला वह अनुपम कृति है जिसे संजो-संजो कर उसने बनाया है। मुस्कान और मधुरिमा की साक्षात मूर्ति; जिसकी प्रत्येक थिरकन में आनंद उल्लसित हो उठता है, जिसके प्रत्येक श्वांस में मलयानिलम चलता है, जिसके साधारण इंगित पर मानव विचलित हो सकता है ''यह वह अमूल्य वस्तु है। अब देखना है कि आप कहां तक इस धरोहर को सुरक्षित रखने और इसके विकास में सहयोग देने में सफल हो सकते हैं ?" गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

"आपकी थाती को प्राणों से प्यारी करके रखूंगा मंत्री जी ! बेला के विकास पर मैं अपना तन, मन, धन सब कुछ न्यौछावर कर दूंगा। जीवन की प्रगति के सब साधन जुटा दूंगा। देश और विदेश में बेला का नाम गुंजा दूंगा।" गंभीर स्वर में ठाकुर साहब ने कहा।

"मुझे आपसे यही आशा है ठाकुर साहब ! और मैं जानता हूं कि आप यह सब कर सकेंगे। बेला जैसी योग्य लड़की को आप जैसे महान व्यक्तित्व का आश्रय मिलने पर यह अवश्य एक दिन संसार की विशिष्ट महिला बन सकेगी।" मंत्री जी ने कहा।

बेला का मन इस समय न जाने किस लोक में उड़ानें ले रहा था। वह कभी अपने को जनता की नेता के रूप में देखती थी और कभी उसमें पत्रकार की उच्चतम कला का उदय हो उठता था, कभी उसका मन देश और विदेश की यात्राओं में संलग्न हो जाता था और कभी उसके कान "बेला की जय" के नारों से भर जाते थे।

बेला का जीवन अब साधारण दुनिया के जीवन से ऊपर उठ चुका था। वह नेता थी, कलाकार थी, पत्रकार थी और उसके अंदर वे सभी गुण वर्तमान थे जिनकी कल्पना वह अपने मन में कर सकती थी। कल्पना करना उसका काम था और इच्छित लक्ष्य पर पहुंचने के लिए उसके पास मंत्री जी और ठाकुर साहब के दो डंडों से बनी सीढ़ी थी जिसके ऊपर वह खटाखट चढ़ सकती थी।

मंत्री जी को तो बेला आज के वैज्ञानिक युग की वह लिफ्ट समझती थी कि जिसके द्वारा वह बटन दबाते ही उन्नति की अंतिम शिखर पहुंच सकती थी। बेला के मन ने कल्पना के हिरन को मौजों के जंगल में स्वच्छंद चौकड़ियां भरने के लिए मुक्त कर दिया था। वह मौजों में खो गई थी कि उसे यह भी ज्ञान

नहीं रहा कि वह कहां बैठी है और मंत्री जी तथा ठाकुर साहब आपस में क्या बातें कर रहे हैं।

उसका स्वप्न टूटा तब मंत्री जी ने कहा "बेला !"

"मंत्री जी !" आदर भाव से बेला बोली।

"आज हमें उस दैनिक पत्र का नामकरण करना है जिसके द्वारा हम भारत की अंधकार में डूबी हुई जनता को प्रकाश में लाना चाहते हैं। वह पत्र जन जाग्रति का संदेश देगा, जनता को प्रोत्साहन देगा, बल देगा, जीवन प्रदान करेगा। तुम उस पत्र की आत्मा के समान रहोगी बेला।" गंभीरतापूर्वक मंत्री जी ने कहा।

"क्या ही सुन्दर कल्पना है।" आकाश पर नेत्र बिछाते हुए ठाकुर साहब बोले।

"कल्पना नहीं ठाकुर साहब ! यह सत्य है।" मंत्री जी ने गंभीरतापूर्वक कहा।

बेला तथा ठाकुर साहब ने गंभीरतापूर्वक मंत्री जी की बात को कुछ भी न समझकर उसे ज्यों का त्यों मान लिया। ठाकुर साहब के लिए यह कोई नई बात नहीं थी। अभिनय करना वह बहुत सुन्दर जान गए थे। लोक सभा में जब वह व्याख्यानों को सुन सुनकर अपने हाव-भाव प्रदर्शित करते थे तो कोई पास बैठने वाला व्यक्ति यह नहीं समझ सकता कि ठाकुर साहब के पल्ले उसमें से, जो कुछ वहां पर हो रहा है, कुछ भी नहीं पड़ा। मत वह अपनी पार्टी के साथ दे ही डालते थे इसलिए यहां भी उनके सम्मुख कोई कठिनाई नहीं उपस्थित होती थी। इसी प्रकार उन्होंने मंत्री जी का आदेश अक्षराक्षर मान लिया। बेला तो वैसे ही मंत्री जी की भक्त बन चुकी थी।

बेला आदर भाव से गर्दन हिलाकर बोली, "हमें आप जो आज्ञा करें वही करना हमारा कर्तव्य होगा। हम आपको विश्वास दिला सकते हैं कि किसी कार्य में कभी कोई त्रुटि नहीं आएगी। आप सूत्रधार बनकर देखिए कि मैं कहां तक उड़ानें भर सकती हूं।"

हृदय में उल्लास और उमंग लेकर बेला कह रही थी। उसके तन, मन से इस समय विद्युत की शक्ति प्रस्फुटित हो रही थी और उसके यौवन का विकास जीवन की साधारण प्रगति को धक्का देकर आकाश में चमकने वाली तारि-

काओं के पास उसे ले जाने पर उतारू था ।

बेला भावावेश में खड़ी होकर आकाश पर, एक दूर चमकने वाली तारिका पर संकेत करते हुए बोली, "मंत्री जी ! आप देख रहे हैं वह आकाश में तारिका ! क्या मैं वहां तक नहीं पहुंच सकती ? डोर थामने वाला कोई हो। वकील साहब ने मेरा जीवन नष्ट कर दिया । आप जानते हैं कि कागज की निर्जीव पतंग भी उड़ाने वाले के हाथों पड़कर ही आकाश को चूमती है और बादलों के साथ अठखेलियां करती है । फिर भला मैं, जिसके जीवन में उमंग है, विकास की योजना है, प्रगति का उत्साह है, उन्नति की आकांक्षा है और कुछ कर गुज़रने की अभिलाषा है, क्या कुछ नही कर सकती ?"

"तुम सब कुछ कर सकोगी बेला ! तुम्हारे विकास के सम्मुख बड़ी-बड़ी प्रगतियां फीकी पड़ जायेंगी, ये आकाश में चमकने वाली तारिकायें लुप्त हो जायेंगी और तुम्हारा स्थान संसार की उन तारिकाओं में होगा जो कला की देवि हैं ।

आज मैं कला शब्द का प्रयोग कर रहा हूं बेला तुम्हारे सम्मुख । अब तुम गृहस्थ के जीवन को तिलांजलि दे चुकी हो। अब तुम कलाकार हो । राष्ट्र के निर्माण का तुमने बीड़ा उठाया है। राष्ट्र की नीरसता में सरसता का संचार करने वाली तुम वह कलाकार बनो बेला ! कि जिसपर राष्ट्र का बच्चा-बच्चा रीझ उठे, न्यौछावर होने के लिए बल खाता हुआ चला आये। तुम वह शमा बन जाओ बेला ! कि जिसपर परवाने मर मिटने के लिए अपने जीवन का मोह छोड़ कर अपने पंख जला डालें और उस पीड़ा को लेकर तड़पें जिसमें अमरत्व की ज्वाला है। तुम वह कलाकार बनो बेला ! जिससे तुम राष्ट्र के जीवन में अपने मदमाते हुए यौवन के विकास का वह अमर संदेश बिछा सको जिसमें भावी आकांक्षायें साकार होकर एक ऐसे स्वर्ग का निर्माण करने में सफल हो सकें जो चिर अमर हो; चिर विकासमय हो, चिर प्रगतिशील हो। तुम कला की वह देवि बनकर राष्ट्र के सम्मुख आओ जिसके हर इंगित पर राष्ट्र के लिए बलि पथ का निर्माण हो सके। तुम्हारा जीवन अब साधारण जीवन नहीं है बेला ! तुम संसार से ऊपर उठ चुकी हो। तुम प्रगति के उस क्षेत्र में पदार्पण कर चुकी हो जहां आत्मा अमर है।" और इतना कहकर गंभीर मुद्रा के साथ मंत्री जी ने नेत्र बंद करके कहा, "मैं तुम्हें अमर कर दूंगा

बेला ! तुम अमर हो। तुम्हारा जीवन धन्य है जो तुमने राष्ट्र के लिए इतना महान् त्याग किया।"

बेला अब इस लोक में नहीं थी। वह अमर थी, स्वर्ग लोक की न जाने किस वाटिका में विचरण कर रही थी। मंत्री जी ने इस बीच में क्या कहा यह वह कुछ न समझ सकी। उसका काम था आज्ञा पालन करना। बुद्धि से संबंध रखने वाली सब समस्याओं को वह ठाकुर राजबहादुरसिंह और मंत्री जी के सुपुर्द कर चुकी थी।

साढ़े आठ बजे का समय हो गया था। ठाकुर साहब बोले, "मंत्री जी भोजन तय्यार है। यदि आज्ञा हो तो नौकर को भोजन लाने के लिए कहा जाय।"

"परन्तु मुझे तो जाना होगा मंत्री जी।" बेला बोली।

"कहां जाना होगा ?" मंत्री जी ने पूछा। "तुम्हारे लिए एक पृथक स्थान का प्रबन्ध किया जा चुका है बेला ! तुम्हें अब उस खूसट वकील के घर जाने की कोई आवश्यकता नहीं।"

"परंतु वह मकान तो मेरे नाम है। मैं चाहूँ तो कानूनन उसे बाहर निकाल सकती हूं।" गर्व के साथ बेला बोली, "वह मकान शादी के समय उसने मेरे नाम कर दिया था। अब उसपर उसका कोई अधिकार नही। यदि मैंने वहां जाना-आना छोड़ दिया तो वह उस पर कब्ज़ा कर लेगा।"

"बात तो ठीक है मंत्री जी ! मकान को क्यों छोड़ा जाय ? मकान छोड़ना मूर्खता होगी।" ठाकुर साहब ने कहा।

"ठीक है। मकान पर जाना-आना नहीं छोड़ना चाहिए तुम निश्चित रहना। अपने संरक्षण में तुम मुझे छाया के समान पाओगी। उस खूसट वकील से भय न मानना और जो कुछ भी वह कहे उसका मुंह तोड़ उत्तर देना।" मंत्री जी ने कहा।

ड्राइवर कार लेकर पोर्टिगो में आ गया। मंत्री जी तथा ठाकुर साहब ने बेला को कार में बिठाया। बेला ने नमस्कार किया और कार चली गई।

: २७ :

कार कोठी के दरवाज़ से बाहर निकली तो मंत्री जी तथा ठाकुर साहब ने एक दूसरे की कौली भर ली और दोनों अपनी सफलता पर ठहाका मार कर हंस दिये।

"तुम्हे भी कमाल हासिल है मंत्री जी ! मैं कहता हूं कि किसी दिन तुम बहुत बड़े आदमी बनोगे।" ठाकुर साहब ने कहा।

यह वाक्य मंत्री जी ने गंभीरतापूर्वक सुना और मन में कहा, 'क्या गधा आदमी है यह ठाकुर भी। दुनिया का सबसे बड़ा आदमी तो मैं आज भी हूं। न कोई चिंता है, न फ़िक्र, मस्ती की छानता हूं। परियां मेरे पैर छूती है, देवियां मेरा आदर करती है, संसद के सदस्य मेरी आज्ञा मानते हैं, सेठ गूदड़मल जैसे मेरे संकेतों पर नाचते है, फिर मुझे और चाहिए क्या ?'

शीशे की मेज पर अंगूरी विराजमान हो चुकी थी। ठाकुर साहब और मंत्री जी मेज के दोनों ओर बैठ गये। एक-एक पैग हलक़ से नीचे उतारकर दोनों ने एक दूसरे के मुंह पर देखा और मुस्कुराते हुए दूसरा ढाल कर ठाकुर साहब बोले, "मत्री जी, मैं तो आपका दास हो चुका। बेला को प्राप्त करने में आपने कमाल कर दिया।"

"अभी आपने कमाल देखा ही क्या है ठाकुर साहब ?" जरा आंखें ऊपर उठाते हुए मंत्री जी बोले, "यह तो साधारण सी घटना है। सरोज को तो मैं सात संगीनों के बीच से निकालकर लाया था।" गर्व के साथ मंत्री जी ने कहा।

"सरोज को !" ठाकुर साहब ने पूछा।

"हां सरोज को। दुनिया देखी है इस छोटे से शरीर ने।" मंत्री जी ने कहा।

एक बार मंत्री जी के जी में आया कि सरोज को लाने और कला निकेतन स्थापित करने की सब गाथा सुना डाले परंतु तुरंत ही मंत्री जी की चेतना शक्ति अंगूरी खुमार से ऊपर उठ कर सजगता के साथ कह उठी नही संकटानंद ! तू संसार का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति है। तेरे रहस्यों का उद्‌घाटन इस प्रकार भावावेश में नही होना चाहिए।

यह विचार आते ही मंत्री जी ने बातों का रुख बदलते हुए कहा, "ठाकुर साहब अब आपको पत्र निकालना है। जुट जाना है पत्र के काम पर।"

"विश्वास रखिये मंत्री जी! मैं पत्र के लिए रात दिन एक कर दूंगा।" ठाकुर साहब ने नशे में कहा।

दोनों पक्के पिअक्कड़ थे। जी खोल कर मदिरा पी और नशे में झूम कर मस्त हाथियों की तरह दोनों अपनी-अपनी आराम कुर्सियों पर ढुलक पड़े।

ठाकुर साहब अधिक पीकर बेहोश हो जाते थे परंतु मंत्री जी कभी भी चाहे कितनी ही क्यों न पी लें होश नहीं खोते। ठाकुर साहब को जब अपना कुछ पता न रहा तो मंत्री जी ने नेत्र खोल कर देखा, चारों ओर सन्नाटा था। ठाकुर साहब का गिलास मेज से गिर कर टूट चुका था और मेज पर रखी हुई एक बोतल में थोड़ी मदिरा शेष थी। मंत्री जी ने बोतल उठा कर अपने होठों से लगा ली और विजय का अनुभव करते हुए सीने में उभार लेकर बाहर बरांडे में घूमने लगे।

ग़ज़ब की मस्ती थी इस समय मंत्री जी के घूमने में। संसार उनकी दृष्टि में एक खिलौना था, जिसके साथ वह मस्ती में झूम-झूम कर खेल रहे थे। आकाश में टिमटिमाते हुए सितारे मंत्री जी को लगे कि मानो वे सब उन्हीं के नेत्रों से प्रकाश पाकर देदीप्यमान थे।

दो चार कदम घूम कर मंत्री जी फिर अपनी कुर्सी पर जम गये और एक तरफ को सिर करके नेत्र बंद कर लिये।

: २८ :

सरोज की कोठी से चल कर वकील साहब सीधे घर पहुंचे और निर्जीव काठ के टुकड़े की भांति उन्होंने अपने शरीर को बैठक के सोफे पर लापरवाही से डाल दिया।

मुक़दमों की फाइलें जो उनकी बगल में थीं, उछलकर एक ओर जमीन पर जा गिरीं।

पहाड़ी नौकर ने वकील साहब की दशा पर तरस खाते हुए पूछा, "सरकार कहें तो चाय बना लाऊं।"

वकील साहब ने नौकर के मुख पर करुण दृष्टि से देखा और नौकर समझ गया कि सरकार को चाय की दरकार है। वह तुरंत चाय बना लाया और गोल मेज पर वकील साहब के सामने रखकर बोला, "चाय मैं अभी बना देता हूं सरकार!"

वकील साहब प्रातःकाल से घूमते-घूमते थक चुके थे। बदन चूर-चूर हुआ जा रहा था। उन्होंने चाय की प्याली उठा कर होठों से लगाते हुए कहा, "पहाड़ी! तू बेला से ज्यादा वफ़ादार है।"

चाय पीकर वकील साहब का दिमाग कुछ ठीक हुआ और वह पहाड़ी से बोले, "पहाड़ी तू सामने वाली कुर्सी पर बैठ जा। अब मैं संसार में सबके साथ समता का व्यवहार करूंगा।"

पहाड़ी को सामने बैठने के लिए वकील साहब कह ही रहे थे कि सामने से स्वामी ज्ञानानंद जी आते दिखाई दे गये। वकील साहब ने जेब से रूमाल निकाल कर अपना मुंह पोंछा और फिर आदरपूर्वक स्वामी जी का स्वागत करते हुए बोले, "बैठिये स्वामी जी! आनंदपूर्वक तो हैं?"

"आनंदपूर्वक क्या हूं वकील साहब! मंत्री संकटानंद के किये को भर रहा हूं। धर्म के नाम पर जो धन एकत्रित किया था उसे वह धूर्त्त चटाल गया और मेरे गले में उसने फंसा दिया है टूटी-फूटी मशीन वाला प्रेस और रुपया निगलने वाला दैनिक पत्र। मस्तिष्क काम नहीं करता कि अब क्या करूं? मेरे ऊपर

उस धूर्त्त ने लीडरी का भूत चलाया कि मेरा स्वाध्याय छूट गया, मेरे मस्तिष्क की शांति जाती रही और मन अनेकों परेशानियों में ग्रस्त हो गया।" दुखी मन से स्वामी जी बोले। "उसने मेरे जीवन की शांति मुझ से छीन ली वकील साहब ! बहुत बड़ा धूर्त्त निकला।"

कुछ ठहर कर स्वामी जी फिर बोले, "अच्छा भला मैं पाठशाला में विद्यार्थियों को संस्कृत पढ़ाता था और अनेकों विद्यार्थी हर समय मेरी सेवा में रहते थे। चिंता मेरे पास फटकती नहीं थी। इस धूर्त्त का पत्र पाकर 'हिन्दू कोड बिल विरोधक सभा' में व्याख्यान देने दिल्ली चला आया। मुझमे व्याख्यान दिलाकर मुझे दिल्ली में फंसा लिया।"

स्वामी जी ने अपनी यह गाथा इतनी स्वाभाविकता से कही कि वकील साहब उसमें तनमय हो गये।

इसी तन्मयता में उनकी आंखें मिच गईं और वह अर्द्धबेहोशी में सोफे पर एक ओर को ढुलक गये।

पहाड़ी नौकर ने संक्षेप में स्वामी जी को बताया, "एक कोई मंत्री संकटानन्द थे। यहां रोज आया करते थे। उन्होंने किसी तरह वकील साहब की मेम साब पर जादू कर दिया। अब इनकी और मेम साब की नहीं बनती। मेम साब मंत्री जी के पीछे-पीछे घूमती है। उन्हीं की कार में आती जाती हैं।"

स्वामी जी का माथा ठनक गया और वह समझ गये कि इस धूर्त्त ने बेला को भगा दिया। बकील साहब यह समझते होंगे कि मैं भी उसी का भेजा हुआ यहां पर आया हूं और संभवतः कोई और हथकंडेबाजी करना चाहता हूं। उसने मुझे अपने मित्रों और परिचितों में भी जाने योग्य नहीं छोड़ा।

वकील साहब की आंखें थोड़ी देर में खुल गईं।

"मंत्री जी ने आपको भी धोखा दिया। वह मनुष्य के रूप में सर्प है।" ये शब्द कहते हुए वकील साहब के अन्दर इतनी दीनता आ गई कि उनके नेत्रों से अश्रु-धारा बह निकली। वकील साहब नादान बालक की भांति हिड़क-हिड़क कर रोने लगे और उनकी पतली और सूखी नाक से लम्बे-लम्बे निश्वास निकल कर उनकी दीन परिस्थिति को और भी दीन बनाने लगे।

स्वामी ज्ञानानन्द यह हृदय-विदारक दृश्य देखकर अपने को न संभाल सके

और यह समझते हुए कि वास्तव में इस गृहस्थी के उजड़ जाने में उनको भी साधन बनना पड़ा है, वह गंभीरतापूर्वक बोले "वकील साहब ! पुरुष होकर नारियों की तरह रोना आपको शोभा नहीं देता। धैर्य से काम लीजिए। भगवान ने चाहा तो मैं आपके इस आपत्ति-काल में कुछ न कुछ काम आ सकूंगा।" स्वामी जी ने साहस बंधाते हुए कहा।

स्वामी जी का आश्वासन पाकर वकील साहब के नेत्रों में आशा झलक आई और उन्होंने गद्‌गद् होकर स्वामी जी के चरण छू लिए। वकील साहब स्वामी जी के चरण छू ही रहे थे कि मकान के सम्मुख एक कार रुकी और उसमें से उतरकर झमझमाती हुई बेला अपना चमकदार बैग हाथ में लिए सामने वाले पक्के फर्श पर खटाखट चरमर-चरमर करती हुई बैठक में घुस आई।

स्वामी ज्ञानानन्द को देखकर बेला के तन-बदन में आग लग गई। फिर भी शिष्टता के नाते क्रोध को दबाकर कटु व्यंग्य के साथ बोली, "कहिए स्वामी जी ! आपके 'हिन्दू कोड बिल विरोध' की धारा में क्या प्रगति हो रही है ?"

बेला के पूछने का ढंग इतना विचित्र था कि स्वामी ज्ञानानन्द देखते ही रह गये। एक बार तो वह अपनी आंखों पर विश्वास ही न कर सके कि यह वही बेला है जिसने आदर-भाव से उन्हें कितनी ही बार अपने हाथ से भोजन कराया है।

परन्तु वही तो थी यह बेला। आज तो इसका सभी कुछ बदला हुआ था। न वह पुराने हाव-भाव थे और न वह पहनावा ही। आंखों की पुतलियां भी आज कुछ विचित्र प्रकार से चल रही थी और हाथों के इशारे भी कुछ भेद-पूर्ण थे। स्थिरता तो मानो नाम मात्र के लिए भी उसमें वर्तमान नहीं थी और बदन का हर भाग कई-कई बार बिना प्रयास के फड़क जाता था, बल खा जाता था। साड़ी फर्र-फर्र करके पंखे की हवा में उड़ रही थी। उसे रोकने का कोई प्रयास भी बेला ने नहीं किया।

स्वामी जी ने बेला के प्रश्न का उत्तर देना अपना अपमान समझा परंतु इस समय इस कटु व्यंग्य का उत्तर न देना भी उससे बड़ा अपमान था।

गंभीर मुद्रा बनाकर स्वामी जी बोले, "धाराओं की प्रगति आजकल

नारियों ने छीन ली है बेला ! इसलिए यदि प्रगति की खोज करनी है तो किसी नारी का परीक्षण करना होगा।"

उत्तर सुनकर बेला मुस्कुरा दी और फिर उसी कटुता के साथ बोली, "आज नारी की प्रगति को देखकर आपको डाह होती है। दिल में आग लगती है, जलन होती है। बहुत शीघ्र वह समय आने वाला है जब यह और अधिक होगी। जरा दिल को मजबूत करके रखिए। कहीं ऐसा न हो कि वह नारी की प्रगति में एक पत्थर के टुकड़े की तरह लड़खड़ाता हुआ वह निकले और अपना अस्तित्व ही खो दे।"

"पथ-भ्रष्ट व्यक्ति लड़खड़ाया करते हैं बेला !" स्वामी जी गम्भीरता-पूर्वक बोले।

बेला सामने कुर्सी पर बैठ गई और वकील साहब बलि के बकरे के समान एक ओर सोफे पर पड़े रहे।

"परन्तु आपका तो कोई पथ ही नहीं है स्वामीजी ! मैं आपको अधूरा मानती हूं। पुरुष स्त्री के बिना अधूरा है। आपको स्त्री का कोई ज्ञान नहीं। इसलिए आप अपूर्ण हैं और अपूर्ण व्यक्ति का कोई निर्धारित पथ नहीं हो सकता। वह तो सदा बेपेंदी के लोटे के समान रहता है।" कह कर बेला बड़े भारी व्यंग्य के साथ मुस्करा दी।

अपने लिये बेपेंदी का लोटा शब्द सुनकर स्वामी जी का दिल एक दम अंगारे की तरह दहक उठा और रक्तिम रेखायें उनके नेत्रों में खिंच गई। परंतु किसी प्रकार क्रोध को पीकर वह बोले, "बेला ! छोटे मुंह बड़ी बातें न करो।" और इतना कह कर स्वामीजी उठकर खड़े हो गये।

चलते समय बेला ने और भी गंभीर व्यंग्य कसते हुए कहा, "स्वामी जी ! हमारे इन वकील साहब को भी अगर आप अपने साथ रखकर गुरु दीक्षा दे डालें तो इनका जीवन भी सुपथ पर लग जाये। आजकल बेचारे बड़े परेशान से रहते हैं।"

सुनकर स्वामी जी मुस्कुरा दिये और हल्की सी आवाज़ में बोले, "बेला ! तुम जिस रास्ते पर जा रही हो वह किसी दिन तुम्हें जीवन में ऐसा झटका देगा कि तुम सिर पीट-पीट कर मर जाने पर भी सुमार्ग न पा सकोगी।"

"इस प्रकार के न जाने कितने उपदेश आज तक सुन चुकी हूं स्वामी जी !

मैं आप से पूछती हूं, जरा ठहर कर उत्तर दीजिये। तिलमिलाकर भाग क्यों खड़े हुए आप ? मैं आपको पकड़कर बाँध नहीं लूंगी। मुझे बताइये कि क्या आपकी दृष्टि से मैं इन वकील साहब की पत्नी बनने योग्य हूं ? या दूसरे अर्थों में आप यह समझिए कि यह वकील साहब जिनके गालों में पचासों झुर्रियां पड़ चुकी हैं, जिनका शरीर केवल अस्थियों का पिंजर मात्र रह गया है, जिनका मस्तिष्क खोखला हो चुका है, जिनकी विचार-धारा शिथिल पड़ गयी है, जिनके जीवन से आनंद और उमंगों की लहरों का लोप हो चुका है, जिनमें व्यर्थ के लिए पैसा कमाने की भूख के अतिरिक्त और कुछ रह ही नहीं गया, जो व्यर्थ के लिए जी रहे हैं क्योंकि मरना अपने हाथ की बात नहीं वह पति बनकर मेरे जीवन के साथ क्या न्याय कर सकते हैं ? आप संस्कृत के प्रकांड पंडित हैं। न्याय-शास्त्र क्या कहता है इस विषय में ?"

यह बात बेला ने बहुत गंभीरतापूर्वक कही और वह इस समय वास्तव में जो कुछ कह रही थी वह उसके हृदय की पुकार थी, व्यंग्य नहीं था।

स्वामी ज्ञानानंद के बढ़ते हुए क़दम रुक गये और वह लौटकर बैठक में चले आये। बेला ने उन्हें बैठने का संकेत किया और वह बेला के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गये।

स्वामी ज्ञानानंद ने भेदपूर्ण दृष्टि से बेला के मुख-मंडल पर दृष्टि डाली और देखा कि उस पर वास्तव में जिज्ञासा के चिन्ह अंकित हो उठे थे। स्वामी जी ने बात में कुछ रहस्य देखकर अपने को और भी गंभीर बना लिया और घन-गर्जन के समान गंभीर ध्वनि परंतु धीमे स्वर में बोले, "बेला ! तुमने हमारे न्याय शास्त्र को चुनौती दी है। इसलिए हमें लौटना पड़ा। तुम्हारा जीवन इस समय एक भयंकर झंझावात के पंखों पर उड़ान भर रहा है। इसलिए तुम्हारे हृदय, मन और बुद्धि की गति तीव्र हो चुकी है। उसमें स्थिरता का अभाव है। तुम इस समय किसी भी समस्या पर शांति के साथ विचार करने में असमर्थ हो। इसलिये न्याय जैसे कठिन और रहस्यात्मक विषय पर इतनी सरलता से विचार नहीं कर सकोगी। तुम एकदम न्याय शास्त्र के उच्च शिखर पर पहुंचने का स्वप्न देख रही हो, परंतु वह स्वप्न देखने से पूर्व तुम्हें उसके अ, आ, इ, ई, पढ़ लेने चाहिएं।"

स्वामी जी ने यह बात इतनी गंभीरतापूर्वक कही कि बेला इससे प्रभावित

हुए बिना न रह सकी। स्वाभाविक सरलता के साथ वह बोली, "मैं आपका मतलब नहीं समझ सकी स्वामी जी !"

बेला ने इस प्रकार स्वामी जी के मुख पर देखा मानो वह वास्तव में उनसे कुछ जानना चाहती थी।

"व्यंग्य और उपहास ही जीवन की सबसे महत्वपूर्ण समस्याएं नहीं होतीं बेला ! बाहरी आवरण के ही आधार पर कभी आत्मा की परख नहीं की जा सकती। पहले तुम मुझे यह विश्वास दिलाओ बेला ! कि तुम वास्तव में न्याय की खोज में हो या केवल उपहास मात्र के लिए व्यंग्य की कसौटी पर कसकर जीवन के कुछ क्षण व्यतीत करना चाहती हो ?" स्वामी जी ने गंभीर होकर प्रश्न किया।

बेला एक क्षण मौन रही। उसका हृदय इस समय विचलित सा होता जा रहा था। कभी-कभी बेला इस प्रकार की बेचैनी अपनी आत्मा में उस समय भी अनुभव किया करती थी जब वह एकांत में बैठकर इस पर विचार करती थी। वह बहुत दीनता के साथ बोली, "मैं वास्तव में न्याय की खोज में हूं स्वामी जी ! परन्तु न्याय को रूढ़ियों के आधार पर मानने को उद्यत नहीं हूं, मैं वह न्याय चाहती हूं जो बोधगम्य हो।"

समस्या जटिल थी। स्वामी जी के मन ने अनुभव किया बेला के साथ अन्याय तो अवश्य है। इस खूसट वकील के बच्चे को पचास वर्ष की आयु में रुपये देकर विवाह करने की क्या आवश्यकता थी ?

और अन्याय इसके पिता ने भी किया, जिसने अपनी मदिरा-लिप्सा की शांति और तृप्ति के लिए कन्या को बेचकर एक ऐसा अनमेल जोड़ा बनाया कि जिनकी आत्माएं मिल कर कभी एक नहीं हो सकतीं।

परन्तु अब प्रश्न यह है कि क्या बेला की आत्मा वकील साहब को छोड़ने पर शांति प्राप्त कर सकती है ? क्या यह दूसरा विवाह करके सुखी हो सकती है ? क्या बेला के जीवन का यह वकील से विवाह करने वाली घटना कभी जीवन में विस्मृत हो सकेगी ? और यदि नहीं, तो निश्चय ही बेला को कभी शांति नहीं मिल सकती।

न्याय शास्त्र अपना यह निर्णय देकर एक तरफ जा बैठे कि बेला के साथ वकील और उसके पिता दोनों ने अन्याय किया है तो 'हिन्दु कोड बिल' के

अनुसार बेला स्वतंत्र है कि वह अपना दूसरा पति स्वयं चुन ले और मुक्त हो कर अपना मार्ग निर्धारित करे। इस प्रकार बेला के मुक्त हो जाने पर वकील चाहे पागल भी हो जाये तो इससे बेला को क्या—न्यायशास्त्र को क्या? न्यायशास्त्र ने अपना काम कर दिया।

यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति की हत्या करदे तो न्याय उसे इस-लिए क्षमा नहीं कर सकता कि उसको फांसी लग जाने पर उसकी स्त्री, माता अथवा कोई अन्य सम्बन्धी उसके विरह में पागल हो जायेगा।

"अच्छा बेला! मैं तुम्हारे जीवन को न्यायशास्त्र की कसौटी पर रख कर ही तुम्हें कुछ समझाने का प्रयत्न करूंगा। इस समय मैं अधिक नहीं ठहर सकता। परंतु चलते समय मेरी तुमसे यही प्रार्थना है कि तुम, पति समझकर न सही, एक परिचित और अपना शुभ चिंतक समझकर ही वकील साहब की जितनी देख-भाल कर सको उतनी अवश्य करना। न्याय या अन्याय जो कुछ भी इन्होंने किया, वह हो चुका, अब लौटने वाला नहीं। बीती बात पर पछताना मूर्खता है। भविष्य को सुधारना ही सभ्य और योग्य व्यक्ति का कर्तव्य होना चाहिये। मैं कल इसी समय आऊंगा और तभी तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूंगा।"

स्वामी जी खड़े हो गये। बेला ने स्वामी जी को चलते समय नमस्कार किया और इस समय उसके व्यवहार में स्वाभाविक सरलता थी, व्यंग्य नहीं, उपहास नहीं।

मंत्री जी के चले जाने पर बेला ने अपने कमरे में जाकर रात्रि के वस्त्र पहने। फिर अपने नौकर को बुलाकर पूछा, "कुछ खाने के लिए बनाया है क्या?"

"बनाया है बहूजी!" पहाड़ी नौकरों की ज़बान से निकला।

बेला को भी भूख कड़ाके की लगी थी। पहाड़ी को मेज पर खाना परोसने के लिए कह कर बेला बैठक में आई और वकील साहब को झंझोड़ती हुई बोली, "खाना नहीं खाओगे आज?"

वकील साहब ने बेला के मुस्कराते हुए मुख पर एक बालक की भांति देखा और कितना ही पिटने पर जिस प्रकार अबोध बच्चा माता के तनिक पुकारने पर हंसने लगता है उसी प्रकार वकील साहब बिना एक शब्द भी मुंह से कहे बेला के साथ खड़े हो लिये।

"यह कपड़े उतार डालिए और गुसलखाने में जाकर हाथ मुंह धो लीजिये। मैं तब तक खाना मेज पर परसवाती हूं ?" कहकर बेला अन्दर चली गई।

वकील साहब इस समय मन से स्वामी ज्ञानानन्द का गुणगान कर रहे थे और उन्हें रह-रह कर अपनी मूर्खता पर क्रोध आ रहा था कि क्यों उन्होंने ऐसे आपत्तिकाल में काम आने वाले मित्र से भी एक साधारण सा केस लड़ने के लिए फीस माँगी।

वह अपने मन में अपने उस व्यवहार पर रह-रह कर दुखी हो रहे थे और साथ ही गुसलखाने में जाकर कुल्ला करने में भी व्यस्त थे। विचारों में वह इतने डूब गये थे कि कितनी ही देर तक कुल्ला करते रहे।

जब बहुत देर होगई तो बेला स्वयं तौलिया लेकर गुसलखाने में जाकर मुस्कुराते हुए बोली "अब कुल्ला ही करते रहोगे क्या ? गिने गिनाए तीन तो दाँत रह गए हैं मुंह में, क्या इन्हें भी निगमबोध घाट पहुँचाने की ठानी है ?" कहते हुए तौलिया वकील साहब के हाथ में दे दिया।

दोनों ने एक मेज पर बैठकर खाना खाया।

आज पहाड़ी नौकर भी प्रसन्न था। घर की बिगड़ती हुई दशा को देख कर वह बहुत दुःखी रहता था। घर की उजड़ती हुई आभा उसे आज फिर लौटती दिखाई दी।

: २६ :

"मैंने तुम्हें अशांति से शांति की ओर लाने का प्रयास किया है सरोज !" चेहरे पर मुस्कान लिए ब्रह्मचारी ने सरोज का हाथ अपने हाथ में लेकर कुतुब मीनार के दाहिने ओर वाले घास के साफ़-सुथरे मैदान में बैठे हुए कहा, "जीवन में प्यास को, भूख को, अतृप्ति और यों कहो सरोज कि वासना को व्यक्ति जितना भी विस्तृत स्थान देना चाहे दे सकता है। यह सब कहने का मेरा तात्पर्य तुम यह न समझ बैठना सरोज ! कि मानव के जीवन में यह सभी चीज़ें नहीं होनी चाहियें। ये सभी स्वाभाविक हैं और इन सभी का नाम जीवन है। यदि जीवन से प्यास, भूख, अतृप्ति और वासना को निकाल दिया जाये तो जीवन-जीवन न रहे।"

"परंतु बेला के विषय में तुम्हारा क्या विचार है ब्रह्मचारी ? क्या यह उसके जीवन की वासना है जो उसे इस प्रकार पागल बना कर भटकने के लिए बाध्य कर रही है ? मुझे मंत्री संकटानंद एक नरक कुंड से निकाल कर लाये थे। मैं उनकी अभारी हूं और जीवन भर अभारी रहूंगी ! परंतु बेला को निकाल कर लाने में उनका क्या उद्देश्य है ?" स्वाभाविक सरलता से सरोज ने पूछा और अपने दोनों बड़े-बड़े नेत्रों को ब्रह्मचारी के मुंह पर बिछा दिया।

समय सुहावना था। मंद पवन बह रही है थी और आकाश पर छोटे-छोटे बादलों की टुकड़ियां अपने-अपने मार्ग पर चली जा रही थीं। कभी जब वे मिलकर एक हो जाती थीं तो बारिश के भी लक्षण दिखाई देने लगते थे। परंतु ज्यों ही उन टुकड़ियों में से दो आगे को खिसकीं कि प्रकाश हो जाता था और नन्हीं-नन्हीं फुवारें पड़नी बंद हो जाती थीं। सरोज के कुछ उलझे और कुछ पवन के झकोरों में बहते हुए बालों पर नन्हीं-नन्हीं फुवारें मोतियों की तरह जड़ गई थीं। कभी-कभी ब्रह्मचारी उन अलकों पर पड़ी बूंदों को अपने हाथ से पोंछकर कह उठता था, "सरोज ! हमें चलना भी है। कहीं ऐसा न हो कि बारिश आ जाये !"

"हम कागज के तो हैं नहीं, जो गल जायेंगे। चिन्ता की क्या बात है ?"

कहकर सरोज ने मुस्कुराकर ब्रह्मचारी की हथेली धीरे से दबा दी।

"मैं चिंता कभी अपने लिए नहीं करता सरोज! परंतु सरोज पानी में खिलकर पानी ही में गल भी जाता है।" कहकर ब्रह्मचारी ने सरोज के नेत्रों पर नेत्र डालकर देखा तो वह वस्तु देखी जिसके दर्शन वह पहले कभी नहीं कर सका था।

ब्रह्मचारी अपने को संभालता हुआ बोला, "सरोज! तुम बेला के विषय में कुछ कह रही थीं। बेला का जीवन इस समय तुम्हारे जीवन की ठीक विपरीत दिशा में जा रहा है। रही मंत्री संकटानंद की बात सो उनको समझना एक बहुत टेढ़ी खीर है। बेला मंत्री जी को नहीं समझ सकती, तुम नहीं समझ सकी हो। आज मैं तुम्हें मंत्री जी के जीवन की कुछ रहस्यपूर्ण बातें बताता हूं।" इतना कहकर ब्रह्मचारी गंभीर हो गया।

मंत्री जी के विषय में रहस्यपूर्ण बातें सुनने के लिए सरोज सतर्क होकर बैठ गई और उसने अपने दोनों कान ब्रह्मचारी की ओर लगाकर पूछा, "क्या आप मंत्री जी को पहले से जानते हैं?"

"किसी भी व्यक्ति को जानने के लिए पहले से जान लेना आवश्यक नहीं। व्यक्ति उसके व्यवहार से जाना जाता है और उसके विधि व्यवहारों से मिलकर ही उसके चरित्र का निर्माण होता है। मंत्री जी का चरित्र बहुत ठोस है और प्रगतिशील भी। स्वार्थ मंत्री जी की नस-नस में रमा है और उनका कोई कार्य जीवन में ऐसा नहीं होता जिसमें उनका स्वार्थ निहित न हो।

यों साधारणतया स्वार्थ मानव मात्र में पाया जाता है परन्तु कहीं कहीं यह मानव के ऊपर छा जाता है।

"परंतु एक दिन तुमने बतलाया था ब्रह्मचारी कि व्यक्ति में यह स्वार्थ की भावना प्रधान रूप से निहित रहती है।" सरोज बीच ही में बोल उठी।

"ठीक वही बात मैं आज भी कह रहा हूं। मंत्री संकटानंद के अन्दर एक गहरी प्रेम की लालसा छिपी हुई है। वह प्रत्येक नारी को प्रेम करते हैं और अपना तन, मन, धन उस पर न्यौछावर करने को तैयार रहते हैं। परंतु उनमें एक कमजोरी है कि वह किसी स्त्री के सम्मुख अपना प्रेम-प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं कर सकते।" कहकर ब्रह्मचारी मुस्कुरा दिया। सरोज का हाथ दबाकर कहा, "जाने दो इस बात को। अपने को लेना ही क्या है?"

"जी नहीं! ऐसे ही नहीं जाने दिया जायेगा! आज तुमने मेरे साथ

प्रथम बार इतना तीव्र व्यंग्य किया है। तुम्हारा कहने का मतलब यह है कि मंत्री संकटानंद सरोज को प्रेम करते हैं और कह नहीं सकते।" आंखें तरेरते हुए सरोज बोली।

ब्रह्मचारी उसी प्रकार सरोज का हाथ अपने हाथ में लिये मुस्कुरा रहा था। सरोज ने ब्रह्मचारी को झंझोड़ते हुए पूछा, "बोलो ! अब चुप क्यों हो ?"

"ठीक यही बात है सरोज ! वह तुम्हारे ऊपर अपना अधिकार समझते हैं। और उनकी इस अधिकार भावना को कोई किस्म की ठेस न लगे इसीलिए मैं भी तुम देखती नहीं हो कि उनके साथ कितने आदर और सभ्यता से व्यवहार करता हूं। वरना वह व्यक्ति इस योग्य नहीं है कि उसे घर में भी आने दिया जाये।" सरोज के घर पर अपना अधिकार प्रकट करते हुए ब्रह्मचारी गंभीर होकर बोला।

सरोज को सतर्क हो जाना पड़ा। पहले वह कुछ सहमी परंतु तुरंत ही मधुर कंठ से बोली, "यदि तुम ऐसा समझते हो ब्रह्मचारी ! तो क्यों नहीं उनका कोठी पर आना आज तक रोक दिया गया ?" प्रश्नवाचक दृष्टि से सरोज ने ब्रह्मचारी के मुख पर देखा।

"ऐसा करना मेरी अनधिकार चेष्टा होती सरोज !" कहकर ब्रह्मचारी ने खड़ा होना चाहा, परंतु सरोज ने ब्रह्मचारी का हाथ कसकर पकड़ लिया और बहुत ही दीन भाव से बोली, "ब्रह्मचारी ! तुम्हारे इन शब्दों से मेरे हृदय को ठेस लगी है।"

"यह मैं जानता हूं सरोज !" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी बोला।

"तब क्या मेरे हृदय को ठेस लगाने के लिए ही तुमने यह बात कही है ?" सरोज ने पूछा।

"यह धारणा तुम कर सकती हो सरोज ! मैंने कभी कोई कार्य जीवन में ऐसा नहीं किया जो किसी भी व्यक्ति के हृदय को ठोस पहुंचाने के लिए किया हो, परन्तु जीवन की स्वाभाविक गति पर मेरा अधिकार नहीं।

मैं जीवन की प्रगति को बलपूर्वक कभी भी रोकने का प्रयत्न नहीं करूंगा जिस समय तुम्हें चरण-रज देने के लिए मेरा हाथ बढ़ा था तो क्या मैंने अपना हाथ इसलिए बढ़ाया था कि उससे स्वामी ज्ञानानन्द के हृदय को ठेस लगेगी और क्या तुम समझती हो कि मेरे रहते हुए यह मंत्री संकटानन्द इस प्रका

स्वामी ज्ञानानन्द का उल्लू बनाकर अपना पाखंड खड़ा कर सकता था ?

खैर जाने दो इन बातों को सरोज ! जीवन एक लम्बी कहानी है। इसे जितना भी कम जटिल बनाकर रखा जा सके उतना ही रखना चाहिए। विस्तार का कहीं अन्त नहीं और विस्तार में सुख और शान्ति का सर्वदा अभाव रहता है, मैं जिस दिन से तुम्हारे सम्पर्क में आया हूं उस दिन से तुम्हारे जीवन को विस्तार की ओर न ले जाकर एक सीमित क्षेत्र में बांधने का प्रयत्न किया है। मेरे प्रयत्न की सफलता और असफलता तुम्हारी विचारशीलता पर निर्भर है।" कहकर ब्रह्मचारी मौन हो गया।

सरोज ब्रह्मचारी को परख नहीं पाई थी, यह बात नहीं। मंत्री जी के विषय में ब्रह्मचारी ने जो कुछ भी आज बताया उसे सुनकर उसकी आत्मा तिलमिला उठी थी। उसने कभी आज तक यह विचार भी नहीं किया था कि एकांत में उसे पुत्री कहने वाले मंत्री जी हृदय में उसे प्रेमिका के सिंहासन पर भी आरूढ़ कर सकते हैं। मंत्री जी की प्रेमिका का विचार मन में आते ही सरोज की आँखों में मंत्री जी का चित्र झूल उठा। वह मन में पहले मुस्कुराई, फिर गंभीर हुई और अन्त में थर-थर करके काँप उठी। उसका तमाम बदन पसीना-पसीना हो गया। ब्रह्मचारी ने बहुत सावधानी से सरोज को संभालते हुए लिटा दिया। थोड़ी देर में सचेत होने पर सरोज बोली।

"यह क्या हुआ ब्रह्मचारी ?"

"कुछ नहीं। थोड़ा जल पी लो।" गिलास में जल देकर ब्रह्मचारी बोला "ऐसा कभी-कभी हो जाता है। परंतु तुम्हें भयभीत नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के धूर्त्त व्यक्ति कमजोर मस्तिष्क पर ही अपना प्रभाव डाल सकते हैं। तुम जैसी चेतन-बुद्धि वाली स्त्री पर इनका जाल अधिक देर तक काम नहीं कर सकता। आज जब बात इतनी आगे बढ़ी ही है तो तुम्हें इतना और बतला दूं कि तुम्हें यह मंत्री जी अपनी स्वार्थ-सिद्धि के साधन के रूप में प्रयोग करना चाहते थे।" कहकर ब्रह्मचारी मुस्कुरा दिया और सरोज का हाथ पकड़ कर उठाते हुए बोला, "चलो अब देर हो रही है।"

दोनों उठ कर चल दिये। सरोज इस समय भी सहमी-सहमी चल रही थी और मंत्री जी की डरावनी सूरत उसकी आँखों के सामने बार-बार आ जाती थी।

: ३० :

दो-चार कदम ही चले होंगे कि सामने से सेठ गूदड़मल और आचार्य किशनचंद आते दिखाई दिये। सरोज और ब्रह्मचारी ने आँखें बचाकर निकल जाने का प्रयत्न किया परंतु सेठ गूदड़मल इस सुअवसर को हाथ से कैसे जाने देते ? ऐसा सुहावना समय और फिर यहाँ पर मिल गई सरोज, आचार्य जी की भी बाछें खिल उठीं।

किशनचंद जी जरा रसिक बन कर बोले, "सरोज ! तुम्हारा ही जीवन वास्तव में जीवन है। हम लोग क्या हैं, राजनीति के कीड़े हैं। रात-दिन उसी नाली में पड़े-पड़े रेंगने के अतिरिक्त और कुछ नहीं करते।"

"वाह शास्त्री जी वाह ! आपने भी क्या कह दिया।" सेठ गूदड़मल बोले।

चारों व्यक्ति घूम-फिर कर बाईं ओर वाले फूटे चबूतरे की उन चट्टानों के पास पहुंचे जहां एकांत था और पत्थर के चौड़े-चौड़े टुकड़े इधर-उधर पड़े थे। इन्हीं पत्थरों पर चारों व्यक्ति बैठ गये।

सेठ गूदड़मल आचार्य किशनचंद की ओर संकेत करके बोले, "शास्त्री जी ! मेरी इच्छा है कि सरोज ने गत मास जैसा नाटक किया उसी प्रकार के नाटकों के लिए दिल्ली में एक आधुनिकतम स्टेज तय्यार किया जाये और इस कार्यभार को संभालने के लिए मैं ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश का नाम प्रस्तुत करता हूं। आपकी सरकार को भी इस कार्य में सहयोग देना चाहिए।"

आचार्य किशनचन्द बोले, "क्यों नहीं ? सरकार तो चाहती है कि कला उन्नति करे। देश उन्नति के शिखर पर पहुंचे। सरोज भारत की ही नहीं, संसार की प्रथम कलाअभिनेत्री बन सकती है।

सरोज की आंखों में मादकता है, नशा है और वह जादू है जो दर्शकों पर छा जाता है। वे मंत्रमुग्ध होकर स्वयं को सरोज के अभिनय में खो देते हैं। सरोज के गीतों की मधुर तानों से समस्त वातावरण संगीतमय हो उठता है और इनके रसमय कंठ की स्वरलहरियां श्रोताओं के कानों में इस प्रकार बस जाती हैं कि वह रात्रि में घर जाकर पलंग पर लेटे-लेटे भी उनका आनंद प्राप्त करते हैं।

आचार्य किशनचंद सरोज की प्रशंसा करने में अपने को भूल गये और सरोज भी कला-लोक में विचरण कर रही थी परंतु सेठ गूदड़मल का मस्तिष्क कहीं और ही चक्कर लगा रहा था। वह सोच रहे थे "रिवॉलविंग स्टेज' की बात कि जिस पर पचास लाख रुपया खर्च होगा और वह रुपया सरकार देगी। इस स्टेज को बनाने का ठेका सेठ गूदड़मल को दिया जाएगा। स्टेज बनाने में अधिक से अधिक दस लाख रुपया खर्च आएगा। शेष चालीस लाख रुपए की बचत होगी जिसमे से यदि पांच लाख रुपया भी आचार्य किशनचंद को दे दिया गया तो वह जीवन भर सेठ गूदड़मल के बाल बच्चों को आशीर्वाद देते रहेंगे। सेठ जी जानते थे कि कागजों पर हस्ताक्षर करना और बात होती है और पांच लाख के करारे-करारे नोट अपने इस्तेमाल के लिए हाथों में आ जाना और बात। इस प्रकार सेठ जी अपनी पैंतीस लाख की बचत का गुंताला लगा रहे थे।

"कहिए ब्रह्मचारी जी! आपने क्या विचार किया?" सेठ गूदड़मल ने पूछा।

"किस विषय पर?" मुस्कुराकर ब्रह्मचारी बोला।

"अभी-अभी जो मैंने स्टेज के विषय में प्रस्ताव रखा था वह शायद आपने नहीं सुना। आप क्या कुछ कम कलाकार है? आचार्य किशनचंदजी! कलाकार वास्तव में वही है जो संसार से संबंध विच्छेद करके संसार में रहे। यह कलाकार की परिभाषा एक दिन मुझे मंत्री संकटानंद ने बताई थी। बात वह भी कभी कभी लाख टके की कहते हैं।" गंभीर मुद्रा बनाकर सेठ जी बोले।

"परंतु आज कल तो दस लाख टके की बात कहते हैं मंत्री जी।" ब्रह्मचारी मुस्कराते हुए बोला।

सेठ गूदड़मल का मुंह फक्क पड़ गया। ब्रह्मचारी ने दस लाख टके की बात कही, सो अवश्य इन्हें सब रहस्य मालूम है। सरोज भांप गई कि दस लाख टके की बात में कुछ रहस्य छुपा हुआ है, परंतु आचार्य किशनचंद सरोज की आभा के नीचे इतने दब गये थे कि उन पर यह रहस्य उद्घाटित नहीं हो सका।

सेठ जी आचार्य किशनचंद पर यह रहस्य प्रकट नहीं करना चाहते थे क्योंकि आने वाले चुनाव में आचार्य किशनचन्द और ठाकुर राजबहादुर सिंह की आपस में कुछ चख चल रही थी। ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश को भी रहस्य खोलने का कोई विशेष शौक नहीं था। इसलिए बात वहीं पर दब गई।

ब्रह्मचारी के व्यावहारिक क्षेत्र की कुशलता का जितना महत्वपूर्ण ज्ञान सरोज को आज हो सका उतना उसे अभी तक नहीं हुआ था। ब्रह्मचारी की योग्यता, साहित्य, चातुर्य, गाम्भीर्य, चेतन-शक्ति और बुद्धि के विकास पर सरोज कभी-कभी चमत्कृत हो उठती थी परंतु वह अभी तक यही समझती थी व्यावहारिक दुनिया में ब्रह्मचारी का मार्ग निर्देशन उसे ही करना होगा।

आज उसने अब निश्चित होकर ब्रह्मचारी के हाथों में आत्मसमर्पण कर दिया। चिंता-मुक्त होकर अपने जीवन की पतवारें ब्रह्मचारी के हाथों में दे डालीं।

समय काफी हो चुका था। चारों ओर अंधकार छाता जा रहा था। चारों व्यक्ति चल पड़े। सेठ जी ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश और सरोज को कोठी पर छोड़ते हुए स्टेज के विषय में विस्तारपूर्वक बात करने के लिए दूसरे दिन का समय देकर विदा हुए।

: ३१ :

मंत्री संकटानंद जी की चर्चा आजकल दिल्ली के बच्चे-बच्चे की ज़बान पर थी। अमीर, गरीब, बूढ़ा, बच्चा, हिंदू, मुसलमान, सिख-ईसाई, पारसी कोई भी ऐसा नहीं था जिसने उनका नाम न सुना हो।

जिन दिनों स्वामी ज्ञानानंद जेल में थे उन दिनों मंत्री संकटानंद ने मूलचंद जी और सावित्री देवी की अध्यक्षता में एक ऐसी मंडली तय्यार की थी जो किसी आंदोलन को सफल बनाने के लिए जुलूसों में नारे लगाने और प्रचार करने में दक्ष हो। कुछ दिन तक इस मंडली ने किराये पर काम किया और अच्छे पैसे बनाये। जुलूस कोई धार्मिक हो या सामाजिक, राजनीतिक हो या मज़दूरों की हड़ताल का सभी में ये लोग बुलाये जाते थे और संध्या को निश्चित रकम लेकर मंत्री जी के पास लौट आते थे।

स्वामी ज्ञानानंद जब जेल से छूट कर आये तो इस मंडली ने शहर में तहलका मचा दिया। परंतु मंत्री जी की विचारधारा बदलने पर यह मंडली भी उनके साथ बदल गई। अब यह मंडली एक व्यवसायी मंडली न रह कर लीडरी का एक छोटा-मोटा रूप बन गई थी। पूर्व की भांति आजकल मंत्री संकटानंद इस मंडली की आय पर निर्भर नहीं रहे। यह मंडली इस समय उनकी ख्याति का साधन मात्र थी।

सेठ गूदड़मल को बेला की झलक दिखाकर मंत्री जी ने जो दस लाख रुपये झटके उन्होंने मंत्री जी की योग्यता को चार चांद लगा दिये।

मंत्री जी बेला को अपने खेल का साधन समझते थे। उनके हृदय में बेला के लिये वह स्थान नहीं था जो सरोज प्राप्त कर चुकी थी। आज तक मंत्री जी सरोज के सम्मुख अपने प्रेम का प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं कर सके, उसका उनकी कुरूपता से बहुत कम संबंध था। मंत्री जी अपने को अष्टावक्र का नाती मानते थे और सुन्दर न होना उनकी कोई कमी नहीं थी। आदमी के गुणों की परीक्षा होती है, चाम परखने वाले को वह चमार कहते थे।

जो बात उन्हें खटकती थी वह थी उनकी आर्थिक स्थिति। उन्होंने सरोज

को दिल्ली और बाहर के रईसों से मोटी आर्थिक आय कराई थी। परन्तु इससे सरोज मंत्री जी को एक सफल दलाल मात्र समझ सकी।

परन्तु अब मंत्री संकटानंद दलाल नहीं थे। वह थे संसद के सदस्यों के भाग्य-निर्माता। ठाकुर राजबहादुरसिंह जैसे ख्यातिप्राप्त पुराने कांग्रेसी उनके संकेतों पर नाचते थे। सेठ गूदड़मल जैसे धनी व्यक्तियों को मंत्री जी से भेंट करने के लिए विजिटिंग कार्ड भेजना होता था। आचार्य किशनचंद को कल भेंट करने के लिए कोठी के बाहर वाले बरांडे में एक घंटे बेंत की कुर्सी पर बैठना पड़ा। परन्तु साथ ही दिल्ली का प्रत्येक गरीब आदमी उनके पास बिना रोक-टोक चौबीस घंटे जाकर अपनी राम कहानी सुना सकता था।

मंत्री संकटानन्द ने बारह खम्बा रोड पर सरोज की कोठी के ठीक सामने वाली कोठी को खरीद लिया। यह कोठी अपनी शान की निराली ही कोठी थी जिसकी शोभा सरोज की कोठी से कई गुनी थी। कोठी के सामने संगमरमर के चार फव्वारे थे और उनके चारों ओर छोटे-छोटे तालाब बने हुए थे। एक बहुत सुन्दर संगेमूसा के स्वच्छ चबूतरे पर यह पूरी कोठी बनी हुई थी।

कोठी खरीदने की कथा भी विचित्र है। कोठी का मालिक एक नवयुवक था जिसके पिता का स्वर्गवास हुए एक महीना हुआ होगा।

एक दिन क्वीन्सवे काफी हाउस में उसको मंत्री जी से भेंट हो गई। मंत्री जी और बेला एक मेज पर बैठे कॉफी पी रहे थे इसी समय यह महाशय गर्मी में पसीने से तरबतर बाहर से आये और पंखे वाली मेज की खोज में एक कोने से दूसरे कोने तक चले गये, परन्तु उन्हें उनका इच्छित स्थान न मिल सका। अन्त में परेशान होकर वह बेला की मेज के पास खड़े होकर रूमाल से पसीना पोंछते हुए ऊपर के पंखे की हवा खाने लगे।

बेला उनके नेत्रों का आकर्षण बन चुकी थी और मंत्री जी की बिल्ली जैसी आंखों ने इस रहस्य को समझने में देर न की। बेला भी अब मंत्री जी के संकेतों को आंखों ही आंखों में परखने लगी थी। नवयुवक से मधुर वाणी में बोली, "आपको गर्मी लग रही है। आप इसी मेज पर बैठ सकते हैं।"

"शुक्रिया!" कह कर वह नवयुवक वहीं पर बैठ गया। नवयुवक को क्या पता था कि उसका यहां पर बैठना उसके जीवन की वह महान क्रान्ति बन जायगा कि पांच ही दिन में उसे बरेली के पागलखाने की सैर करनी होगी

और मंत्री संकटानन्द जी उसकी कोठी के स्वामी बन कर बैठ जायेंगे ।

कांग्रेस के सर्किल में भी मंत्री संकटानन्द जी पुजने लगे । शहर के बड़े-बड़े मामले उनकी कोठी पर आते और मंत्री जी उन पर बड़े ध्यान से विचार करते ।

संध्या समय मंत्री जी की कोठी के सामने वाले लॉन में कुर्सियां बिछ जाती थीं और मंत्री जी का दरबार लगता था ।

अब मंत्री जी किसी की कोठी पर नहीं जाते । जिसे उनसे मिलना होता था वह वहीं आता था । बेला इसे अपना घर समझती थी । ठाकुर राजबहादुर को यह बात धीरे-धीरे खटकने लगी ।

सेठ गूदड़मल से मिला हुआ दस लाख रुपया मंत्री जी इस प्रकार चटाल गये कि मानों कुछ हुआ ही नहीं । पत्र निकलने वाला था ठाकुर साहब को आने वाले चुनाव में विजयी बनाने के लिए उसका अब कहीं पर कुछ नाम ही नहीं ।

मंत्री जी हो मंत्री जी चारों ओर शहर में हो रहा था और मूलचंद जी तथा सावित्री देवी की टोली ने तो कमाल ही कर दिया । मंत्री संकटानन्द के नाम के गान शहर में गाये जानें लगे । सत्ताइस नम्बर की घड़ी वाले जिस तरह टोली बनाकर विज्ञापन करते हैं उसी तरह मंत्री संकटानन्द के नाम को भी दिल्ली की जनता के मस्तिष्क पर स्थापित करने की मूलचन्द जी और सावित्री देवी ने शपथ ली थी ।

"कैसी धूम-धाम है आजकल बेला ?" मुस्कुराते हुए मंत्री जी ने बेला का हाथ अपने हाथ में लेकर जरा दबाते हुए पूछा ।

"बड़े-बड़े लीडरों का रंग फीका कर दिया आपने मंत्री जी !" श्रद्धा भाव से बेला सकुचाते हुए बोली ।

दोनों कोठी के सामने वाले लॉन में पास-पास कुर्सियों पर बैठे थे । बेला आज बहुत प्रसन्न थी और मंत्री जी भी, क्योंकि इस कोठी के विषय में जो अन्तिम आपत्ति आने की उनके सामने आशंका थी वह भी आज टल चुकी थी ।

"मैंने फीका कर दिया पगली ! ऐसी बातें कहेगी ! यह सब तेरा ही प्रताप है ।" नाक के नथनों को फुलाते हुए सीने में उभार लाकर मंत्री जी बोले, "तू मेरी शक्ति है बेला ! तेरे ही बल पर मैंने इतना बड़ा बीड़ा उठाया है । मैं तुझे आकाश में चमकने वाले चन्द्रमा के समान देखना चाहता हूं । एक दिन वह

आयेगा जब संसार तेरी ओर देखेगा और तू संसार को शीतलता प्रदान करेगी।

विश्व का जीवन ज्वाला-ग्रस्त होता जा रहा है बेला! उसे एक ऐसी देवि की आवश्यकता है कि जो उस ज्वाला को चंद्रिका की शीतलता प्रदान कर सके। मैंने तेरे अन्दर उस आलौकिक कांति की झलक देखी है बेला।"

कह कर मंत्री जी गम्भीर हो गये। उनके नेत्र आकाश पर लगे हुए थे। मानों उनसे स्वप्न का स्पष्ट चित्र उन्हें आकाश पर दिखाई दे रहा था।

बेला अतल पर उठ गई। उसकी विचार-शक्ति नष्ट हो गई। भावनाओं के तूफान में कल्पना की नौका लेकर उसने तैरना प्रारम्भ कर दिया। कल्पना का संसार इतना रंगीन था कि वास्तविक जगत उसकी दृष्टि से ओझल हो गया। बेला के हृदय से उमंगों की एक ऐसी लहर उठी कि जिसकी साकार प्रतिमा नेत्रों में डोरे बनकर खिच गई। वह मूक थी, एक शब्द भी न बोल सकी।

मंत्री जी अवसर देख कर खड़े हो गये और बेला के दोनों कंधों को पकड़ कर झकझोरते हुए आंखों में आँखें डालकर बोले, "मेरा मनोरथ पूर्ण कर सकोगी न बेला? तुम्हारे ही लिए मैं यह सब कुछ कर रहा हूं।"

बेला ने अपने कृतज्ञ नेत्र मंत्री जी के नेत्रों में डाल दिये। फिर नेत्रों की भाषा में कहा, "आप विश्वास रखें मंत्री जी! बेला अपनी करनी में कुछ उठा नहीं रखेगी। वह आपकी दासी है। छाया के समान आपका अनुसरण करेगी।"

इसी समय ठाकुर साहब की कार ने कोठी के द्वार पर हार्न दिया और मंत्री जी बेला का हाथ छोड़कर सचेत होते हुए जरा दूर पर घूमने लगे।

बेला मुख पर मुस्कान लिए कुर्सी पर बैठी इठलाती हुई कार की तरफ देखने लगी।

कार पोर्टिगो में आकर रुकी और ठाकुर साहब अपनी रेशमी शेरवानी को सम्भालते हुए उसमें से उतरकर लॉन की तरफ बढ़े।

मंत्री जी नीचा मुंह किए इस प्रकार घूम रहे थे कि मानों उन्हें पता ही नहीं कि क्या हो गया! ठाकुर साहब के मन में मंत्री जी को अपनी इस प्रकार उपेक्षा करते देखकर आग लग गई, परन्तु मुंह से वह एक शब्द भी न बोले और ऊपर से मुस्कुराकर बोले, "आज किस चिन्ता में निमग्न हैं मंत्री जी?"

"चिंता की न पूछिये ठाकुर साहब! जो आदमी जितना बड़ा है उसके

उत्तरदायित्व भी उतने ही बड़े हैं। मुझे देखिये कि आधा घंटा यहां बैठे हो गया और मंत्री जी ने मेरी ओर ध्यान ही नहीं दिया" बेला बोली।

"अब क्यों ध्यान देने लगे !" धीमे स्वर में ठाकुर साहब बेला को गलत समझते हुए बोले।

ठाकुर साहब ने सोचा शायद बेला भी मंत्री जी के व्यवहार से उतनी ही दुखी थी जितने वह थे ! ये शब्द ठाकुर साहब ने इस प्रकार निश्वास खींच कर कहे कि उनके हृदय की वेदना उभर कर उनके मुख-मण्डल पर नाच उठी। मन में सोचा कि बेला के आकर्षण पर सेठ गूदड़मल ने दस लाख रुपया दिया वरना इस मंत्री के बच्चे को तो कोई डेढ़ टका भी न देता।

रुपया मेरी आड़ लेकर लिया और मौका पाकर हम दोनों का ही पत्ता काट दिया। पूरी रकम स्वयं डकार गया। आस्तीन का सांप निकला। परन्तु मेरा भी नाम ठाकुर राजबहादुर सिंह नहीं जो इसके फन को मैंने न कुचला।

मन में इस प्रकार विचार कर ऊपर से हंसते हुए ठाकुर साहब सीधे मंत्री जी के पास गये और उनका हाथ पकड़ कर बोले, "मैंने कहा किस चिंता में घुल रहे हो मंत्री जी ? इस तरह तो आप अपना स्वास्थ्य खराब कर लेंगे। नई लीडरी आपको क्या मिल गई है, आपने तो यार लोगों से मिलना-जुलना भी छोड़ दिया।"

"क्षमा करना ठाकुर साहब ! शायद मेरे आज के वाक्य आपको कटु लगें, परन्तु मैं जनता का लीडर बनकर जनता को धोखा नहीं दे सकता ! कांग्रेस ने जनता को धोखा दिया है और जितना मैं इस समस्या पर विचार करता हूं उतना मेरा मन कांग्रेस से दूर हटता जाता है। आप जानते ही हैं कि मैं कितना कांग्रेस का पक्षपाती था। परन्तु आजकल मेरे मन की स्थिति इसके प्रतिकूल है। कांग्रेस के कार्यक्रम में मुझे स्वार्थपरता की बू आती है।" कहकर मंत्री जी गंभीर मुखमुद्रा बनाकर घूमने लगे।

ठाकुर साहब ने मन में कहा, 'देखो कैसा धूर्त्त है यह मंत्री का बच्चा ! दाई से पेट छिपाने का प्रयत्न कर रहा है। कैसा त्यागी बन रहा है आज, वाह-वाह कमाल कर दिया। यह तो अब मुझ से बातें करना भी पसन्द नहीं करता।

ठाकुर साहब का कलेजा छलनी हो गया और मन में ऐसी द्वेष की ज्वाला

सुलगी कि मंत्री जी को जला कर भस्म कर डालें।

ठाकुर साहब ने किसी प्रकार अपने को संभाला और गंभीर मुद्रा में कुर्सी पर बैठ गये। बेला उन्हें चिंतित देखकर बोली, "ठाकुर साहब आप और चिंतित ! चिंता तो हम जैसे अशक्त व्यक्तियों को सताती है। आप जैसे सशक्त व्यक्ति भी कभी चिंतित हो सकते हैं यह मैं आज प्रथम बार देख रही हूं।"

"तुम और अशक्त" ठाकुर साहब बोले, "गजब कर दिया तुमने बेला ! तुम्हारे अंदर वह शक्ति वर्तमान है जिसका अनुभव तुम स्वयं नहीं कर सकी। यह ठाट-बाट, यह कोठी, यह कार, मंत्री जी, सब चहल-पहल जानती हो किसके दम पर है ?"

'किसके दम पर है ठाकुर साहब ?" मुस्कराकर बेला ने पूछा।

"बेला के दम पर।" ठाकुर साहब बोले।

मंत्री जी ने कनखियों से झांक कर ठाकुर साहब को बेला से घुल-मिल कर बातें करते सुना तो यह उनके लिए असहनीय हो उठा। वह एक दम तिलमिला कर पास आते हुए बोले, "बेला ! मैं तो भूल ही गया था। कल सब्जीमंडी के उस कुंजड़े पर पुलिस ने जो अत्याचार किया, उसकी पूरी जांच करनी है। इसी समय वहां के आस-पास के व्यक्तियों को हमने बुलाया है ?"

"जी हां इसी समय।" आदर-भाव से बेला खड़ी होती हुई बोली।

"तो फिर शीघ्रता करो।" और फिर ठाकुर साहब की ओर मुंह करके दांत निकालते हुए हाथ जोड़ कर मंत्री जी बोले, "क्षमा करना ठाकुर साहब इस समय। कल किसी समय भेंट होगी। जनता का कार्य है और अब मैंने अपना आगामी जीवन जनता के ही चरणों में समर्पित कर दिया है।"

"बहुत खूब, बहुत खूब !" ठाकुर साहब अन्दर से आग बबूला होकर बोले। नमस्कार का जवाब नमस्कार से देकर अपनी कार की तरफ चल दिए। क्रोध के कारण उन्होंने एक बार भी उधर मुंह करके नहीं देखा।

मंत्री जी की ब्यूक गाड़ी भी सामने आ गई और बेला को साथ लेकर मंत्री जी उसमें बैठकर सब्जी मंडी के लिए रवाना हो गये।

"ठाकुर साहब भी पूरे काठ के उल्लू हैं मंत्री जी !" चलती हुई कार में मुस्कराकर बेला बोली और मंत्री जी बेला के वाक्य का कोई उत्तर न देकर केवल मुस्कुरा भर दिये।

: ३२ :

स्वामी ज्ञानानंद जब एकांत में अपनी कुटिया के बगीचे में नीबू के पेड़ के पास अरंड के वृक्ष की कटी-फटी छाया में आसन डाल कर बैठते थे तो घंटों यही सोचते रहते थे कि आखिर किस प्रकार मंत्री संकटानन्द उन्हें मूर्ख बना कर दिल्ली का सरताज बन बैठा।

मंत्री संकटानंद की जब स्वामी ज्ञानानंद जवाहरलाल, चर्चिल, मुसोलिनी, हिटलर और स्टालिन जैसे राजनीतिज्ञों से तुलना करते थे तो उन्हें सर्वदा मंत्री जी का ही पलड़ा झुका प्रतीत होता था।

स्वामी जी साहसी और कर्मठ व्यक्ति थे। जो धारणा वह मन में बना लेते थे उसकी पूर्ति में जी जान की बाजी लगा देते थे।

मंत्री संकटानंद की राजनीति का अस्त्र बेला थी, यह रहस्य स्वामी जी पर पूर्णरूप से विदित हो चुका है। स्वामी जी नारी से घृणा अवश्य करते थे परंतु किसी सिद्धान्त की सिद्धि के लिए वह नारी को अपना भी सकते हैं। स्वामी ज्ञानानंद ने वह दिन भी देखा था जब बेला उनकी सेवा में अपनी आंखे बिछा दिया करती थी और स्वामी जी कभी एक हल्की सी कृपाकोर भी उस पर नहीं डालते थे। वह कृपाकोर पाने के लिए तरसती रह जाती थी और स्वामी जी कमंडल हाथ में ले अपनी गोल घुटी हुई खोपड़ी पर हाथ फेरते हुए भोजन करके वहां से मस्त हाथी की तरह झूमते हुए चल देते थे।

स्वामी जी ने आज दृढ संकल्प किया कि वह बेला को मंत्री जी के हाथों से छुड़ाकर रहेंगे। वह बेला को व्यभिचार के पीछे दौड़ता हुआ नहीं देख सकते। इसे वह नारी की प्रगति न कह कर पतन कहते थे।

स्वामी ज्ञानानंद जी नारी से क्यों घृणा करते थे वह रहस्य संसार पर विदित था। स्वामी ज्ञानानंद जी ने कठोर तपस्या की थी, साधना की थी, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया था, यह सब सच था परंतु नारी के प्रति उनके हृदय में इतना बड़ा आकर्षण था कि नारी के सम्मुख आते ही उनका हृदय पिघलकर मोम की तरह बह निकलता था। स्वामी ज्ञानानंद जी ने अपनी

चरणरज बांटने का कार्य ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को सौंपा था, यह सब किस लिए ? केवल इसीलिए कि वह अपने को नारी के संपर्क से दूर रखना चाहते थे। स्वामी ज्ञानानंद गत कितने वर्ष से इस संघर्ष में सफल रहे परंतु अब समस्या विकट थी सामने। अब उन्हे बेला के सीधे सम्पर्क में आना था और बिना बेला के संपर्क में आये वह कभी भी उसे मंत्री जैसे धूर्त्त के पंजे से मुक्त नही करा सकते थे।

स्वामी जी इन्हीं विचारों में उलझे थे कि सामने से सेठ गूदड़मल आते दिखाई दिये। सेठ जी महीनों बाद पधारे थे। स्वामी जी भी अपनी आन के इतने पक्के थे कि चाहे भूखों मर जायें परन्तु कभी किसी के द्वार पर जाना उन्होंने नहीं सीखा था। वह अपने मन्दिर के पुजारी बनकर वहीं रमना जानते थे। यह भक्त की श्रद्धा पर निर्भर था कि वह कब उनकी खबर ले।

सेठ जी को आता देखकर स्वामी जी और भी गंभीर हो गये। सेठ जी ने पास आकर पूर्व की भांति स्वामी जी के चरण छुए और स्वामी जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया। सेठ जी सामने पड़ी चटाई पर आलथी-पालथी मार कर बैठ गये।

"कहिये सेठ जी ! आज कैसे भूल पड़े ?" कटु व्यंग्य के साथ स्वामी जी ने कहा।

"ऐसे व्यंग्य तीर न छोड़िये स्वामी जी ! आपके पास भक्ति-भाव से आते हैं और पान फूल जो कुछ हमारी शक्ति में होता है चढ़ा जाते हैं। आप ही कहिये कि आपके यहां गालियां खाने को कौन आये ?" नमक मिर्च लगाकर सेठ जी बोले।

"गालियां खाने के लिये !" आश्चर्य से स्वामीजी ने पूछा। "तुम्हें गालियां किसने दी ?"

"आपकें पत्र 'सत्य मार्ग' ने। आप ही कहिये कि एक ओर तो हम इस पत्र की स्थापना के लिये अपनी खून-पसीने की गाढ़ी कमाई का पैसा लगायें और दूसरी ओर इसके द्वारा गालियां खायें। ये दोनों बातें किस प्रकार सम्भव हो सकती हैं ?" दीन भाव से गिड़गिड़ाते हुए सेठ जी बोले।

स्वामी जी समझ गये कि अवश्य यह दुर्घटना उनके जेल जाने पर घटी होगी और फिर मंत्री के बच्चे पर दांत किटकिटाकर बोले, "सेठ जी ! ऐसा

अवश्य हुआ होगा। यह सब उसी पाजी मंत्री के बच्चे की करतूत थी। उस नालायक ने मुझे कहीं का नहीं छोड़ा। मैं देहली में आकर लुट गया सेठ जी! लुट गया। आप सच जानिए कि मेरा सर्वस्व नष्ट हो गया। मेरी साधना जाती रही, मेरी विद्या कुंठित हो गई, मेरी बुद्धि में कुटिलता को स्थान मिला, मेरा शिष्य मुझसे छिन गया, मैं लुट गया सेठ जी, लुट गया।" भावुकता में बहकर स्वामी ज्ञानानंद बोले।

सेठ गूदड़मल जी पहले ही मंत्री जी से फुंके बैठे थे। वह धूर्त्त का बच्चा दस लाख रुपये यों ही एक झलक में घसीट कर ले गया और बेला की फिर कभी झलक नहीं दिखाई। कितने वायदे किये, क्या कुछ नहीं कहा? कहां तो कहता था कि यह सब उनके लिए ही होगा। ठाकुर राजबहादुर का तो केवल नाम मात्र ही होगा और पत्र होगा सेठ गूदड़मल का। बेला उसकी संचालिका होगी और गूदड़मल जी उसके सर्वेसर्वा। परन्तु इस धूर्त्त ने न तो सेठ का कहीं नाम आने दिया और न ठाकुर राजबहादुर सिंह का रुपया सब चोर बाज़ारी का था बही खाते का नहीं था।

सेठ जी बोले, "चिंता न कीजिए स्वामी जी! मंत्री संकटानन्द धूर्त्त निकला परन्तु आपको भी उसे यों ही नहीं छोड़ देना चाहिए। आपका ही बल पाकर वह इतना ऊपर उठ सका है, वरना जिस दिन आपको उसने बनारस से 'हिन्दू कोड बिल विरोधक मंडल' की सभा में व्याख्यान देने के लिए बुलाया था उस दिन उसके पास गैस के हंडे और दरियों के किराये का पैसा चुकता करने का भी प्रबन्ध नहीं था। आप उसे दूसरे दिन सौ रुपये का नीला नोट न देते तो नई सड़क का गैस और शामियाने वाला सरदार उसे बीच सड़क पर गिरेबां में हाथ डालकर रोक लेता और किनारी बाजार का बनारसी पान वाला उसकी वह मरम्मत करता कि छटी तक का खाया पीया याद आ जाता।"

स्वामी जी के हृदय ने आज संकल्प किया कि वह मंत्री संकटानन्द को उसकी धूर्त्तता का मज़ा चखा कर ही रहेंगे। भगवान ने साथ दिया तो वह उसकी लीडरी खाक में मिला कर छोड़ेंगे और बेला को उस धूर्त्त के पंजे से छुड़ाने में कोई कसर नहीं उठा रखेंगे।

बेला के जीवन पर आधुनिक जीवन की चमकदार रोशनी का प्रभाव

पड़ा है और उसी की चकाचौंध में वह कर्त्तव्य को भूल गई है। वह हिन्दू कोड बिल की समर्थक बन बैठी। मैं उसे जीवन की वास्तविक शांति का रास्ता दिखाऊंगा।

स्वामी जी सेठ जी से बोले, "सेठ गूदड़मल जी आपके अन्दर मुझे धर्मांकुर दिखाई देते हैं और यही कारण है कि तुम में मेरा प्रेमभाव बना हुआ है। आज धर्म संकट में है। हिंदुत्व पर कांग्रेस ने कुठाराघात किया है। भारत का विभाजन करा दिया। पाकिस्तान बन गया। वहां से हिन्दुओं को गिन-गिन कर निकाला गया।

संसार में भी धर्म का लोप हो रहा है। मानव धर्म विमुख होकर ईश्वर में से आस्था खोता जा रहा है। साम्यवाद का भयंकर तूफान रूस से चल कर चीन पर छा गया। तिब्बत, ब्रह्मा, इंडोनेशिया और योरोप के अनेक देशों की सुख तथा शांति हड़प ली। उसकी पहुंच से भारत भी अब दूर नहीं। हमें सचेत होना है सेठ जी!"

"हमें उस भयंकर तूफान से बचना है। केवल धर्म ही हमें उससे बचा सकता है।" सेठ जी ने कहा।

"कांग्रेस में आज बेपेंदी के लोटों का बोल-बाला है। मंत्री संकटानन्द जैसे धूर्त्त जो कल तक 'हिंदू कोड बिल विरोधक मंडल' के मंत्री थे आज जनता के सेवक हैं। कार में बैठ कर दुखियों की पुकार सुनने जाते हैं। कोठियों में रह कर झोपड़ियों में रहने वाले अनाथों का कष्ट निवारण करते हैं। कैसी विडम्बना है! क्यों नहीं ऐसे धूर्त्तों के लिए पृथ्वी फट जाती और ये लोग उसमें समा जाते?"

स्वामी जी के मस्तक पर सलवटें पड़ गईं और क्रोध से उनका मुख अंगारे के समान लाल हो गया।

"पृथ्वी फटेगी स्वामी जी! अवश्य फटेगी और ये धूर्त्त उसमें समायेंगे। धर्म की अवश्य विजय होगी और अधर्मी लोग रसातल को जायेंगे। परन्तु यह सब करने के लिए आपको बेला पर अधिकार करना होगा। आज धर्म की विजय के लिए भी राजनीति से काम लेना होगा।" सेठ जी बोले।

"अवश्य लेना होगा।" स्वामी जी बोले। "साम, दाम, दण्ड, भेद--मैं सभी का प्रयोग करूंगा। मैंने सभी शास्त्रों का अध्ययन किया है। देखता हूं

कि धूर्त्त संकटानन्द मुझसे बचकर कहां निकलता है ?" स्वामी जी कड़ककर बोले।

"आप से बचकर ?" सेठ जी मुस्कुराते हुए बोले, "उस बेचारे की क्या सामर्थ्य है कि वह आपसे बच कर निकल सके ! एक दिन उसे आपके चरणों पर झुकना होगा।"

सेठ जी नमस्कार करके खड़े होते हुए आज्ञा लेकर वहां से चल दिए। कार दूर सड़क पर खड़ी थी। उसमें आचार्य किशनचंद जी बैठे थे। सेठ जी के पहुंचने पर बोले, "आने में देर होते देखकर ही हम समझ गए थे कि कार्य-सिद्धि की पूर्ण आशा है।"

"यह आपने क्या बात कही भला शास्त्री जी ? सेठ गूदड़मल किसी कार्य के लिए जाए और कार्य सिद्ध न हो। मैंने आज वह तीर चलाया है कि ठाकुर साहब के होश ठिकाने कर देगा।" बैठ कर अपना बंद गले का कोट ठीक करके सिर की पगड़ी संभालते हुए सेठ जी बोले।

"परन्तु आपने यह बात नहीं बताई कि स्वामी ज्ञानानन्द के हाथ में वह कौनसी जड़ी है जिससे वह ठाकुर साहब को ठीक बना सकते हैं।" किशन-चंद जी बोले।

"आप जानते हैं कि आजकल ठाकुर साहब बेला नामक किसी स्त्री पर लट्टू हैं।" सेठ जी बोले।

"हां हां ! सुना तो है सेठ जी ! शहर में बड़ी चर्चा है बेला की।" तन्मयता के साथ आचार्य किशनचंद बोले।

"वही बेला स्वामी ज्ञानानन्द को पिता-तुल्य मानती है और स्वामी ज्ञाना-नन्द जी मुझे पुत्र तुल्य मानते हैं।" कह कर सेठ जी मटक कर मुस्कुरा दिये।

"यह बात है !" हृदय में आशा और मुख पर मुस्कुराहट लेकर आचार्य किशनचन्द बोले, "सेठ जी ! आप भी हैं बहुत गहरे पानी में। आज आपको मान गये हम।"

कार फर-फर उड़ी जा रही थी। आचार्य किशनचंद समझ गये कि बस काम हो ही गया। बेला के हाथ में आ जाने पर ठाकुर को वह उल्लू बनाया जायेगा कि वह जीवन भर याद रखे। कल उसने संसद में मेरा अपमान किया और मूंछों पर ताव देता हुआ इस तरह चला गया कि मानो कुछ हुआ

ही नहीं। आगामी चुनाव में ऐसे धूर्तों को काग्रेस का टिकट नहीं दिया जायेगा। कांग्रेस पर ये लोग कलंक हैं। दिन रात सुन्दर स्त्रियों के पीछे घूमना और संसद की मैम्बरी के रौब में युवतियों को फुसलाना भर इन लोगों का काम है। लीडरी की आड़ में ये लोग अपना उल्लू सीधा करते हैं। बड़े बने हैं कला के पुजारी। इसी प्रकार की बातें आचार्य किशनचंद के मस्तिष्क में आई।

गाड़ी सेठ जो की कोठी पर रुकी और दोनों उतर कर बैठक में चले गये। सेठ जी यों पहनावे में मारवाड़ी थे परन्तु उनकी कोठी का ठाठ किसी भी विलायती साहब से कम नहीं था। बैठक मे संसार भर के महापुरुषों के चित्र लगे हुए थे।

सेठ जो के बैठने की मखमली गद्दी थी और उसके चारों ओर सोफा सैट लगे थे। सेठ जी अपनी गद्दी पर बैठ गये और आचार्य किशनचंद जी भी उन्ही के पास बैठ गये।

"क्या आप अपने कार्य में सफल हो सकेंगे ?" आचार्य किशनचंद ने पूछा।

"अब भी कोई संदेह की बात है ? स्वामी जी ने पूरा आश्वासन दिया है।" निश्चयपूर्वक बोले। फिर विषय बदलते हुए कहा, "स्टेज वाली योजना पर आपने क्या विचार किया ?"

"वह आप निश्चित समझें, परंतु सरकार से रुपया केवल ५० लाख ही मिल सकेगा। हम जाने कलाकारों को उन्नति के शिखर पर देखना चाहते हैं। आप मेरी ओर से सरोज को आश्वासन दिला दें कि सरकार उनका पूरा ध्यान रखेगी और ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश से हमें बहुत आशाएं हैं।"

आचार्य किशनचंद कह रहे थे और सेठ जी ने पचास लाख रुपये का पूरा एस्टीमेट तय्यार कर लिया।

सेठ जी यही गुनताला लगा रहे थे कि आचार्य किशनचंद बातों का रुख बदलते हुए बोले, "सेठ जी ! माया आनी-जानी छाया है जो करना है कर गुजरिये। आने वाले चुनाव में भगवान् जाने क्या होगा ? मैं एक कोठी खरीदकर बाल-बच्चों की ओर से निश्चित हो जाना चाहता हूं। फिर निश्चितता पूर्वक राजनीति में भाग ले सकूंगा। चुनाव कमेटी अपने हाथ की होगी। आप जैसे साथी साथ रहने से रुपये की शक्ति भी कम होने वाली

नहीं।" विश्वास के साथ आचार्य किशनचंद बोले।

यह सुनकर सेठ जी ने एक लम्बी श्वांस ली और सोचा कि अब किशनचंद उतना सीधा नहीं रह गया है। इस बार यह मलाई मेरे हाथ नही पड़ने देगा। कोठी की बात इसने पहले से ही खड़ी कर दी और यह भी हो सकता है कि यह स्टेज बनाने का आर्डर मिलने से पहले यह कोठी ले बैठे। लेकिन तेल तो तिलों में से ही निकलेगा।

सेठ जी बोले "आचार्य जी! आपने बहुत सुन्दर विचार किया। मैं औरंगज़ेब रोड पर ठाकुर साहब के सामने वाली कोठी आपके नाम किये देता हूं। वह कोठी उस रोड पर सबसे सुन्दर है। आपको उस कोठी में देखकर ठाकुर साहब के होश उड़ जायेंगे।"

आचार्य किशनचंद के नेत्र चमक उठे यह सुनकर। सेठ गूदड़मल मे उन्होंने सच्चा मित्र झाँकता पाया। उन्हे कृष्ण-सुदामा की कथा याद आ गई। सेठ को उन्होंने कलयुगी-कृष्ण के रूप में देखा। फिर धीमे स्वर मे बोले "ये क्या उपहास की सी बातें करते हो सेठ जी! वह कोठी आपकी तो है नही। उसे आप किस तरह मेरे नाम कर सकेंगे? वह तो किसी स्टेट के राजा की कोठी है।"

"फिर क्या हुआ? आजकल राजे-महाराजों की दशा खराब है। इन लोगों ने जीवन भर जनता का खून चूसा है! कांग्रेस सरकार ने इनका छटी तक का खाया-पिया बाहर निकाल लिया। इन्हें झुकना पड़ता है हम जैसे कर्मठ व्यक्तियों के सामने। भविष्य में कोई भी व्यक्ति बिना कुछ किए पेट नही भर सकता। वह कोठी मेरे पास गिरवी रखी है और एक लाख रुपयों में वह राजकुमार बेचने को तय्यार है। चल कर कोठी देख ले और आप को पसंद हो तो मै कल मामला तय कर दूं।" गंभीरतापूर्वक सेठ जी ने कहा।

"परंतु वह राजकुमार बेचना क्यों चाहता है?" शास्त्री जी ने पूछा।

"यह पूछकर आप क्या करेंगे? उसे रुपये की जरूरत है। मुझसे तीन लाख रुपया लेकर फिल्म-कम्पनी खोली थी। तीन लाख खर्च हो गये और फिल्म बनकर पूरी नही हुई। फिल्म डाइरेक्टर कहता है कि अगर एक लाख का प्रबंध और हो जाय तो पिक्चर पूरी हो सकती है। अब राजकुमार अपने तीन लाख रुपये उभारने के लिए एक लाख और लगाना चाहता है।" सेठ जी ने मुस्कुराकर कहा।

"ठीक है। राजकुमार ने सोचा होगा कि फिल्म में एक के चार तो बन ही जाते हैं और अय्याशी मुफ्त में करने को मिलती है।" आचार्य ने मुस्कुरा कर कहा।

सेठ जी हंसकर बोले, "यही बात है।"

आचार्य किशनचंद ने कोठी पसंद करने का भार सेठ जी पर छोड़ दिया। राजकुमार के पिता के सेठ जी पर बड़े-बड़े एहसान थे। सेठ जी ने यह दौलत बड़े राजा साहब की बदौलत कमाई थी। इसी लिए उनके लड़के को एक लाख रुपया देकर मदद करना वह अपना कर्तव्य समझते थे।

: ३३ :

सरोज का जीवन सादगी और सरलता की ओर बढ़ता जा रहा था। जीवन की चहल-पहल और रंगीनियों की ओर उसका कोई विशेष आकर्षण नहीं रह गया था। बरसात के दशहरे पर ठेलों में बैठी ग्रामीण स्त्रियों के गानों में उसे आकर्षण प्रतीत होता था, परंतु रेडियो के संगीत और सिनेमा के ग्रामोफोन-रिकार्डों के प्रति उसकी अरुचि होती जा रही थी। कभी-कभी सरोज अपनी कोठी की चहार दीवारी के अन्दर अपने को बंदिनी समझने लगती थी। ब्रह्मचारी के साथ ने उसे आत्मविश्वास की शक्ति दी।

"यह सब मुझे फीका-फीका क्यों लगने लगा ब्रह्मचारी ?" संध्या समय सरोज ने पूछा।

"मानसिक कमजोरी के कारण।" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

सरोज न समझ सकी।

"तुम्हारे जीवन की उदासीनता का अनुभव मैं कई दिन से कर रहा हूं सरोज ! परंतु मैं चाहता था कि यह प्रश्न तुम्हारी ही ओर से ही मेरे सम्मुख आये। आज वह प्रश्न सम्मुख आ गया। अब मुझे कहने में संकोच नहीं कि अब मेरा यहां से प्रस्थान का समय आ गया।" ब्रह्मचारी ने स्वाभाविक सरलता-पूर्वक कहा।

"यह क्या कह रहे हो ब्रह्मचारी !" आश्चर्य-चकित होकर सरोज ने पूछा, "तुम्हारे जाने का समय आ गया ! परंतु कहां ? किस लिए ? क्यों ?"

"यह सब मैं कुछ नहीं जानता। मैं जीवन में किसी को उदासीन बनाने नहीं आया। मैंने तुम्हें सादगी का संदेश दिया, बनावट को तुम्हारे जीवन से निकालकर फेंक देना चाहा परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि तुम्हारा जीवन जीवन ही न रहे। मैं जीवन में जीवन का संदेश लेकर आया हूं। तुम्हारी उदासीनता ने मेरा संदेश ठुकरा दिया ?" ब्रह्मचारी ने सरोज की चिबुक पर हलकी सी उंगली लगाकर उसका मुंह ऊपर करते हुए कहा।

परन्तु सरोज के नेत्रों से तो टपाटप आंसुओं की झड़ी लग गई। ब्रह्मचारी

ने सरोज के दोनों हाथ पकड़ कर ऊपर उठाते हुए कहा, "क्षमा करना सरोज ! मैंने तुम्हारे सुकुमार हृदय को ठेस पहुंचाई।" और फिर हाथ पकड़कर सरोज को बगीचे में ले गया। दोनों जाकर एक गुलाब के पास खड़े हो गये और ब्रह्मचारी ने एक कली तोड़कर सरोज के बालों में इस प्रकार खोंस दी कि वह उसके मस्तक पर लुढ़क कर खिल उठी।

"तुम रूठ गईं सरोज !" भावुक हृदय से ब्रह्मचारी ने पूछा।

"ब्रह्मचारी से रूठ कर कोई क्या लेगा ? ब्रह्मचारी तो सभी को जीने का संदेश देने के लिए दुनिया में आया है।" सामने उड़ने वाले एक भौंरे की ओर संकेत करके सरोज ने कहा, "देखो यह भौंरा सब कलियों से कहता है खिलो और मुस्कुराओ।"

"यह बात नही है सरोज ! तुम मुझे ग़लत समझ रही हो। मैंने तुम्हें कागज की गुड़िया बनने से रोका, तो तुमने साधुनी बनने की ठान ली। मैंने तुमसे कब कहा कि तुम जीवन के विकसित यौवन को दबाकर नष्ट कर डालो। बनाव-शृंगार स्त्री की शोभा है और फिर तुम तो कलाकार हो। तुमने कला के लिये साधना की है।

अन्त में मैं इतना ही कहूंगा कि मैं तुम्हारी साधना को परिपक्व अवस्था में देखना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि उसमें बनावट का हल्कापन नष्ट होकर वास्तविकता का अमर संदेश मुखरित हो उठे।"

"और तुम ?" सरोज ने ब्रह्मचारी से पूछा।

"मैं भी अपने जीवन के अंतिम लक्ष्य का निर्णय कर चुका हूं सरोज ?"

"वह क्या ? क्या मैं जान सकती हूं कि तुम्हारा वह लक्ष्य·····कहकर सरोज की वाणी रुक गई।

"यह पूछने का प्रयत्न न करो सरोज ! आज इस प्रश्न को योंही रहने दो। परंतु तुम अपने विषय में मेरा लक्ष्य समझ गई होगी। यदि इस मार्ग को अपनाने में तुम्हें कोई आपत्ति न हो तुम अपना सकती हो। इसकी पूर्ति में मैं तुम्हें अपना भरसक सहयोग प्रदान करूंगा।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"वचन देते हो ?" आशा भरे नेत्रों से सरोज ने ब्रह्मचारी के मुख पर देखा और उत्तर की प्रतीक्षा में उसके हृदय की धड़कन बढ़ने लगी।

"वचन देता हूं" नेत्र बंद करके सरोज का हाथ अपने हाथ में लेते हुए ब्रह्मचारी ने कहा। सरोज का मुर्झाया हुआ चेहरा खिल उठा, उसका मन-मयूर नाच उठा।

सरोज के मन में न जाने क्या आया कि वह धीरे से अपना हाथ छुड़ाकर सामने पक्के फ़र्श पर इठलाकर नृत्य करती हुई एक मधुर संगीत के स्वरों में लीन हो गई है।

ब्रह्मचारी नेत्र बन्द किये उसी प्रकार खड़ा सुनता रहा।

इसके पश्चात दोनों सामने के तालाब पर जाकर बैठ गये। और दोनों ने अपने पैर तालाब के कमलों को एक ओर करके पानी में डाल दिये। सरोज और ब्रह्मचारी इसी प्रकार जीवन की मस्ती में बैठे आनंद की बहार ले रहे थे कि दरबान ने आकर कहा, "ठाकुर साहब आये हैं।"

"बैठक में बिठाओ। हम अभी आते है।" सरोज बोली।

"आजकल बेचारे ठाकुर साहब भी बहुत परेशान हैं।" ब्रह्मचारी ने मुस्कुराते हुए कहा।

"क्यों ?" आश्चर्य से सरोज ने पूछा।

"यह ठाकुर साहब स्व बतलायेंगे। मैं जो कुछ कह रहा हूं वह उनके हाव-भाव देख कर कह रहा हूं।"

सरोज ने नम्रतापूर्वक प्रणाम करते हुए कहा, "इतने दिन पश्चात् आज कैसे भटक पड़े इधर ?" हलका सा व्यंग्य का छींटा था सरोज के वाक्य में।

"इधर कुछ उलझनों मे फंस गया था सरोज! इसीसे नहीं आया। राजनीति का जीवन कांटों से भरा हुआ है। भारत स्वतन्त्र है, परन्तु स्वतन्त्र होने पर हम लोगों के उत्तरदायित्व और भी बढ़ गये हैं। परन्तु क्षमा करना, अब मुझे कहीं बाहर नहीं जाना है और आशा है कि मिलने में इतना विलम्ब नहीं होगा।" ठाकुर साहब बोले।

"राजनीति का मार्ग वास्तव में बड़ा पथरीला है। सम्भवतः आप किसी लोकहित के कार्य से बाहर गये होंगे। एक हम लोग हैं जो अपनी ही जिम्मेदारियों को ठीक तरह नहीं निभा पाते और एक आप हैं जिनके सिर पर दूसरों की ज़िम्मेदारियां भी लदी हैं।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा। ठाकुर साहब ने अपने दिल में समझा कि वह महान् हैं और भारत की रेलगाड़ी के पहिये

उन्हीं के धुरे पर चल रहे हैं, वरना कभी के जाम हो गये होते।

ब्रह्मचारी को पता था कि आजकल ठाकुर साहब मंत्री महोदय के चक्कर में हैं। वह बोले, "ठाकुर साहब ! बुरा न मानें तो एक बात कह डालूं।"

"आपके कहने का बुरा मानूंगा ? आपको मैं विद्वान समझता हूं और आपके लिये मेरे हृदय में श्रद्धा है। मैं कलाकार को भगवान का दूसरा रूप मानता हूं।" ठाकुर साहब ने कहा।

"आजकल तो मंत्री जी के साथ बहुत गहरी छन रही है। परन्तु इतना समझ लेना कि जिस प्रकार स्वामी ज्ञानानंद की नौका बीच मझधार में डूबी है, एक दिन वैसे ही आपकी भी डूबेगी।" ब्रह्मचारी ने कहा।

सरोज ब्रह्मचारी का वाक्य सुनकर दंग रह गई और साथ ही ठाकुर साहब भी। ठाकुर साहब के मन में मंत्रीजी के विरुद्ध जो गुब्बार भरा था वह बवंडर की तरह घुमड़कर उनके मस्तिष्क में छा गया और वह बोले, "एक दिन भुगतना है इस मंत्री के बच्चे को भी ब्रह्मचारी जी ! इस धूर्त ने विश्वासघात किया है मेरे साथ। मैं इसे रसातल में पहुंचाकर छोड़ूंगा।"

"ठाकुर साहब माथे पर हाथ रखकर कमरे में इधर उधर घूमने लगे।

ब्रह्मचारी धीरे-धीरे कनखियों से मुस्कुरा रहा था। सरोज असमंजस में थी। ब्रह्मचारी फिर कहने लगा "ठाकुर साहब तुमसे कोई बात छुपाना ठीक नहीं। हम आपको अपना समझते हैं। यदि हमें आप सब कुछ बतला डालें तो हमसे आपका कुछ अहित नहीं होगा।"

इतना कह कह ब्रह्मचारी मौन हो गया।

ब्रह्मचारी का अन्तिम वाक्य ठाकुर साहब के मर्मस्थल को छू गया।

ठाकुर साहब तिलमिला कर बोले, "सरोज ! तुमसे छुपाना ही क्या है ? मुझे इस मंत्री के बच्चे ने कहीं का भी नहीं छोड़ा।"

ठाकुर साहब ने बेला की समस्त कथा और फिर सेठ गूदड़मल से मिले दस लाख रुपये की कहानी सुनाकर अन्त में बताया कि उस पाजी मंत्री के बच्चे ने क दिन शराब के नशे में कचहरी लेजाकर ठाकुर साहब की कोठी भी बेला के नाम करादी। ठाकुर साहब की कोठी गई, वकील साहब की पत्नी गई और सेठ गूदड़मल के दस लाख रुपये गये इसके बदले में सबको मिला क्या, जीवन की वह जलन जिसे दिल में छिपाकर कनॉट प्लेस के होटलों में घमने के अति-

रिक्त और कुछ नहीं किया जा सकता।

ठाकुर साहब की विवशता और परेशानी सुनकर सरोज ठगी-सी रह गई और उसने भगवान् को लाख-लाख धन्यवाद दिया कि जिसने उचित समय पर मंत्री जी से उसका पीछा छुड़ाने के लिए ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश को भेज दिया। सरोज ने भयभीत होकर ब्रह्मचारी के दोनों हाथ पकड़ कर कहा, "ब्रह्मचारी ! मुझे बचाओ।" और इतना कहकर वह अचेत सी हो गई।

ब्रह्मचारी ने सावधानी से सरोज को सोफ़े पर लिटाकर अपने रूमाल से हलकी हवा का झोंका दिया।

ठाकुर साहब डरकर परेशानी में इधर-उधर लपके परन्तु ब्रह्मचारी ने उन्हें वहीं रोक दिया। थोड़ी ही देर में सरोज को चेतना लौट आई और वह अपने बालों को सँवारती हुई उठ बैठी। बहुत ध्यान के साथ सरोज ने ठाकुर साहब के मुख पर देखते हुए कहा, "और अपने कोठी बेला के नाम कर दी।"

"हां सरोज ! कर दी।" दीनतापूर्वक ठाकुर साहब बोले, "और मैं बेला से वह कोठी वापस भी नहीं लेना चाहता। चाहे वह मुझे ही क्यों न उस कोठी से निकाल कर बाहर खड़ा करदे।"

"ठीक यही बात वकील साहब भी उस दिन कह रहे थे।" सरोज ब्रह्मचारी के मुख पर देख कर धीमे स्वर में बोली।

"ठीक यही बात।" ब्रह्मचारी ने दुहराकर कहा।

"पर वह क्या रख सकता था बेला को ?" ठाकुर साहब बोले। "वह खूसट वकील क्या कभी मेरे सामने ठहर सकता था ? बेला एक प्रगतिशील लड़की है। सभा-सोसाइटी के हर पहलू को समझती है। सरोज ! आज दुनिया बहुत आगे बढ़ चुकी है ! पिछले चुनावों में मैंने जेल जाकर सफलता प्राप्त की। आगामी चुनाव के लिये मुझे नई मोर्चेबन्दी करनी होगी।"

"अवश्य करनी होगी," ब्रह्मचारी बोला "और आप जैसे महान व्यक्तियों का तो जीवन ही राजनीति है। आप उसे कैसे छोड़ सकते हैं ? बेला वास्तव में बेला है। खूब छांट है आपकी ठाकुर साहब ! आपकी जितनी ख्याति है, उतना ही बड़ा आपने मस्तिष्क भी भगवान से पाया है।"

"अब आप चाहते क्या हैं ?" गंभीरतापूर्वक सरोज बोली।

"चाहते क्या हैं ?" ब्रह्मचारी बोला, "तुम निरी बावली हो सरोज !

ठाकुर साहब के पास इतना समय कहां कि यह तुमको व्याख्या करके समझायें। भारतीय संसद के चुनाव आ रहे हैं। उन चुनावों में जो बाजी मार जायेगा उसी की सरकार होगी। ठाकुर साहब को आवश्यकता है एक ऐसी योग्य लड़की की जो प्रत्येक सभा-सोसायटी में जाकर छा जाये। इस कार्य के लिए इन्होंने बेला को चुन कर वकील साहब के बंदीगृह से मुक्त किया है। परंतु खेद का विषय है कि बेला उस बंदीगृह से निकलकर मंत्री संकटानंद के चंगुल में फंस गई है। ठाकुर साहेब की इस कठिन परिस्थिति में आप इनकी कुछ सहायता कर सकती हैं ?"

"यह बात है ठाकुर साहब ?" सरोज ने पूछा।

"बिलकुल यही !" सिर झुका कर ठाकुर साहब बोले।

सरोज मौन थी। ब्रह्मचारी को इस समस्त रहस्य का इतना व्यापक ज्ञान होगा, यह कभी स्वप्न में भी सरोज ने विचार नहीं किया था। ब्रह्मचारी कभी-कभी अकेला कहीं घूमने अवश्य जाया करता था परंतु उसके इस प्रकार अकेले जाने में जीवन के ये सब रहस्य छिपे थे इसका उसे ज्ञान नहीं था।

ठाकुर साहब की दीन दशा पर सरोज को तरस आ रहा था परंतु बेला की समस्या इतनी जटिल थी कि उसके सामने आते ही ठाकुर साहब मार्ग में से हट जाते थे और रह जाती थी अकेली बेला। फिर बेला के विषय में किसी भी प्रकार विचार करने के लिए सरोज उद्यत नहीं थी। इसलिए उसने अन्त में हाथ जोड़ते हुए यही कहा, "आज मेरी तबियत ठीक नहीं है ठाकुर साहब। फिर किसी दिन इस समस्या पर विचार करेंगे।"

ठाकुर साहब चलते समय नमस्कार करके विदा हुए। दूसरे दिन संध्या का समय इस विषय पर बात-चीत करने के लिए निश्चित कर दिया गया।

ठाकुर साहब के चले जाने पर ब्रह्मचारी ने खोलकर सरोज को मंत्री जी और ठाकुर साहब की सब करतूतें सुनाईं और फिर समझाया कि किस प्रकार ठाकुर साहब के नहले पर मंत्री जी का दहला पड़ा।

सरोज को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि सरोज के सामने वाली कोठी को मोल लेने वाला व्यक्ति कोई अन्य नहीं, स्वयं मंत्री संकटानंद हैं और आजकल वह उसी कोठी में रह रहे हैं।

उस कोठी में आये उन्हें पंन्द्रह दिन हो चुके, परंतु सरोज के यहां दर्शन

देने के लिये वह नहीं आये।

बेला आजकल इसी कोठी में उन्ही के पास रह रही थी और दोनों मिल कर एक दैनिक पत्र का आयोजन कर रहे थे।

पत्र का नाम मंत्री जी उसी दिन घोषित करेंगे जिस दिन पत्र प्रकाशित होगा, गत सप्ताह तक पत्र की नीति कांग्रेस के समर्थन में होने की आशा थी परंतु अब बहुत गर्मी के साथ यह अफ़वाह फैल रही थी कि मंत्री जी का झुकाव सोशलिस्ट पार्टी की तरफ़ होता जा रहा है। सुना है पार्टी ने उन्हें दिल्ली का प्रधान-पद देना स्वीकार कर लिया है और पार्टी के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने यह वचन दिया है कि वे उनके आदेशों पर चल कर पार्टी को भारत की प्रमुख पार्टी बनायेंगे।

यहां तक भी सुनने में आया है कि मंत्री जी की प्रचार मंडली के लिए लाल टोपी वाली वर्दी भी सिलकर तय्यार हो चुकी है और वह प्रथम बार उसी दिन मार्केट में निकलेगी जिस दिन इस नये पत्र का नया अंक प्रकाशित होगा।

सुना है मंत्री जी के पार्टी में आ जाने से पार्टी में नवीन स्फूर्ति आ गई है और उसकी सोई हुई शक्तियां फिर से सुसंगठित होती जा रही हैं। आगामी चुनाव में मंत्री जी का संकल्प है कि वह दिल्ली प्रांत में कांग्रेस का तख्ता पलट देंगे।

सरोज शांतिपूर्वक सुनकर मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी से बोली, "मंत्री आदमी चाहे धूर्त्त ही सही, परंतु बुद्धि का दैत्य है।"

"निस्सन्देह! मैं मंत्री जी के कामों से घृणा करता हुआ भी उनकी बुद्धि के सम्मुख मस्तक झुकाता हूं।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

: ३४ :

मंत्री संकटानंद सरोज के पास नहीं गये। उन्हें आशा थी सरोज स्वयं आयगी। परंतु वह नहीं आई। मंत्री जी को ब्रह्मचारी पर क्रोध आ रहा था, जो उनके मार्ग में कांटा बन कर बिछ गया था।

कभी एकांत में बैठकर मंत्री जी ब्रह्मचारी की धूर्त्तता पर विचार करते थे तो वह उन्हें अपने से अधिक कूटनीतिज्ञ प्रतीत होता था। ब्रह्मचारी का मंत्री जी को झुक कर नमस्कार करना और व्यंग्य वाणों का छोड़ना मंत्री जी के हृदय पर अंकित था।

ब्रह्मचारी का एकदम विरोध करके सरोज के यहां जाना एक समस्या थी। इस समस्या का हल सोचते-सोचते मंत्री जी को इतने दिन हो गये थे परन्तु कोई हल न पा सके।

अब सरोज की कोठी के सामने कोठी लेकर मंत्री जी बैठे हैं, देखिए कभी तो एकांत में सरोज से बातें करने का अवसर मिलेगा ही।

इस प्रकार की मानसिक विचार धारा में मंत्री जी गोते लगा रहे थे कि कोठी के एक ओर से बेला निकल आई और मंत्री जी के सामने आकर इठलाती हुई बोली, "वाह जी वाह, खूब रही मंत्री जी! आप भी मज़ेदार आदमी निकले। मुझसे कहा कि चलने को तैयार हो जाओ और आप यहां बैठे हवा ले रहे हैं।"

"मैं तैयार बैठा हूं बेला!" बेला का हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचते हुए मंत्री जी बोले, "तुम अब बहुत चुलबुली होती जा रही हो बेला!" बेला को अपनी आराम कुर्सी के दस्ते पर बिठाते हुए बोले।

"जी हां जानो पहले थी ही नहीं" मुंह बनाकर बेला बोली। "मैंने जो कुछ सीखा है, सब आपसे सीखा है। वरना मुझे सीखने का अवसर ही कहां मिला था? न किसी सभा सोसायटी में जाना होता था और न कोई सभ्य व्यक्ति घर आता था।" कृतज्ञता का भार सिर पर लिए हुए बेला बोली।

बेला की लटें हवा के मंद-मंद झोकों में नाच रही थीं और उसके कनपटी

के ऊपर वाली घुंघराली लटें रह-रह कर उसके मुख पर उमड़ती हुई कानों में कुंडलाकार लिपट जाती थीं। इन काली लटों के बीच सुफ़ेद हीरे की लौंग विद्युत की भांति दमक उठती थी।

बेला की दृष्टि मंत्री जी के ऊपरी आवरण को भेद कर उसके अन्दर घुस चुकी थी। उनके गुणों की महानता ने उनकी कुरूपता पर आवरण डाल दिया था। जब बेला के सम्मुख मंत्री जी की झींगुर जैसी मूछों के नीचे फूले-फूले नथनों और उनसे भी नीचे मोटाई के कारण पलट पड़ने वाले होठों की प्रतिमा उपस्थित होती थी तो उसे तुरंत महाराज जनक की सभा वाली अष्टावक्र की घटना स्मरण हो आती थी। यह कथा एक दिन मंत्री जी ने उसे सुनाई थी।

बेला समझ रही थी कि उसके जीवन का विकास हो रहा है। बेला अपने ज्ञान को विस्तृत बनाना चाहती थी। उसे भाग्य से मंत्री संकटानंद जैसे ज्ञानी गुरू मिल गये थे। मंत्री जी बेला को बता चुके थे कि बुद्धि बल से राम ने रावण को मारा, कृष्ण ने कंस का संहार किया, शंकराचार्य ने ब्राह्मण धर्म का पुनरुद्धार किया और गांधी ने अंग्रेजों को भारत से निकाला। यह बुद्धि का चमत्कार है, हृदय का नहीं।

मंत्री संकटानंद ने बुद्धि को प्रधानता दी थी। वह जब भी अपने जीवन में कोई कदम उठाते थे तो उसकी परख वह बुद्धि की कसौटी पर करते थे। यह मार्ग उन्होंने बेला को भी दिखाया और उसे अपनी बनाकर इस अस्त्र का प्रयोग भी करना सिखाया।

परन्तु बेला का हृदय कभी-कभी ऐसा फिसलता था कि बेला घंटों बैठी सोचती रहती थी कि वह कहां और किधर जा रही है? जीवन की वास्तविकताओं से अपने को बहुत दूर पाकर वह बेचैन सी हो उठती थी; परंतु शीघ्र ही मंत्री जी का विशाल व्यक्तित्व उस पर छा जाता था।

मंत्री जी ने बेला को समझाया था कि विश्व सृष्टि के आदि काल से बुद्धि के बल पर चलता आया है। यह बुद्धि कभी राजाओं की दैविक शक्ति बनी और कभी धर्म गुरुओं की आज्ञा। आज भी संसार में बुद्धि का साम्राज्य है। बुद्धि कहीं जनता को आगे रखकर जनवाद के नाम पर उनका बलिदान दे रही है, और कहीं धन को सामने रखकर प्रलोभन द्वारा शक्ति हड़पने के लिए जाल

रच रही है, और कहीं आराम के साथ जैसी स्थिति चल रही है उसे उसी रूप में संभाले रखने का प्रयत्न कर रही है।

संसार बुद्धि का खेल है। बुद्धि ही शक्ति का संचालन करती है।

बेला ने मंत्री जी के बुद्धिवादी सिद्धान्त की अपनी धोती के पल्ले में गांठ लगा ली थी और प्रण कर लिया था कि वह कभी जीवन में भावनाओं के पीछे नहीं बहेगी। वह बुद्धिवादी मार्ग पर चल कर जीवन के ऊंचे-से-ऊंचे शिखर पर पहुंचने का प्रयत्न करेगी।

मंत्री जी की दशा आजकल विचित्र थी। बेला के वह ज्यों-ज्यों निकट आ रहे थे त्यों-त्यों उन्हें न जाने क्या हो जाता था। वह अपने को रोकने का प्रयास करने पर भी बेला की ओर बहते जा रहे थे। भावनाएं बुद्धि पर पर्दा डालती जा रही थीं। कभी-कभी मंत्री जी अपने ऊपर झुंझलाते भी थे। कभी-कभी हाथों को जोर-जोर से दीवारों में मारकर दांतों को चबाने भी लगते थे और पागलों की तरह कमरे में घूमना प्रारम्भ कर देते थे।

मंत्री जी बोले, "बेला ! आज तुमसे एक बात पूछूं। वचन दो कि तुम उत्तर दोगी और बिल्कुल सही उत्तर दोगी।"

बेला ने विशुद्ध सात्विक विचार से वचन दिया कि वह सही-सही उत्तर देगी। बेला के लिए इसमें संकोच की कोई बात नहीं थी। बेला का हृदय विशाल था। वह प्रगति के पथ पर जा रही थी। संकुचित विचारों और संकुचित मनोवृत्तियों के लिए उसके पास कोई स्थान नहीं था। वह बुद्धि-पथ पर उड़ने वाली वह पतंग थी कि जिसे नीति की डोर से बराबर मंत्री जी ढील दे रहे थे। अनंत के पथ पर बेला उड़ी जा रही थी। वह बहुत प्रसन्न थी। उसका हृदय आशाओं से पूर्ण था। उसे जीवन में विजय दिखाई दे रही थी। एक आजादी के नये संसार का चित्र उसकी आंखों की पुतलियों में साकार हो चुका था।

बेला के कान मंत्री जी की बात सुनने के लिए उतावले हो रहे थे। वह समझती थी कि आज शायद मंत्री जी कोई विशेष रहस्य उद्घाटित करेंगे जो जीवन को बुद्धि के बल से नीति द्वारा सफलतापूर्वक चलाने का मार्ग सुझायेगा।

मंत्री जी बोले, "बेला ! तुम पर आज मैं जीवन में पहली बार विश्वास

कर चला हूं ! क्या तुम मेरी विश्वासपात्र होकर रह सकोगी ?"

बेला बोली, "इस प्रश्न को करने का समय निकल चुका मंत्री जी ! आज यह प्रश्न करने का समय नहीं रहा।"

फिर बोली, "अब तो मेरा जीवन आप जिस साँचे में भी ढालते जायेंगे वह वैसा ही बन जायगा। यदि आप विश्वासपात्र बनाने के साँचे में ढालेंगे तो मैं विश्वासपात्र क्यों न बन सकूंगी ?"

मंत्री जी भावनाओं के वेग में समझ गये कि बेला ने विश्वासपात्र रहने का वचन दे दिया। मंत्री जी का हृदय पिघलता जा रहा था। वह अपनी बुद्धि का बल देकर उसे पिघलने से रोकने का प्रयास कर रहे थे।

इसी समय कोठी के द्वार पर कार का हार्न सुनाई दिया और हार्न की आवाज सुनते ही बेला समझ गई कि ठाकुर साहब आ रहे हैं। वह तुरन्त आराम-कुर्सी की हत्थों से उतर कर घास में घूमने लगी।

ठाकुर साहब ने अपनी कोठी बेला के नाम इसलिए की थी कि वह आकर उसी कोठी में रहे, इसलिए नहीं कि वह महमान बन कर मंत्री जी की कोठी में जमी रहे और ठाकुर साहब को नित्य वहाँ के चक्कर लगाने पड़ें।

बेला और ठाकुर साहब की बात-चीत के बीच में मंत्री जी कुछ नहीं बोलते थे, हालांकि यह संबंध स्वयं मंत्री जी ने ही स्थापित कराया था। ठाकुर साहब नित्य ही संध्या को वहाँ आते थे और बेला आदर-भाव के साथ उनसे मिलती थी।

बेला का इस प्रकार ठाकुर साहब से मिलना मंत्री जी के दिल में खटकने लगा था। परंतु प्रगति के पथ पर चलना सीखने वाली बेला को रोका नहीं जा सकता था। ऐसी कठिन परिस्थिति में मंत्री जी को मौन होकर नीति का आश्रय लेना पड़ता था और वह चुप-चाप जलन को दिल में मसोस कर गंभीर हो जाते थे।

आज ठाकुर साहब ने पूछ ही लिया, "बेला ! क्या अपनी कोठी पर नहीं चलोगी ?"

"यह भी अपनी ही कोठी है ठाकुर साहब ! मंत्री जी मेरे गुरु हैं और मैं इन्हें पिता तुल्य मानती हूं। पिता जी के घर को क्या आप अपना नहीं समझते ?" मुस्कान भरी आभा ठाकुर साहब पर बखेरते हुए बेला बोली।

ठाकुर साहब चुप हो गये और मंत्री जी ने क्षुब्ध होकर दो-चार बार अपने नथनों को फुलाकर सर्प की तरह फुंकार लगाई।

ठाकुर साहब बेतक़ल्लुफी से आते और दरबान से कुर्सी मंगा कर बेला के पास बैठ कर गप्पें लगाने लगते। इसे बन्द करने को मंत्री जी ने यह रवैया काम में लिया कि ठाकुर साहब के आते ही कोई काम बता कर वहां से चल देते परन्तु जब ठाकुर साहब ने अपनी बान न छोड़ी तो मंत्री जी को ही हार मान कर रुकना पड़ा।

"आज शायद मंत्री संकटानंद को कोई काम नहीं है जनहित का ?" व्यंग्य कस कर ठाकुर साहब बोले।

बात ठाकुर साहब नेक ही बेला से थी परंतु कही इस तरह कि भनक मंत्री जी भी सुन लें।

मंत्री जी कुढ़ते हुए बोले, "देखिये ठाकुर साहब ! मैं कांग्रेसियों को चोर और उचक्का समझता हूं। ये लोग पक्के धूर्त्त होते जा रहे हैं। इनका भविष्य बहुत ही अन्धकारपूर्ण है।"

"परंतु आपने तो इस अन्धकारपूर्ण भविष्य से अपना संबंध विच्छेद कर लिया। अब तो आप प्रगति के मार्ग पर लंबी-लंबी छलांगें लगाते हुए तीव्र गति से जा रहे हैं। ज़रा संभल कर चलिए, कहीं इन लंबी-लंबी छलांगों में पैर ओछा पड़ने पर मुंह के बल न आना पड़े।" ठाकुर साहब मूंछों पर ताव देकर बोले।

"बुद्धि के विचार से आपने बहुत ठीक कहा ठाकुर साहब ! मंत्री जी आपको आपके इस कथन पर दाद देंगे।" गंभीरता पूर्वक बेला बोली।

"वास्तव में आपने खूब कहा ठाकुर साहब !" बेला को चढ़ाते हुए मंत्री जी बोले।

"देखा ठाकुर साहब ! मंत्री जी के जीवन का बस यही सबसे बड़ा गुण है। वह अपने विपक्षी के गुणों की भी सराहना करते हैं।" बेला बोली।

"मंत्री जी आजकल दार्शनिक होते जा रहे हैं बेला !" दूसरा व्यंग्य-वाण छोड़ते हुए ठाकुर साहब बोले। "अच्छा बेला ! अब हम चले। सरोज के यहां जाना है निमंत्रण है उसका।" कह कर ठाकुर साहब ने ठोकर मार मंत्री जी के दिल पर लिखे सरोज के नाम को जगा दिया।

ठाकुर साहब पुराने खुर्राट थे और वह जानते थे कि मंत्री जी को किस नस

से पकड़ कर काबू में किया जा सकता है। सरोज का नाम सुनकर मंत्री जी तिलमिला उठे। पर मुस्करा कर बोले, "ठाकुर साहब ! आजकल खूब ठाठ की छान रही मालूम देती है ?"

बेला समझ गई कि सरोज का नाम ठाकुर साहब ने किस लिए लिया और मंत्री जी के हृदय पर उसे सुनकर क्या गुजरी।

बेला दोनों की बातें सुनने में व्यस्त थी और इधर ये दोनों दून की हांक रहे थे।

मंत्री जी के जीवन का स्तर बहुत नीचे से ऊपर पहुंचा था, इसलिए कभी-कभी वह बहुत छोटी बातों पर उतर आते थे। बेला के मस्तिष्क में वह संसार के सब से बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में विराजमान थे, इसलिए वह कभी भी उनकी किसी छोटी से छोटी बात को भी हल्की तराजू पर नहीं तोल सकती थी।

ठाकुर साहब मूंछों पर ताव देकर बोले, "बस आजकल संध्या समय सरोज के ही दर्शनों में कटता है मंत्री जी ! क्या खूब कला अभिनेत्री है वह भी ! भगवान ने उसे प्रत्येक वस्तु अनोखी ही प्रदान की है। उसकी प्रतिमा जिस समय नेत्रों में उतर आती है तो सच जानो मंत्री जी नेत्रों की पुतलियों को सुख मिलता है। उसकी मस्ती भरी चाल, मधुर कंठ-ध्वनि की लोच और फिर बल खाती हुई चोटियों का सर्पों की भांति गले में झूलाना, गजब है मंत्री जी, गजब !" कहकर ठाकुर साहब ने मंत्री जी की ओर से मुंह फेर कर बेला के मुख पर देखा।

बेला यह क्या सुन रही थी। वह रुक न सकी। उठी और कोठी के अन्दर चली गई।

बेला के अन्दर चले जाने पर ठाकुर साहब ने जरा जोर से मंत्री जी का कंधा कस कर पकड़ा और बोले, "देखिए मंत्री जी ! मैं कहे देता हूं कि यह धूर्त्तता अब नहीं चलेगी। इस प्रकार की धांधलेबाजी आपस में अच्छी नहीं होती। आपको याद है कि एक दिन आपने मुझे जौहरी बनाने के लिए कहा था परंतु आज आप स्वयं ही जौहरी बनने का स्वप्न देख रहे हैं। सिद्ध साधक के बिना संसार में काम नहीं चलता।"

"यह मैं जानता हूं" मंत्री जी गंभीरतापूर्वक बोले।

"जानने पर भी इतनी भूल ?" आश्चर्य से ठाकुर साहब ने कहा।

"भूल आप समझ रहे हैं ठाकुर साहब ! मैं भूल नहीं समझ रहा। यह बुद्धि

के विकास का युग है। इस विकास-काल में आप ही विचार कर देखिए कि जब मैं सिद्ध बनने के लिए अधिक उपयुक्त हूं तो साधक क्यों बनूं ?"

"अच्छा ! तो फिर यों कहिए कि आप अब तक हमें उल्लू बना रहे थे। परन्तु यह नहीं हो सकेगा मंत्री जी ! उल्लू बनाने का समय निकल चुका।" क्रोध में भर कर ठाकुर साहब बोले।

"मैं ऐसा नहीं समझता।" मुंह पर मुस्कान लेकर एक पैर पर दूसरा पैर रखे हुए गुलाब के फूलों के गुच्छे को घुमाकर मंत्री जी ने कहा। 'मैं समझता हूं कि वह समय अभी तक आया ही नहीं। बल्कि मैंने यों समझिए कि उस दिशा में अभी विचार ही नहीं किया।" और इतना कहकर नथने फुलाते हुए मंत्री जी गंभीर हो उठे।

यों पीछे तो ठाकुर साहब मंत्री जी पर काफ़ी फुनफुनाते रहते थे परन्तु जब मंत्री जी अपने नथने फुलाकर सर्प की भांति फुंकारने लगते थे तो ठाकुर साहब का साहस जाता रहता था और वह खड़े होकर यह कहते हुए चले जाते थे, "अच्छा अच्छा ! समय आने दो। ज़हर चाहे कितना भी भयंकर क्यों न हो परंतु उसका कुछ उतार अवश्य होता है मंत्री जी !"

ठाकुर साहब चले गये परंतु मंत्री जी का पारा अभी नहीं उतरा था। वह उसी प्रकार बैठे बलबला रहे थे। ठाकुर साहब के ऊपर उन्हें जितना भी क्रोध आता था उसे वह कांग्रेस को गालियां देकर उतारते जाते थे। जब बहक जाते थे तो जवाहरलाल और राजेन्द्र बाबू से लेकर कांग्रेसी दफ्तरों के चपरासियों तक को नहीं छोड़ते थे। मंत्री जी को जब गालियां देने का फ़िट आता था तो बेला आकर उन्हें संभालती थी।

मंत्री जी बेला पर परीक्षण कर रहे थे और बेला मंत्री जी पर। बेला के जीवन में मंत्री जी की अपेक्षा अधिक चहल-पहल थी, जिनका कारण मंत्री जी बेला की निश्चितता बतलाते थे परन्तु वह यह समझते अवश्य थे कि यह उनकी अपनी भावनाओं का विकार था, और उनकी अपनी भावनाओं की कमज़ोरी।

बेला मुक्त थी। उसे धन की इच्छा नहीं थी, रूप की इच्छा नहीं थी। ये दोनों वस्तुएं उसके पास थी। ठाकुर साहब की कोठी, वकील साहब का मकान और मंत्री जी की कोठी, सबको वह अपनी ही सम्पत्ति समझती थी।

मंत्री जी कुछ चिंतित से बैठे थे कि इसी समय सेठ गूदड़मल आ गये।

मंत्री जी आदर भाव के साथ खड़े हो गये और बड़े प्रेमपूर्वक उन्हें अपने पास वाली कुर्सी पर बिठाया।

सेठ जी के बैठने पर मंत्री जी ने बिजली की घंटी बजाई और दरबान के आने पर उससे कहा "देखो! अन्दर जाकर बेला से कहो कि सेठ गूदड़मल पधारे हैं।"

दरबान के जाने पर आपस में बातचीत प्रारम्भ हो गई, "बधाई है मंत्री जी!" सेठ जी बोले। "कोठी भी आपने दिल्ली की जान निकाल कर ली है। इस कोठी पर कुछ दिन मेरा बड़ा दांत रहा, परन्तु पा न सका।" गहरा सांस भरकर सेठजी बोले।

"आज यह आपकी ही है सेठ जी! आप इसी समय अपना सामान लेकर यहां आ जाइये मुझे खाली करने में एक क्षण भी न लगेगा।" मुस्कुराते हुए मंत्री जी ने उत्तर दिया।

"क्यों नहीं, क्यों नहीं?" मन में यह समझते हुए कि यह मंत्री कितनी बनावटी बातें कर रहा है, ऊपर से मुस्कुराकर सेठ जी बोले, "यह तो मैं पिछली बात कर रहा था। आपमें और मुझ में अन्तर ही क्या है मंत्री जी! आप की कोठी मेरी ही कोठी है।"

तभी बेला ने कमरे में प्रवेश किया और सेठ जी का ध्यान मंत्री जी से हट कर बेला पर पहुंच गया। मंत्री जी इस आकर्षण को भांप गये और अवसर की प्रतीक्षा करने लगे कि किस समय....।

"बधाई है बेला! इस नवीन कोठी के लिये।" सेठ जी बोले।

"और बधाई देने आप आज आये है?" मुस्कुराते हुए बेला बोली।

"ऐसा ही हो जाता है बेला देवी! हम व्यापारी आदमी है, रात दिन मरना होता है। अभी दिल्ली हैं, तो कल कलकत्ता और परसों बम्बई। दस दिन का दौरा करके आ रहा हूं। हिन्दुस्तान भर में दस कारखाने हैं। एक-एक दिन एक-एक कारखाने में लग जाना साधारण बात है।" गम्भीरता पूर्वक सेठ जी बोले।

"परन्तु आप उस भवन को तो शायद भूल ही गए जिसकी नींव आपने उस दिन दस लाख रुपया देकर डाली थी। आपको शायद नहीं मालूम कि अब हमारा कार्य कितना आगे बढ़ चुका है। कम से कम एक पत्र तो आपको

बाहर से भी डालना उचित था।" बेला बोली और मंत्री जी ने इस बात का जोरदार शब्दों में समर्थन किया।

बेला ने बतलाया कि मशीनें बम्बई आ चुकी हैं और कैनाट सर्कस पर अस्सी हजार रुपया पगड़ी देकर एक बहुत बड़ा और सुन्दर स्थान पत्र के लिए ले लिया गया है।

सेठ गृदड़मल ने बेला को इस महान् कार्य के लिए दोबारा बधाई दी और अपना पूर्ण सहयोग देने का वचन दिया परन्तु इतना स्पष्ट कह दिया कि वह खुलकर सरकार का विरोध नहीं करेंगे वह व्यापारी आदमी ठहरे। उनका काम सबका सहयोग चाहता है।

मंत्री जी ने बेला को सामने रखकर वचन दिया कि वह इस रहस्य को रहस्य ही रखेंगे।

वचन बेला के सामने दिया गया था इसलिए वचन पर मुहर लग गई।

खाने का समय हो गया और आज सेठ जी, मंत्री जी तथा बेला ने एक ही मेज पर भोजन किया।

: ३५ :

स्वामी ज्ञानानन्द पर सेठ गूदड़मल की भेंट का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने पिछली कुछ परेशानियों के कारण 'सत्य मार्ग' पत्र का प्रकाशन स्थगित करने का विचार कर लिया था। परन्तु सेठ जी का उस दिन कुटिया पर आना डूबते को तिनके का सहारा बन गया।

एक बार सन् १९३२ में लोकहित के लिए महायज्ञ करके स्वामी जी ने ख्याति प्राप्त की थी। दुबारा हिन्दू कोड बिल का विरोध करके कांग्रेस-सरकार के छक्के छुड़ा दिए।

खेद यही रहा कि उन्होंने गलत आदमियों को साथ लेकर इस महान् कार्य का बीड़ा उठाया।

स्वामी जी को धर्म संकट में दिखाई दे रहा था। संसद के आगामी चुनावों में भी यदि इन्ही धर्म-विमुख प्राणियों का बोलबाला रहा तो ये धर्म को कुचल कर रख देंगे। स्वामी ज्ञानानन्द ने निश्चय किया कि वह अपनी सम्पूर्ण शक्तियों से अधर्म की बढ़ती हुई बाढ़ को रोकने का प्रयास करेंगे।

पत्र की ओर से निश्चिन्त होकर स्वामी ज्ञानानन्द ने अपना ध्यान आगामी चुनावों की ओर लगाया।

आज संध्या को वह वकील साहब के यहां पहुंचे तो देखा दशा ही विचित्र थी। वकील साहब रुग्णावस्था में शय्या पर पड़े थे और उनका पहाड़ी नौकर उनके पास टाट के टुकड़े पर बैठा था। दवाई की शीशी में से एक खुराक दवा वकील साहब को पिला रहा था।

वकील साहब ने स्वामी जी को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और स्वामी जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

वकील साहब उठ नहीं सकते थे। स्वामी जी ने कुर्सी पलंग के पास सरका कर उस पर बैठते हुए पूछा "कब से बीमार चल रहे हो ?"

"जिस दिन आप आये थे उस दिन मैं ठीक था। कभी-कभी छाती में जलन सी हो जाती थी और पेट में चबक थी। दूसरे दिन से जो खाट पर लेटा तो

आज तक लेटा ही हुआ हूं।" वकील साहब ने बताया।

"बेला कहां है ?" स्वामी जी ने पूछा।

वकील साहब की गड़ी हुई दो पतली खुश्क आंखों में आंसुओं की दो बूंदें आ गईं। मुंह में एक शब्द न आया।

स्वामी जी समझ गये कि बेला को धूर्त्त मंत्री उड़ा कर ले गया होगा।

"भला हो इस पहाड़ी का कि मेरे प्राण बच गए स्वामी जी ! वरना आज आप यहां किसी कोने में मेरा शव ही सड़ा हुआ पड़ा पाते। हो सकता था कि आज से पूर्व ही म्युनिसपैलिटी वाले उस शव को उठा कर ले गये होते।" दर्द भरे स्वर में वकील साहब बोले।

"तब क्या उस दिन से बेला इधर आई ही नहीं ? परन्तु उस दिन तो वह मेरी बातों से बहुत प्रभावित दीख पड़ती थी।" आश्चर्य प्रकट करते हुए स्वामी जी बोले।

"उस दिन मैंने भी यही समझा था कि शायद उसकी बुद्धि कुछ ठिकाने पर आ गई है। बड़े प्रेम-भाव से मेरे हाथ-मुंह धुलवा कर उसने खाना खिलाया था। परन्तु प्रातःकाल उसे न जाने क्या हो गया कि वह मुझे फिर गालियां फटकारने लगी और आपको भी। 'नहीं, यह कदापि नहीं हो सकता। जो पग आगे बढ़ चुका है वह पीछे नहीं हटेगा। मैं स्त्री हूं, कागज की गुड़िया नहीं हूं। मुझे जो चाहे अपनी इच्छा के अनुसार नचाले; यह सम्भव नहीं। मैं प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ रही हूं। बढ़ती ही रहूंगी।" यह शब्द थे उसके।

वकील साहब के होंट सूख गये और गले में खुश्की आ गई।

"बस रहने दीजिए वकील साहब ! मैं समझ गया। बेला हवा के घोड़ों पर सवार है। बेला ने अभी तक अपनी आंखों को आकाश पर पसार कर ही देखा है, नीचे की ओर झांक कर नहीं देखा कि नीचे कितनी गहरी खाई है।"

"ऐसा न कहो स्वामी जी ! ऐसा न कहो। वह बहुत कोमल है। मैंने उसे अपने हृदय से भी अधिक सुरक्षा के साथ संजोकर रखा है।" दर्द भरे स्वर में वकील साहब ने कहा।

"बेला मेरा जीवन है स्वामी जी ! मैं बेला के बिना जीवित नहीं रह सकता। इस समय आप ही मेरा उद्धार कर सकते हैं।"

अलमारियों में लगी कानूनी पुस्तकों की ओर संकेत करके कहने लगे, "मुझे

इन पुस्तकों पर बड़ा अभिमान था, परंतु आज मेरा वह अभिमान भी जाता रहा। कानून मेरी कुछ सहायता नहीं कर सकता। मैंने दिल्ली के बड़े-बड़े वकीलों से परामर्श कर लिया, परंतु सब यही कहते हैं कि बेला बालिग है और हर बालिग को अपना मार्ग स्वयं निर्धारित करने का अधिकार है।

आप ही बेला को समझा सकते हैं कि उसका क्या उचित अधिकार है और क्या अनुचित। जब तक बेला मेरे पास थी मेरी बुद्धि काम करती थी, परंतु अब मेरी बुद्धि ने काम करना ही छोड़ दिया।"

"अच्छा ! अब आप अधिक न बोलिए और नियमित रूप से दवा लेते रहिए। मैं प्रयत्न करूंगा कि बेला तुम्हें मिल जाय। धर्म तुम्हारा साथ देगा, विश्वास रखो।" गम्भीरता से स्वामी जी बोले।

: ३६ :

स्वामी जी चले गये तो सरोज की फिटन आकर रुकी। उसमें से ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश तथा सरोज उतर कर वकील साहब के पास आये।

एक बार तो वकील साहब को विश्वास न हुआ कि वे सरोज और ब्रह्मचारी हो सकते हैं परन्तु आंखें इतना धोखा तो नहीं खा सकतीं। सरोज के स्वागत के लिए वकील साहब ने उठने का प्रयास किया परन्तु उन्हें निष्फल देखकर सरोज आगे बढ़ गई और उसने बहुत ही सावधानी से वकील साहब को संभालते हुए पीछे को लिटा कर कहा, "यह आपने क्या किया ? इतनी कमजोरी में इस तरह उठना ठीक नहीं था। जरा से में दिल पर असर हो जाय तो संभलना कठिन हो जाय।"

"दिल तो टूट गया सरोज ! उसे बेला ने चूर-चूर कर दिया।" लम्बी आह भर कर वकील साहब बोले।

पहाड़ी ने दो कुर्सियां आगे बढ़ा दीं और उन पर ब्रह्मचारी तथा सरोज बैठ गये। ब्रह्मचारी बैठकर बोला, "बेला ने आपका हृदय चकनाचूर कर दिया और आप खटिया पर लेट गये। कुछ साहसी बनिए और बेला को प्राप्त करने का प्रयत्न कीजिये। संसार में बिना प्रयत्न के कोई वस्तु किसी को नहीं मिल सकती।"

वकील साहब ने आंखें पसारकर ब्रह्मचारी के मुख पर देखा और उसकी ध्वनि में वकील साहब को ऐसा आभास मिला कि मानो वह बेला को प्राप्त करने में उनकी सहायता करेगा।

वकील साहब ने पूछा "क्या आप मुझे बेला को प्राप्त करने का कोई मार्ग सुझा सकते हैं, ब्रह्मचारी ?"

"क्यों नहीं ! आपमें साहस होना चाहिए। आप सब कुछ कर सकते हैं।" ब्रह्मचारी ने कहा।

"अब मुझ में साहस की कमी नहीं है सरोज !" गंभीर मुद्रा बना कर वकील साहब बोले।

"अच्छा रहने दो अब इन बातों को परन्तु यह तो कहो कि आपकी यह

दशा क्या हो गई है ? कितने ही दिन से आपका कोठी की तरफ आना नहीं हुआ। आज प्रातःकाल इच्छा हो आई कि चलें कुदसिया घाट पर यमुना-स्नान किया जाए। मार्ग में ब्रह्मचारी ने कहा कि जब यहां तक आ ही गए हैं तो क्यों न वकील साहब की ही खैर-खबर लेते चलें कि आखिर इतने दिन की अनुपस्थिति का कारण क्या हो सकता है ?" सरोज मुस्कुराती हुई बोली।

"बस कुछ न पूछो सरोज ! जिस दिन तुम्हारी कोठी पर गया था उससे दूसरे ही दिन इस कम्बख्त खटिया ने पकड़ लिया।" एक दर्द भरे स्वर में वकील साहब बोले।

"बेला कहां है आजकल ?" सरोज ने पूछा।

"बेला उसी दिन से गायब है सरोज ! बेला पागल हो गई है, बेला अंधी हो गई है।"

"अंधी हो गई है यह तो माना जा सकता है परन्तु पागल से तो आप प्रतीत हो रहे हैं वकील साहब !" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी बीच में बोल उठा। "बेला में तो चेतना शक्ति का उदय हो रहा है। आप जरा स्वस्थ हो जाइए फिर आपको बेला के जीवन का विकास देखने के लिए मिलेगा। आजकल बेला के नाम की शहर में धूम है।"

"वह इसी योग्य है ब्रह्मचारी ! देहली शहर क्या उसकी संसार में धूम होनी चाहिए। वह बेला नहीं हीरा है। लाखों में से एक खोजकर मैं लाया था। उस हीरे को प्राप्त करने के लिए मुझे कितना मूल्य देना पड़ा था। तुम नहीं जानते ब्रह्मचारी ! परन्तु वह हीरा मेरे हाथ से निकल गया।" वकील साहब बोले।

सरोज ने मन में मुस्कुराकर कहा कि देखो इस खूसट के पास भी कैसा कुल-मुलाता हुआ दिल है कि जिसमें रह-रह कर बेला के लिए उत्पीड़न हो उठता है। बेला को प्राप्त करने के लिए वास्तव में इसने काफी धन खर्च किया। बेला का पिता शराबी था और जब तक वह मरा नहीं उसका पूरा भार वकील साहब पर ही था।

सरोज ने वकील साहब के साथ सहानुभूति दिखाते हुए कहा, "मैं नित्य संध्या और प्रातःकाल आकर आपकी खबर ले जाया करूंगी। आपको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होगा। नियमित रूप से दवाई खाते रहो।"

सरोज की सहानुभूति पाकर वकील साहब का मुर्झाया चेहरा खिल उठा।

वकील साहब के जीवन में नारी का एक विशेष स्थान था। उनका जीवन फीका-फीका हो जाता था जब किसी भी नारी की सहानुभूति उन्हें प्राप्त नहीं होती थी। बेला के चले जाने से वकील साहब के जीवन की वह ज्योति जाती रही थी जो उन्हें इस वृद्धावस्था में भी युवकों की भांति वकालत करने को प्रोत्साहित करती रही थी।

वकील साहब को दवा पिला कर सरोज और ब्रह्मचारी चलने लगे। चलते समय ब्रह्मचारी बोले, "वकील साहब! जरा स्वस्थ हो जाइये। फिर बेला को प्राप्त करने का मार्ग निकालेंगे। आप जैसे योग्य व्यक्ति के लिए बेला को प्राप्त कर लेना कोई कठिन कार्य नहीं है। मैं आपको मंत्री जी से योग्य समझता हूं।"

"यह बात सच है।" सरोज ब्रह्मचारी की बात का समर्थन करते हुए बोली।

ब्रह्मचारी के मुख से निकली हुई बात सरोज द्वारा समर्थन पाकर वकील साहब के लिए वेद-वाक्य बन गई और उन्हें एक बार फिर अपनी बुद्धि पर विश्वास होने लगा। उनके हृदय में फिर से नवीन साहस का संचार हुआ।

सरोज और ब्रह्मचारी जा चुके थे। पास में टाट के टुकड़े पर उनका पहाड़ी नौकर बैठा था और उसके पास में रखी थी दवा की शीशी। वकील साहब को लगा कि मानो उनका स्वप्न अभी-अभी टूटा है और जो कुछ भी उन्होंने देखा वह सत्य नहीं था, स्वप्न था।

मन में तनिक खिन्न होकर उन्होंने देखा कि वे कुर्सियां ठीक उसी स्थान पर पड़ी थीं जहां उन्होंने उन पर सरोज और ब्रह्मचारी को बैठे देखा था। परंतु उन्हें अपने पर फिर भी विश्वास न हो सका और उन्होंने पहाड़ी से पूछा, "बेटा! अभी-अभी यहां कोई आया था?"

अब वकील साहब पहाड़ी को बेटा कह कर सम्बोधित करने लगे थे। दिन-प्रति-दिन उसकी सेवाओं के कारण उनका स्नेह उस पर बढ़ता ही जा रहा था।

"जी आये तो थे। अभी गये हैं। आप उन्हीं से तो बातें कर रहे थे। वह देवी जी कह गईं हैं कि कल प्रातःकाल फिर आयेंगी।" पहाड़ी ने कहा।

वकील साहब का भ्रम टूट गया और उनका मस्तिष्क भी कुछ सही काम करने लगा। इसी समय पहाड़ी ने मौसमियों का आधा गिलास रस निकाल

कर वकील साहब को दिया। उसे पीकर उनके बदन में ज़रा और ताज़गी आगई। फिर कुछ सचेत होकर बोले, "बेटा ! सरोज से तुमने चाय की भी बात नहीं पूछी।"

"आप बीमार जो थे वकील साहब ! बीमार के पास कोई चाय-पानी के लिये नहीं आता और फिर वह बेचारी तो बहुत ही अच्छी थीं।" पहाड़ी बोला।

"हां बेटा ! वह बहुत·····" कहते-कहते वकील साहब रुक गये कुछ कहना चाहते थे परंतु पहाड़ी के सामने नहीं कहा। मौन हो गये। पहाड़ी ने दवाई की शीशी उठा कर कानस पर रख दी और स्वयं घर का काम-धंधा करने के लिये अंदर चला गया।

: ३७ :

सेठ गूदड़मल जी ने आज अपने मित्र के सुपुत्र राजकुमार को एक लाख रुपया देकर कोठी आचार्य किशनचंद के नाम करा दी। कोठी के साथ आज अपनी ब्यूक गाड़ी भी उन्होंने आचार्य जी को सौंप दी।

पिछले कुछ दिनों से नई दिल्ली की कोठियों का रंग-रूप बदल रहा था। जिन विशाल भवनों में झमझमाती हुई सुन्दर कामनियां घूमा करती थीं उनमें अब खद्दर की सलवारें और रंगीन साड़ियों की बहार थी।

कोठियों के दरबान वही थे, माली वही थे। इन सबको आजकल अपने मालिकों से बड़ी भारी शिकायतें थीं। वह लोग अपने मालिकों को जब कभी आपस में बैठते थे तो कितनी ही खरी-खोटी सुनाते थे। परंतु अन्त में कुछ सोचा-समझ कर शांत हो जाते थे।

जब राजकुमार साहब का सामान कोठी से जाने लगा तो सचमुच ही उनके नौकरों के आँसू बह रहे थे।

आचार्य जी की शक्ल देखते ही मुंह फुला कर दरबान ने माली से कहा, "भाई भाग्य की बात है, वरना कहां यह कोठी और कहां यह महाशय जिन्हें ठीक से धोती बांधने की भी तमीज़ नहीं।"

"एक पैर का चप्पल तो टूटा ही हुआ है भाई दरबान ! तुमने यह भी गौर किया। कहां हमारे राजकुमार साहब थे कि कभी उन्होंने जूते को पालिश कराया ही नहीं। जब जूते की चमक गायब हुई तो उन्होंने उसे अपने किसी नौकर को दे दिया।"

"अब तो भाई होली-दिवाली को भी रोना ही रहेगा। क्या मजाल जो एक पैसा भी इनाम का पा जाओ।" दरबान ने कहा।

"नहीं मिलेगा, न सही। हम लोगों को हड़ताल तो करनी आती है। क्यों भय्या ! दरबान ! क्या खोटी पचास रुपल्ली की नौकरी में घर भर का पेट पलता है ? हम लोग कहेंगे कि न सही इनाम, हमारा वेतन बढ़ाओ, हम पचास रुपल्ली पर अब काम नहीं करेंगे।" तुनककर माली बोला।

"लेकिन यार ! सुना है कि लोक सभा के सिक्रटी हैं और इनसे लोगों के बड़े-बड़े काम निकलते हैं, बड़े-बड़े सेठ-साहूकार उन्हें माथा झुकाने आते हैं।" दरबान कुछ आशा भरे स्वर में बोला।

"तो इनाम देने वाले की कमी नहीं रहेगी !" दरबान ने खुश होकर कहा, "कोई न कोई मूजी फंसता ही रहेगा।"

आचार्य जी का सामान कोठी में आना प्रारम्भ हो गया था। फरनीचर वालों ने फरनीचर फिट कर दिया और सफाई वालों ने सफाई।

आचार्य किशनचन्द आज बहुत प्रसन्न थे और वह अपने मित्र सेठ गूदड़मल पर बलिहारे जा रहे थे। उन्होंने जीवन में यह दिन दिखाया और फिर उन्हें अपने गत जीवन की तपस्याओं का स्मरण हो आया जिनके फलस्वरूप भगवान ने उन्हें आज इस पदवी पर आरूढ़ किया।

आचार्य जी के एक दर्जन बच्चे कोठी के बागीचे में इस तरह फैले-फैले फिरने लगे मानो कोई झोटा-मोटा बकरे और बकरियों का रेवड़ इधर खुल पड़ा हो। सब बच्चे नये नये रंग के थे, कोई लम्बा, कोई मधरा, कोई पतला, कोई मोटा, कोई काला, कोई गेहुंआ यानी एक दूसरे से सब अलग। सब बच्चों के पीछे आचार्यानी मस्ती के साथ झूमती हुई चली आ रही थी।

आचार्यानी गांव की वह स्वस्थ स्त्री थी जो बीस बच्चों को अपने पेट से जन्म देकर और आठ बच्चों के मर जाने का कष्ट सहन करने के पश्चात भी अनेकों शहर की हृष्ट-पुष्ट सुकुमारियों से कहीं सुन्दर गंठा हुआ बदन रखती थी। रंग कुछ काला अवश्य था परन्तु सफेद साड़ी पहनकर वह खिलती थी।

आचार्य जी की पत्नी ने कोठी में पदार्पण करके जब अपने गांव के कच्चे फूंस के छप्पर वाले रेह लगे मकान की तुलना में इसे रक्खा तो उन्हे यह राजमहल सा प्रतीत हुआ। कोठी के जिस ओर को भी वह निकली सीना उभार खा उठा।

आचार्य जी के चरणों में उसकी श्रद्धा असीम हो उठती थी। शास्त्री जी की पत्नी चाहे पढ़ी लिखी न थी परन्तु सलीका उसे खूब आ गया था। उसकी बोल चाल में माधुर्य था और थी वह मीठी सरलता जिसे सुनकर चाहे कोई उसे गंवारू अवश्य समझ बैठे परन्तु उससे फिर दुबारा मिलने, बोलने, बात

करने और संपर्क में आने की इच्छा बनी रहती थी ।

राजा साहब की इस कोठी में आचार्य जी का परिवार कुशलतापूर्वक आ गया। उसके ठीक सामने ठाकुर राजबहादुर सिंह की कोठी थी और वह कोठी की छत पर चढ़े यह दृश्य देख रहे थे। पहले उन्हें पता नहीं था कि यह कोठी किसने मोल ली है।

ठाकुर साहब आचार्य किशनचन्द से परिचित थे, उनके परिवार से नहीं। इसीलिए बाल-बच्चों सहित आचार्यानी को कोठी के पार्क में घूमते देखकर भी ठाकुर साहब अभी तक यह समझने में असमर्थ थे कि यह किसका परिवार है।

इतने में सेठ गूदड़मल की व्यूक गाड़ी कोठी में जाती दिखाई दी। ठाकुर साहब समझे कि कोठी सेठ गूदड़मल ने खरीदी है परन्तु वह परिवार किसका था जो स्वच्छंदतापूर्वक कोठी में विहार कर रहा है, यह उनकी समझ में न आया ।

कार पोर्टिगों में रुकी। उसमें से आचार्य किशनचंद निकले जिन्हें देख कर ठाकुर साहब की आंखें खुली रह गईं। कुछ समझ न सके कि आखिर क्या माजरा है।

ठाकुर साहब के दिल में गहरी जलन हुई। वह संभल न सके और तुरन्त छत से नीचे उतर कर उन्होंने चपरासी को एक गिलास बर्फ का ठंडा पानी लाने के लिये कहा।

'गधों को ताज पहना दिया कांग्रेस ने। गधे-घोड़े सब एक ही डंडे से हांक दिये। गधे घोड़े क्या अब तो राज ही गधों का आ गया है। बड़ों का बड़प्पन समाप्त हो गया।' ठाकुर साहब ने अपने मन में कहा।

ठाकुर साहब इन्हीं विचारों में निमग्न थे कि उन्हें मंत्री संकटानंद आते दिखाइ दिये। मंत्री जी के हाथ में एक हाथीदांत की आबनूसी बेंत थी और सिर पर किश्तीनुमा कलफ लगी लाल टोपी। सिल्क का शानदार कुर्ता था और धोती के स्थान पर ढीला पायजामा। चप्पल सुफैद साबर की थी। आँखों पर बिना कमानी का चश्मा था, जिसका बीच का फ्रेम सुनहरी था। हाथ में हीरे की वह अंगूठी थी जिसे उन्होंने राजा साहब से खरीदा था।

मंत्री जी को आते देख कर ठाकुर साहब सिहर उठे। ठाकुर साहब ने मन में

सोचा कि अवश्य आज कुछ दाल में काला है जो मंत्री जी स्वयं चले आ रहे हैं।

मंत्री जी मस्तानी चाल में छड़ी घुमाते चले आ रहे थे। सीधे सामने बढ़कर कोठी के बरांडे में पहुंच गये और एक लम्बी-चौड़ी आराम कुर्सी पर पसरते हुए चपरासी से बोले, "ठाकुर साहब कहां हैं ?"

"सामने लॉन में घूम रहे हैं।" चपरासी ने कहा।

"ठाकुर साहब को बोलो कि मंत्री जी आये हैं।"

"बहुत अच्छा सरकार !" कह कर चपरासी चला गया और उसने जाकर ठाकुर साहब को सूचना दी।

ऊपर से मुस्कुराते हुए ठाकुर साहब मंत्री जी के सामने आकर जरा आंख तिरछी करते हुए व्यंग्यपूर्वक बोले, "आज इस गरीबखाने पर आने का मंत्री जी ने कैसे कष्ट किया ? किसी चपरासी को भेज देते तो बन्दा सर के बल खिदमत में हाजिर हो जाता।"

मंत्री जी व्यंग्य को शर्बत के घूंट के समान पीकर मुस्कुराते हुए याराने में आकर बेतकल्लुफी से बोले, "यार ठाकुर ! जरा कान में तो सुन आज तू भी कहेगा कि मंत्री क्या लाजवाब खबरें लाता है ?"

यह बात मंत्री जी ने इस अन्दाज से कही कि ठाकुर साहब के दिल का सब गुबार काफूर हो गया और उन्होंने पास को कुर्सी खिसकाते हुए पूछा, "आज क्या कोई नई बटेर फंसा कर लाये हो मंत्री जी ?"

"अपने पास पुराना कुछ नहीं रहता ठाकुर साहब ! हम तो नई दुनिया के पंछी हैं और तुम देखोगे कि हमारे जीवन का प्रत्येक दिन नया होगा।" गम्भीरता के साथ मंत्री जी बोले।

ठाकुर साहब रसिक व्यक्ति थे। नारी के रूप की तो कल्पना मात्र से ही उनके हृदय में गुदगुदी उठने लगती थी। ठाकुर साहब ने जीवन में रूप के ही दर्शन किये थे, रूप को ही परखा था, रूप का ही सौदा किया था, रूप को ही धोखा दिया था और धोखा खाया भी रूप से ही था। परन्तु फिर भी रूप उनके लिए वह मदिरा थी कि जिसका प्याला दिखा कर उन्हें शिकारी चाहे जहां तक ले जाकर जाल में फंसा सकता था।

मंत्री जी कभी मुस्कुराते थे और कभी गंभीर हो जाते थ। कुछ देर इधर-उधर की बातें करते रहे और फिर खड़े होकर ठाकुर साहब से बोले,

"ठाकुर साहब ! कुछ पास-पड़ौस का भी पता रहता है । आचार्य किशनचन्द ने आपके सामने वाली कोठी खरीदी है ।"

"आचार्य किशनचन्द ने !" आश्चर्य से आंखें फाड़कर ठाकुर साहब बोले और उनके तमाम बदन में एक सिहरन सी दौड़ गई । फिर धीरे से संभलकर कहा, "आपको गलती लग रही है शायद मंत्री जी ? कोठी गूदड़मल ने खरीद कर रहने को इन्हें दे दी होगी ।"

"संकटानन्द कभी गलती नहीं करता ठाकुर साहब !" सीना उभार कर गर्व के साथ मंत्री जी बोले ।

मंत्री जी ने जेब से बनारसी पान की सोने की डिबिया निकाली । डिबिया से एक बीड़ा ठाकुर साहब की ओर बढ़ा कर दूसरा अपने हाथ में लेते हुए दूसरी जेब से सुर्ती की मखमली थैली निकाली और उसे भी तपाक से ठाकुर साहब को पेश किया ।

पान खाकर ठाकुर साहब बोले, "कांग्रेस सरकार में भी अब धांधले बाजी की हद है, मंत्री जी ! इन्ही महाराज को, मुझे अच्छी तरह याद है, रोटियां तक नसीब नही होती थी । अछूतों की पाठशाला मे २५) मासिक वेतन पर अछूत बच्चों को पढ़ाते थे और आज है यह महाराज जसवन्तसिंह की कोठी के मालिक । ऐसे ऐसे तो इस कोठी में दरवान नही रखे जाते थे । मूछों पर ताव देकर ठाकुर साहब बोले ।

"आप सही कहते हैं ठाकुर साहब ! महाराज जसवंतसिंह आपके यार रहे हैं । मैं क्या नहीं जानता हूं ? लेकिन आजकल इन आचार्य लोगों का बोल-बाला है । आने वाले संसद के चुनावों में इन लोगों ने बड़ी धांधले-बाजी मचानी है ठाकुर साहब ! मैं कहता हूँ कि आप हैं कहां ? मैं कांग्रेसियों की धांधली का खंडन करने पर पूरी तरह तुला हूं ।"

समय काफ़ी हो चुका था । अन्धकार छाया जा रहा था । मंत्री जी बोले, "इस बार मुझे देखना है कि कौन-कौन मेरे सामने आते हैं, बड़े-बड़ों के छक्के नहीं छुड़ा दिए तो मुझे भी कौन कहता है !"

ठाकुर साहब का समय हो चुका था । बोतल की रंगीन परी कांच की मेज पर जार में उतर आई थी । छोटे छोटे दो फूलदार गिलास उसके दोनों ओर करीने से सजा कर नौकर ने लगा दिये ।

मंत्री जी किसी धुन में घूम रहे थे कि उधर ठाकुर साहब जाकर मेज पर जम गये और दो बोतलों की गर्दन आपस में मिलाते हुए जार में पलट कर काकटेल बनाकर बोले, "यार मंत्री संकटानंद ! छोड़ अब इन चुनाव-उनाव के झमेलों को। जो होगा देखा जायगा। इस समय शराब उड़ने दे।"

मंत्री जी कुछ सिटपिटाये परंतु तुरंत अपने को साधते हुए बोले, "ठाकुर साहब ! मैंने पीना पिलाना बिल्कुल छोड़ दिया है, परंतु तुम्हारा कहना मैं नहीं टाल सकता। आज पिये लेता हूं। लेकिन इस बात की सूचना बेला के पास तक नहीं पहुंचनी चाहिए वरना बना बनाया खेल बिगड़ जायेगा।" कहते हुए गिलास हाथ में उठा लिया।

बेला का नाम सुनकर ठाकुर साहब को फुरहरी सी आ गई।

"क्यों यार मंत्री ! उस दिन तो बेला के सामने तुम बड़े आदर्शवादी बने हुए थे ? अब कहां है वह आदर्शवाद ?" ठाकुर साहब शराब का गिलास हाथ में लेकर बोले।

"तुम भी ठाकुर हो पूरे काठ के उल्लू ही।" मंत्री जी बोले, "बुद्धि के नाम पर तो तुम्हारे मस्तिष्क में भगवान् ने सिफ़र ही लगा दिया है। हमारा जो कुछ भी इस दुनिया में है वह सब यारों का है। क्या बेला को उस खूसट वकील के पंजे से निकाल कर मैं अपने लिये लाया हूं ? यह सब मैंने तुम्हारे ही लिए किया है।

मैं बाल ब्रह्मचारी हूं। एक वह ब्रह्मचारी है जो सरोज के पास रहकर ब्रह्मचर्य का ढोंग करता है और एक मैं हूं जिसके ब्रह्मचर्य के विषय में तुम अवसर मिलने पर बेला से पूछ सकते हो ! तुम से मैं झूठ नहीं बोल सकता।" कहकर गर्व के साथ अंगूरी का गिलास चढ़ाते हुए मंत्री जी ने अपना सीना तान दिया।

ठाकुर साहब ने सरूर भरे नेत्रों से जो इस समय मंत्री जी के मुंह पर देखा तो वास्तव में उन्हें वहां ब्रह्मचर्य का तेज दिखाई दिया।

ठाकुर साहब के भावुक हृदय में मंत्री जी के लिए फिर श्रद्धा लौट आई। "आप राजनीति में अभी बच्चे ही हैं ठाकुर साहब ! यह ठीक है कि आप संसद के सदस्य हैं परन्तु मैम्बरी और बात है और नीति का संचालन और बात है।" गर्व के साथ मंत्री जी बोले।

शराब पीते-पीते ठाकुर साहब के मस्तिष्क पर मंत्री जी ने फिर यह अंकित कर दिया कि ठाकुर साहब को मंत्री जी के यहां उसे अपना ही घर समझकर आना चाहिए। ठाकुर साहब ने अपने को सोलहों आने मंत्री जी के हाथों में सौंप दिया और मन में यह निश्चय किया कि अब चाहे जो भी हो, मंत्री जी का साथ नहीं छोड़ेंगे। भले ही कांग्रेस से इस्तीफा देकर सोशलिस्ट पार्टी को अपनाना पड़े।

पीने पिलाने के पश्चात मंत्री जी ठाकुर साहब की कार ले अपनी कोठी को लौटे।

: ३८ :

"यों तो आदान प्रदान के द्वारा ही सृष्टि आज तक चलती-चली आ रही है परंतु आज मैं तुमसे दूसरी बात कहने चला हूं।" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

"क्या है वह दूसरी बात, ज़रा सुनूं भी तो!" सरोज मुस्कुराती हुई बोली।

"मैंने कहा, हमें भी कोई व्यवसाय करना चाहिए। यह व्यवसाय का युग है! मैं आज तक जीवन में स्वप्न ही देखता रहा। सच समझो सरोज! कि मैंने जीवन मे रात पहली बार यह सोचा है कि मैं खाना कहां से खाता हूं? और जब यह विचार आया कि वह खाना तुम देती हो तो मैं तुम्हारे उपकार से दब गया।" ब्रह्मचारी ने सरलता पूर्वक कहा।

"क्या बच्चों वाली बातें कर रहे हो ब्रह्मचारी!" स्तम्भित-सी होकर सरोज ने कहा।

"मैं डर गया सरोज! सच कहता हूं, इतना भयभीत हुआ कि बस क्या कहूं? मैंने सोचा मैं कैसा ज्ञानी बनता हूं और आज तक मैं यह भी न सोच पाया कि मेरे इस शरीर की क्या-क्या समस्यायें है और उनका क्या हल है।"

'तब फिर आपने उन समस्याओं का क्या रूप देखा ब्रह्मचारी! क्या हल सोचा?" सरोज ने पूछा।

इस प्रकार ब्रह्मचारी कभी-कभी सरोज के सम्मुख शास्त्रों के ज्ञान की विवेचना किया करता था। जब जीवन के कठोर सत्य को खोज कर उसका तुलनात्मक रूप वह सरोज के सम्मुख रहता था तो सरोज तन्मय होकर अपनी सुध भूल जाती थी। ऐसे रूप में ब्रह्मचारी और सरोज का जीवन इस दुनिया के ऊपर होकर चल रहा था। आज स्वप्न में प्रथम बार ब्रह्मचारी ने इसका अनुभव किया और उसी प्रेरणा से सजग होकर वह इस समय सरोज के सम्मुख अपनी विचार धारा प्रस्तुत कर रहा था और सरोज अपनी सुधि भूली हुई ब्रह्मचारी के मुख पर नयन बिछाए उसके अंदर से निकलने वाले वाक्यों को सुनने के लिए तरस रही थी।

"म इसे विशेष बात समझता हूं सरोज! जो व्यक्ति जीवन के विषय में

भी अनभिज्ञ है, वह विश्व में स्थिर कैसे रह सकता है ?" ब्रह्मचारी ने कहा।

"मैं उत्तर देती हूं।" सरोज बोली। "तुमने एक दिन कहा था कि सहयोग से दुनिया चलती है।"

"गलत मत समझो सरोज ! मेरा अभिप्राय तुमसे नहीं है।"

"गलत समझने की बात नहीं ब्रह्मचारी ! मैं तुम्हें अभी और आगे ले चलूंगी। एक दिन तुमने बताया था कि स्त्री और पुरुष मिलकर एक बनते हैं। स्त्री पुरुष के बिना अधूरी है और पुरुष स्त्री के बिना। क्या हम दोनों मिलकर उस सिद्धांत की पूर्ति नहीं कर सकते ?" सरोज ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"तुम ठीक कह रही हो सरोज ! मेरी बुद्धि तुम्हारे विचारों का समर्थन करती है, परंतु मेरा हृदय साथ नहीं दे रहा।

वैसे बुद्धि हृदय पर सर्वदा बलवती रही है। इसमें समर्थन तुम्हारी ही बात का हो रहा है परंतु मन कहता है कि बंधन में न बंध ! यदि एक बार बंध गया तो फिर निस्तार नहीं। परंतु मैं जीवन में बिना किसी के सहारा दिये नहीं चल सकता। क्या तुम आश्वासन देती हो सरोज ! कि वह सहारा तुम मुझे देती रहोगी ?" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने पूछा।

सरोज इस समय बहुत सजग थी। हाथ में आये अवसर को खो देना उसने सीखा ही नहीं था। उसका हृदय खिल उठा। उसके जीवन की इच्छित वस्तु उसे मिल गई, उसे मिल गई मुंह मांगी मुराद।

सरोज ब्रह्मचारी के सामने वाली कुर्सी पर जा बैठी और आगे पड़ी मेज पर कोहनियां रख कर हथेलियों पर अपने मुंह को टिकाती हुई ब्रह्मचारी की आंखों में आंखें गड़ाकर बोली "ब्रह्मचारी ! मैं सहर्ष तुम्हारा भार जीवन भर अपने कंधों पर संभालने को तैयार हूं। मेरे साथ रहकर तुम्हारी कला को विकास मिलेगा।" कहकर सरोज लजा गई।

ब्रह्मचारी ने सरोज के मुख पर आशा भरे स्वप्न के समान देखा और मन में दृढ़ संकल्प किया कि वह अपनी कला को राष्ट्र के उत्थान के लिए प्रयुक्त करेगा। वह राष्ट्र को उठायेगा और मानव को मानव बनने का संदेश देगा। वह निःस्वार्थ भाव से बिना पद की इच्छा के मानव को ऊपर उठाने के लिए अपने जीवन को लगायेगा। सरोज उसकी शक्ति के रूप में साथ रहकर उसे बल देगी और वह मानव मात्र के काम आ सकेगा।

: ३९ :

सरोज का कला-निकेतन एक प्रकार से समाप्त सा हो चुका था। आये सप्ताह का मुजरा होना बन्द हो गया था। कुछ मनचले नौजवानों के वहां जाकर दिल बहलाने का रास्ता बंद हो गया। सरोज स्वयं विरक्त थी इस ओर से। आय का साधन समाप्त होने पर सरोज ने कोठी का पिछला भाग किराये पर दे दिया और उसी आय के अनुसार अपने दैनिक खर्चों को बांध लिया। जीवन चैन से चलने लगा, कोई परेशानी नहीं थी कोई चिंता नहीं।

ब्रह्मचारी बोला, "सरोज! हमें वकील साहब के यहां भी तो चलना है। वह तुम्हारी राह देख रहे होंगे।"

"हां चलना तो था।" चलने की तय्यारी करती हुई सरोज बोली।

ब्रह्मचारी खड़ा होकर बाग़ीचे में घूमने लगा। वह रह-रह कर सोच रहा था कि उसमें क्या परिवर्तन हो गया।

सरोज जब अन्दर से लौट कर आई और उसने ब्रह्मचारी को ब्रह्मचारी शब्द से सम्बोधित किया तो ब्रह्मचारी कुछ अनमना सा होकर बोला, "सरोज! अब मुझे तुम ब्रह्मचारी न कहो। किसी को बंधन में बांधकर स्वतन्त्र कहना उसका उपहास करना है। मैं तो आज आत्मसमर्पण कर चुका!" ब्रह्मचारी ने मुस्कुराते हुए सरोज का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा।

"आप मुझे लज्जित कर रहे हैं।" सतर्कता के साथ सरोज बोली और उसने अपना हाथ ढीला करके ब्रह्मचारी के हाथ में डाल दिया।

"लज्जित नहीं सरोज! मैं ही तुम्हें बताऊं कि तुम मुझे क्या कहा करो।" ब्रह्मचारी ने कहा।

"आपके बताए हुए शब्द से आपको सम्बोधित करने में तो वह शब्द सर्वदा के लिए आपकी धरोहर बन जायेगा। परन्तु सुनूं भी तो कि आप क्या कहलाना चाहते हैं?" लजाकर सरोज बोली।

"कुछ नहीं सरोज! बस तुम मुझे 'आनंद बाबू' कहा करो! मैं कभी आज तक जीवन में 'बाबू' नहीं कहलाया गया। मेरे पड़ौस में एक लड़की

रहती थी। वह मुझसे कहा करती थी कि मेरी माता मुझे बाबू कहकर पुकारती थी और कहा करती थी एक दिन मेरा बच्चा बाबू बनेगा। दुर्भाग्यवश जब मैं दो वर्ष का था तो पिताजी का स्वर्गवास हो गया। माता जी भी अधिक दिन साथ न दे सकीं। ताऊ जी ने मुझे एक दिन ताई जी के कहने में आकर मुझपर चोरी का झूठा दोष लगाकर घर से निकाल दिया।

जो हुआ, सो हुआ परंतु मैं 'बाबू' न कहला सका। अब मैं समझता हूं कि मेरे 'बाबू' बनने की कोई संभावना नहीं। इसीलिए अपनी इच्छा घर से बाहर पूर्ण होने की आशा न रहने पर भी उसकी पूर्ति घर में ही करने की बात सोच रहा हूं।"

"आनंद बाबू! बहुत ही मीठा नाम है!" और सरोज ने नेत्र बंद करके कई बार 'आनंद बाबू', 'आनंद बाबू' कहा। वह बोली, "आनंद बाबू! आज मन कहीं घूमने चलने का हो रहा है। आज का दिन हमारे जीवन की कल्पना का अंतिम दिन है। कल जीवन की दार्शनिकता से हटकर मुझे देखना होगा कि मेरे वे तत्व नष्ट तो नहीं हो गये जिनके बल पर मैं व्यवहार क्षेत्र में अपने को कुशल मानती रही हूं।"

ब्रह्मचारी का ध्यान इस ओर नहीं था। सरोज की फ़िटन सामने गई और दोनों उस पर सवार होकर बारह खम्भा रोड की ओर होते हुए माल रोड से आकर बेला रोड पर निकल गये। बेला रोड से श्रीराम लेन में पहुंचे तो वकील साहब बाहर बरांडे में आराम कुर्सी डाले बैठे इनकी प्रतीक्षा कर रहे थे।

फ़िटन मकान के सम्मुख रुकी तो वकील साहब सरोज के स्वागत के लिए खड़े हो गये। अब वकील साहब करीब-करीब स्वस्थ हो गये थे। भली प्रकार चलने-फिरने लगे थे।

"आपकी ही राह देख रहा था।" वकील साहब ने कहा। "अभी-अभी स्वामी ज्ञानानंद गये हैं। उनका स्वभाव बहुत बदल गया है अब।"

"सच!" आश्चर्य प्रकट करते हुए सरोज बोली।

"सच कह रहा हूं सरोज! बड़ा ज्ञानी आदमी है। क्या कहने हैं स्वामी ज्ञानानंद के? उन्होंने कहा है सरोज! कि धर्म में बल है तो वह मंत्री संकटानंद और धूर्त ठाकुर राजबहादुर के फंदे से बेला को मुक्त करा कर रहेंगे।" सरलता पूर्वक वकील साहब बोले।

"बहुत सुन्दर, बहुत सुन्दर!" ब्रह्मचारी ने कहा।

"स्वामी जी ने मुझे पूरा आश्वासन दिया है ब्रह्मचारी!" वकील साहब बोले।

"आप इन्हें अब ब्रह्मचारी न कहें वकील साहब!" सरोज बोली।

"यह क्या कह रही हो सरोज!" आश्चर्य चकित होकर वकील साहब ने पूछा।

सरोज लजाई सी चुप रही। ब्रह्मचारी कह उठा, "कोई विशेष बात नहीं। मुझे ब्रह्मचारी शब्द कुछ रुचिकर प्रतीत नहीं होता। आप मुझे 'आनंद बाबू' कह लिया करें।"

वकील साहब की पुरानी आंखें उन्हें धोखा न दे सकीं। इस सूचना से उनको शांति न मिली। उनके रसिक हृदय को थोड़ी ठेस लगी। वह थोड़े विचलित से हो उठे परन्तु मुंह से एक शब्द भी न निकला।

सरोज अचानक कुर्सी से खड़ी होती हुई बोली, "आनंद बाबू! चलिए चलें। आज रात्रि को आठ बजे आचार्य किशन चंद से भी तो भेंट करनी है।"

"मैं तो भूल ही गया था सरोज! वास्तव में वह बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है।" ब्रह्मचारी ने सरलतापूर्वक कहा और वे भी खड़े हो गये।

"सरोज! मुझे इस आपत्तिकाल में जब तुमने सहारा देकर स्वस्थ किया है तो मुझे भूल न जाना।" चलते समय आंखों में आंसू भर कर वकील साहब बोले।

वकील साहब की दीनता पर सरोज को तरस आ गया और वह उन्हें सहारा देकर बोली, "आप बैठ जाइये वकील साहब! मैं आपको भूल नहीं सकती। यदि आप प्रयत्न करेंगे तो बेला आपको मिल जायेगी। स्वामी ज्ञानानंद ने आश्वासन दिया है। कोई संदेह की बात नहीं। मैं जब जो कुछ भी आपके लिए कर सकूंगी निःस्वार्थ भाव से करूंगी और आप यह सच जानिये कि जब बेला की अदालत में यदि मुझे आपकी वकालत करनी होगी तो मैं उसकी कोई फीस आप से चार्ज नहीं करूंगी।" मुस्कुराते हुए सरोज बोली।

वकील साहब के देखते-ही-देखते फिटन चल पड़ी और जब फिटन काफी दूर निकल गई तो पहाड़ी चाय लेकर आया।

सरोज को आज जीवन का स्वर्ग प्राप्त था और वह अपनी कला की सब से

सफल अभिनेत्री आज ही सिद्ध हो सकी थी। गोधूली का समय था, आकाश में सफेद बादल ढलते हुए सूर्य का प्रकाश पाकर स्वर्णिम हो उठे थे। आकाश में पक्षी बड़ी तेजी के साथ अपने घोंसलों की तरफ पंख फैलाये उड़ानें ले रहे थे। वृक्षों की खरकोड़लों से पक्षियों के बच्चे अपने माता-पिता के आने की आशा में झांक रहे थे। मन्द-मन्द पवन के सुकुमार झोंके कभी-कभी कुछ बल पाकर तरंगित हो उठते थे।

सूर्य का प्रकाश लुप्त होता जा रहा था। दूर की वस्तु काली छाया मात्र रह गयी थी। फिटन बेला रोड पर पहुंची तो सरोज बोली, "आनंद बाबू! अभी से कोठी चल कर क्या करेंगे? चलें कुछ देर कुदसिया घाट के उन पानी के अंदर जाने वाले चबूतरों में से किसी पर बैठ कर बातें करें। आज मेरा मन न जाने क्यों तुम से कुछ बातें करने का हो रहा है।"

"जैसी तुम्हारी इच्छा!" ब्रह्मचारी ने कहा।

आकाश में अंधकार छा गया था और घाट पर पानी के अन्दर जाने वाले एक चबूतरे से दूसरे चबूतरे की वस्तु केवल काले चिन्हों के अतिरिक्त और कुछ नहीं रह गये थे। फिटन से उतर कर दोनों एक घाट के अन्दर से होते हुए चबूतरे पर पहुंच गये। ब्रह्मचारी ने जेब से रूमाल निकाल कर सीमेंट के फर्श को झाड़ा और फिर दोनों उस पर बैठ गये।

जमना में पानी बहुत अधिक था। बरसात प्रारम्भ हो चुकी थी। इसलिए पानी ऊपर की सीढ़ी से दो सीढ़ी छोड़ कर बह रहा था। ब्रह्मचारी ने मुस्कुराते हुए कहा, "सरोज! देख रही हो इस यमुना को। जानती हो यह कहां जा रही है?"

"कहां जा रही है यह?" ब्रह्मचारी के मुख पर नेत्र गड़ा कर सरोज ने पूछा।

"यह जा रही है अपने प्रियतम से मिलने। जानती हो इसका प्रियतम कौन है?" ब्रह्मचारी बोला।

"समुद्र।" सरोज के दो अधर सम्पुटों से यह शब्द निकला।

"समुद्र ही सरिता का प्रियतम है सरोज! उसी के हृदय में जाकर यह समा जायेगी। क्या तुम भी इसी प्रकार मेरे हृदय में समा सकती हो?" कहते हुए ब्रह्मचारी का मुख बहुत गम्भीर हो गया।

"आनंद बाबू! सरिता का समुद्र में समाना सरिता पर निर्भर नहीं

करता। वह तो समुद्र की उदारता और विशालता का एक रूप है। यदि सरिता को समुद्र में समाना ही न हो तो वह समुद्र की ओर बहे ही भला क्यों ?" सरलतापूर्वक सरोज बोली।

"यह बात नहीं है सरोज ! समुद्र तो अपना हृदय फैलाये सरिता का स्वागत करने को सर्वदा तय्यार रहता है परन्तु यदि सरिता आती आती मार्ग में सूख जाये तब ?" ब्रह्मचारी बोला।

सरोज एक क्षण चुप रही, परन्तु तुरन्त ही उसका स्वप्न भंग हो गया। वह सजग होकर बोली, "तब क्या, आनन्द बाबू ! सागर को चाहिए कि वह विक्षुब्ध हो उठे, बादलों के बवंडर उठा डाले, मूसलाधार वर्षा करे और सूखती हुई सरिता की मूर्छना को खोकर उसे जीवन दान दे। सरिता तब सागर के चरणों तक अवश्य पहुँच सकेगी।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि उत्तरदायित्व हर प्रकार से तुमने सागर के ही सिर पर थोप दिया सरोज ! परंतु इतना न भूल जाना कि यदि सागर ही सूखने लगेगा तो उसे रस कौन देगा ?" ब्रह्मचारी बोला।

"केवल रस नहीं आनंद बाबू ! सरिता अपने प्राणों से भर देगी सागर के सूखते हुए हृदय को। सरिता रस की स्रोत है। वह केवल सागर से ही रस लेकर सागर को रस प्रदान नहीं करती बल्कि उसके अन्दर अपना भी रस होता है। सरिता उस रस से सागर को कभी सूखने नहीं देगी।" और इतना कहकर सरोज का हृदय जमना की धार की तरह तरंगित हो उठा।

ब्रह्मचारी भी आज बहुत प्रसन्न था। उसने सरोज में अपने काव्य की कला का रूप देखा, अपनी कविता की आत्मा पाई। उसे अपनी भावना की प्रेरणा मिली। वहाँ जीवन की अनुभूतियों का साक्षातकार करने का बल था। सरोज का आश्रय पाकर ब्रह्मचारी ने सोचा कि वह सरोज में भर कर अपनी जन-हित-कारिणी कला का प्रदर्शन करने में सफल हो सकेगा।

सरोज की कोठी पर रहकर ब्रह्मचारी ने जीवन का अध्ययन किया। जीवन को जीवन के रूप में और मानव को मानव के रूप में परखा। मानव-हित की भावना को ही लेकर बिहार पीड़ितों की सहायतार्थ ब्रह्मचारी ने नाटक अभिनीत किया। अब वह जीवन में दृढ़ संकल्प कर चुका था कि अपने जीवन को कला की प्रेरणा देकर मानव-हित के लिए जुटा देगा। सरोज

उसके महान् कार्य में उसका साथ देगी।

सरोज और ब्रह्मचारी में इसी प्रकार की बातें हो रही थीं कि पास वाले दूसरे सीमेन्ट के चबूतरे पर उन्हें एक व्यक्ति बैठा दिखाई दिया। रात्रि के अंधकार में उसे पहचानना कठिन था परंतु उसके मुंह की बड़बड़ाहट स्पष्ट सुनाई दे रही थी। सरोज को 'बेला' शब्द सुनाई दिया और वह ब्रह्मचारी का हाथपकड़ कर धीरे से बोली, "सुन रहे हैं आप।"

"क्या ?" ब्रह्मचारी ने पूछा।

"यदि मेरे कान धोखा नहीं दे रहे हैं तो यह सामने वाले चबूतरे पर बैठे स्वामी ज्ञानानंद बड़बड़ा रहे हैं।" सरोज बोली।

"स्वामी ज्ञानानंद !" ब्रह्मचारी ने पूछा।

"हाँ ! ध्यानपूर्वक सुनिये यह क्या कहते हैं।"

आवाज आ रही थी—'मैं इस बार अपने समस्त बुद्धि-बल और आत्म-बल को धर्म की रक्षा में लगा दूंगा। वर्त्तमान युग में धर्म को राजनीति से पृथक रखकर नहीं चला जा सकता। महात्मा गाँधी ने यही पाखंड रच कर भारत की जनता को धोखा दिया। मैं किसी को धोखा नहीं दे सका इसीलिए मुझे स्वयं धोखा खाना पड़ा। मंत्री संकटानंद जैसे निपट मूर्ख मुझे अंधकार में रखकर अपना उल्लू सीधा करके चले गये। मेरे अस्त्रों का उसने अपने उत्थान के लिए प्रयोग किया।

परंतु मैंने भी राजनीति के ग्रंथों को चटनी बना कर घोटा है। मैंने भी राजनीति के रहस्य को परखा और समझा है। आज का मानव नारी का दास बन चुका है। उस पर सत्य का प्रभाव नहीं होता, धर्म का प्रभाव नहीं होता, त्याग का प्रभाव नहीं होता, विद्या का प्रभाव नहीं होता, उस पर प्रभाव होता है नारी का। यदि नारी ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है तो मैं भी नारी ही को लेकर इसके विपक्ष में अपना प्रमाण प्रस्तुत करूंगा।

बेला को वापस लाकर वकील साहब के सामने खड़ा कर दूंगा और दुनिया को दिखा दूंगा कि जिसका तुम धार्मिक रुढ़िवाद कह कर मज़ाक उड़ा रहे हो वास्तव में वही जीवन का सत्य है, वही धर्म का सत्य है।' और इतना कहकर उनके मुंह से 'हिंदू कोड-बिल' नाम निकल गया और वह किड़किड़ा कर दाँत चबाते हुए बोले, "इस बिल ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता का सर्वनाश

कर दिया। नारी की आब मोती के समान होती है। यह बिल नारी को पत्थर का टुकड़ा बना कर छोड़ देगा। यह सभ्यता का पतन है, विनाश की दिशा है। इससे नारी के उत्थान का मार्ग अवरुद्ध होगा।'

इतना कहकर वह व्यक्ति खड़ा हो गया और जमना को हाथ जोड़ कर बोला, "माता ! मुझे बल दो, मुझे धैर्य दो, मुझे तेज दो कि जिससे मैं बेला के ऊपर छा जाऊं और उसे उस धूर्त के पंजे से मुक्ति दिला सकूं।"

इतना कहकर वह व्यक्ति छाया की भांति हिला और फिर पीछे की ओर चल कर अंधकार में विलीन हो गया।

"सरोज ! देखी तुमने स्वामी जी के जीवन की दृढ़ प्रतिज्ञा।" ब्रह्मचारी बोला।

"देखी !" गंभीरतापूर्वक सरोज बोली, "परंतु इनके जीवन का लक्ष्य भी आपने सुना ?" मुस्कुराती हुई सरोज बोली।

"यही स्वामी जी की सबसे बड़ी कमजोरी है परंतु आत्मबल इनमें इतना है कि कोई शक्ति इन्हें डिगा नहीं सकती, पथ से विचलित नहीं कर सकती।"

"परंतु वह पथ पथ भी तो हो। आज तो इनका कोई पथ ही नहीं है। मार्गविहीन पक्षी की तरह यह अनन्त आकाश में भटक रहे हैं। इनका भगवान ही बेली है, आनन्दबाबू ! मैं तो इन्हें आज भी उपहास की सामग्री समझती हूँ।" सरोज ने कहा।

समय काफी हो चुका था। ब्रह्मचारी ने सरोज का हाथ पकड़ कर उठाते हुए कहा, "बस जहाँ रम गईं, वहीं की हो रहो। आचार्य किशन चंद के आने का समय हो गया।"

सरोज खड़ी हो गई और दोनों जाकर फिटन पर बैठ गए।

: ४० :

आचार्य किशनचन्द चुनाव कमेटी के प्रधान मंत्री बने। इन्हीं की नीति पर कांग्रेस को आगामी चुनाव लड़ना था।

ठाकुर राजबहादुर सिंह से आचार्य किशनचंद की बहुत लगती थी, परंतु उनके कुछ गुण भी थे। ठाकुर राजबहादुर सिंह ने बिहार प्रांत में अपनी सब जायदाद अपने काश्तकारों में बांट कर वह प्रसिद्धि पाई कि उनके समक्ष वहां कोई समाजवादी या साम्यवादी चुनाव नहीं जीत सकता था। वहां के राज्य पदाधिकारियों पर ठाकुर सहाब का रौब था और कुछ उच्च पदाधिकारियों के साथ उनका याराना भी था।

ठाकुर साहब यार आदमी थे और जब वह अपने इलाके में पहुंच जाते थे तो जशन हुए बिना नहीं रहता था। गांव के आदमियों के लिए पृथ्वी पर स्वर्ग उतर आता था और रामराज्य की वह सुन्दर कल्पना वहां की जनता के हृदय में उतार देते थे कि वहां के रहने वाले अपनी लंगोटियां भी ठाकुर साहब पर न्यौछावर करने को उद्यत हो जाते थे।

ठाकुर साहब के इलाके उनका में एकछत्र राज्य था। कुछ साम्यवादियों ने एक बार गुलगपाड़ा करने का प्रयत्न किया था सो ठाकुर साहब ने उन्हें सख्ती के साथ जेल भिजवा दिया और उनके विरुद्ध वे प्रमाण और शहादतें प्रस्तुत कीं कि हाईकमांड की ओर से भी ठाकुर साहब को बधाई मिली।

अपने इलाके में शांति रखने के लिए वह आचार्य किशनचंद की ओर से भी बधाई के पात्र थे।

ठाकुर साहब के इन सभी गुणों के साथ-साथ उनमें वह गुण भी वर्तमान था जिसका महत्व आचार्य किशनचंद की दृष्टि में सबसे अधिक था।

ठाकुर साहब आजकल आचार्य किशनचंद से खिंचे-खिंचे रहते थे। प्रधान कारण यही था कि उन पर आचार्य के बढ़ते हुए प्रभाव की छाप पड़ चुकी थी और वह कुछ इनफीरियोरिटी कम्प्लैक्स से दब गये थे।

जब उनकी दृष्टि छत पर चढ़कर सामने वाली कोठी पर जाती थी तो

उसके लॉन में आचार्य किशनचंद के पास भारत के सभी विख्यात लीडरों और बड़ी-बड़ी हस्तियों का तांता लगा पाता था।

इसी समय ठाकुर साहब का ध्यान मंत्री संकटानंद के ऊपर गया। वह आचार्य किशनचंद से भी चार चन्दे आगे पाये। मंत्री संकटानंद की खोपड़ी की गहराई मापना तो मानो असीम को सीमित करना था।

ठाकुर साहब अधर पर लटक गये। एक ओर कांग्रेस का पुराना इतिहास और शासनसत्ता की सम्पूर्ण सुविधाओं को हाथ में लेकर आचार्य किशनचंद खड़े थे और दूसरी ओर समाजवाद का नारा लगाकर सिर पर रक्तवर्ण की टोपी दिये मंत्री संकटानंद विराजमान थे। अभी परसों आये थे कोठी पर मंत्री संकटानंद। क्या कुछ आश्वासन नहीं दिये उन्होंने। 'जनता कांग्रेस से विमुख हो चुकी है। वह कांग्रेस का साथ नहीं देगी' यह बात स्पष्ट शब्दों में मंत्री संकटानंद ने कही थी।

ज्यों ही ठाकुर राजबहादुर सिंह ने अपने नाजुक मस्तिष्क पर इस राजनीतिक उधेड़-बुन को तौलने का प्रयत्न किया त्यों ही उन्हें क्रोध आ गया और वह आग बबूला होकर बोले, 'कभी नहीं, कभी नहीं। किशनचंद के बच्चे को दम्भ हो गया है। मुझे इसका घमंड चकनाचूर करना है। देखता हूं मेरे इलाके से कैसे इस बार कांग्रेस जीतती है ?"

इतना कहकर ठाकुर साहब मूछों पर ताव दे ही रहे थे कि उन्हें सामने से कोठी के द्वार पर चमड़े की फाइल हाथ में दबाये आचार्य किशनचंद आते दिखाई दिये और उन्हें देखते ही ठाकुर साहब का क्रोध इस प्रकार ठंडा पड़ गया मानो दूध के उबाल पर पानी का छींटा लग गया हो।

आचार्य के पैरों में बम्बई की काफ़ लैदर की बढ़िया चप्पलें थीं और उनके ऊपर घुटने से चार इंच नीचे तक का घने बालों से छाया हुआ पैरों का हिस्सा खाली था। फिर धोती और धोती पर खद्दर का मोटा कुर्ता।

आचार्य किशनचंद की लम्बाई भगवान ने उस सांचे में ढाली थी कि भारत के खद्दर बुनने वाले जुलाहे, उनके नाप की धोती बुनने में असमर्थ थे। एक बार मेरठ खादी आश्रम को स्पेशल आर्डर देकर कुछ बहुत बड़े पने की धोतियां आचार्य जी ने बनवाई थीं परंतु वे इतनी भारी हो गईं कि उनका शरीर उन्हें संभाल ही न सका। वे धोतियां आचार्य जी के काम नहीं आईं

और उनकी धर्मपत्नी को ही काट-काट कर उनके पेटीकोट बनाने पड़े। तब से मंत्री जी ऊंची धोती बांधते हैं। आचार्य किशनचंद जी का मुंह चपटा अवश्य था परंतु नाक तोते जैसी थी। सिर के बाल कुछ काले और कुछ सफेद थे, परंतु माथा इतना झूंगा था कि कभी-कभी स्वयं आचार्य जी को भी उस पर क्रोध आ जाता था।

झूंगे माथे को लेकर आचार्य किशनचंद अक्सर अपने भाग्य को कोसा करते थे, परंतु जब से उनकी धर्मपत्नी के माथे के बाल उड़ने लगे थे और खोपड़ी पर भाग्य नक्षत्र चमकने लगा था तब से वह इन माथे पर फैले बालों की ओर से उदासीन हो गये थे।

सिर पर किश्तीनुमा टोपी वह इतनी नीची लगाते थे कि माथे के सभी बाल उसकी नोक के नीचे दब जाते थे। लम्बी नाक होने से आंखों के चश्मे को इतनी सहूलियत थी कि कमानी टूटने पर भी वह अटका रहता था। आचार्य जी का बदन इतना लम्बा होते हुये भी चाल बिल्कुल सीधी थी। क्या मजाल कि कहीं पर कमर में कोई खम हो।

आचार्य जी को देखकर ठाकुर साहब आगे बढ़ गये और बड़े तपाक के साथ उन्हें बैठक में लाये। अन्दर जाकर दोनों दो सोफ़ों पर बैठ गये। ठाकुर साहब ने आपसी बातों में इस बात का आभास भी न दिया कि उन्हें इस बात का तनिक भी ज्ञान है कि आचार्य किशनचंद सामनेवाली कोठी में आ गये हैं।

आचार्य जी को ही खुलना पड़ा और वह मुस्कुराते हुए बोले, "ठाकुर साहब! अब मैं आपका पड़ोसी हो गया हूं।"

"मेरे पड़ौसी!" आश्चर्य प्रकट करते हुए ठाकुर साहब ने कहा।

"सामने वाली कोठी में।" आचार्य जी बोले।

"क्या राजा जी वाली कोठी आपने ही खरीदी है?" ठाकुर साहब बोले।

"हां, हां। मुझे ही राजकुमार इसे बेच कर बम्बई चले गये।" आचार्य जी बोले।

"तब तो हमारा आपका रात-दिन का साथ हो गया। बहुत खूब! यह बहुत अच्छा किया आपने।" ठाकुर साहब ने कहा।

"ठाकुर साहब! आप जानते ही हैं कि अपने बस का तो कुछ था नहीं।

अपने जीवन में तो जन-हित के पचड़े ही इतने लगे हुए हैं कि उनसे ही अवकाश नहीं मिलता। हमारे गृहस्थ की कर्णधार तो हमारी पत्नी ही है। उसकी योग्यता का क्या वर्णन करूं आपसे ठाकुर साहब! कि बस अवर्णनीय है वह देवि। वास्तव में वह देवि है ठाकुर साहब!" भावुकता में आकर आचार्य किशनचंद जी कहते जा रहे थे। "क्या प्रखर बुद्धि दी है भगवान ने उसे और बस गजब की सहनशीलता है। मैं तो स्वप्न में भी नहीं अनुमान लगा सकता था कि वह व्यापार में भी इतनी कुशल हो सकती है।"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं?" ठाकुर साहब ने मूछों पर ताव देते हुए कहा। "जब हम जैसे व्यक्ति, जिनकी पीढ़ी दर पीढ़ी ने कभी व्यापार की शक्ल नहीं देखी, आज इस प्रगति के युग में व्यापार कर सकते हैं और पांच लाख रुपया कमा सकते हैं तो भला फिर आपकी धर्म पत्नी इस कार्य को क्यों नहीं कर सकती? वह तो जन्म से ही व्यापार बुद्धि लेकर आई है। आचार्य किशनचंद जी! अधिक और कम लाभ तो परिस्थितियों पर निर्भर करता है परन्तु एक पैसे के चने के दाने बेचना भी उतना ही महत्व रखता है जितना एक मोटर कार बेचना।" यह बात ठाकुर साहब ने बहुत गम्भीरतापूर्वक कही थी। उनकी भाव भंगी से यह प्रतीत होता था कि मानो उनकी श्रद्धा आचार्य किशनचंद जी की पत्नी में जागरूक होती जा रही है।

आचार्य जी की पत्नी वैश्य कन्या थीं जिनके पिता गांव में भुने हुए चने, मुर-मुरे, गुड़ के सेव, मूंगफली, कुछ बिसाती का सामान और कुछ पंसारी का सामान बेचते थे। सौदा बेचना वह खूब जानती थीं और इसीलिए अब जब कि वह इस कोठी में आ रही थी तो उन्होंने घर के सब डिब्बे, शास्त्री जी के पुराने अखबार और बेकार फाइलों के कागज, बच्चों की फटी हुई जूतियां, फटे-पुराने वस्त्र इत्यादि सब बेचकर दाम खड़े कर लिए थे।

ठाकुर साहब से इस प्रकार अपनी पत्नी के गुणों की स्वाभाविक प्रशंसा सुनकर आचार्य किशन चंद का बुझा हुआ सा हृदय खिल उठा। वह आज कुछ-कुछ खिन्न मन से होकर यहां आए थे परंतु इस समय उनके मुख पर प्रसन्नता के वह चिन्ह वर्तमान थे कि जिनसे शरीर के अन्दर बढ़ने वाले खून का पता चलता है। आचार्य किशन चंद जी तो सोफे पर संवर कर पालथी लगाते हुए पीछे तकिए पर कमर लगा कर बैठ गए और फिर चश्मा उतार कर बीच की

शीशे वाली गोल मेज पर रखते हुए बोले, "ठाकुर साहब ! कल बड़ी ही मजेदार बात रही ।" आचार्य जी इधर-उधर की बातें करते हुए मतलब की बात पर आ गये ।

"क्या बात ?" ठाकुर साहब ने पूछा ।

"कल चुनाव कमेटी में आपको लेकर बहस छिड़ गई । मैंने सब को आड़े हाथों लिया । मजा आ गया । मैंने कहा बिहार प्रांत में ठाकुर साहब की टक्कर का व्यक्ति चुनाव लड़ने को नही मिलेगा और आखिर सबको मानना पड़ा ।"

"शाबाश ! आचार्य जी शाबाश ! खूब कहा आपने ।" ठाकुर साहब कुर्सी पर से उछल पड़े और उन्होंने आगे बढ़ कर प्रेम-भाव से आचार्य जी की कोली भर ली ।

"ठाकुर साहब ! आपके लिए तो मैं जान लड़ा देता । आप जानते हैं कि मैं योग्य आदमियों का भूखा हूं ।"

यह कहकर आचार्य किशनचंद ने ठाकुर साहब पर वह जादू कर दिया कि उनके मन से मंत्री संकटानंद का भूत काफूर हो गया ।

आचार्य किशनचंद ने ठाकुर साहब के मुख पर भेदपूर्ण दृष्टि से देखा और उनकी मुखमुद्रा को परख कर भांप लिया कि जो जादू उन्होंने ठाकुर साहब पर चलाया, वह ठीक कार्य कर गया ।

"अच्छा ठाकुर साहब ! अब आज्ञा दीजिए । मैं यही सूचना देने आया था । आज बंगाल प्रांत के झंझट निपटाने हैं ।" खड़े होते हुए हाथ जोड़ कर आचार्य जी बोले ।

"भगवान करे आप अपने इस महान कार्य में सफल हों । हम तो कांग्रेस के पुराने सेवक हैं । कभी नाम की इच्छा से कांग्रेस में नहीं आये ।" कहकर ठाकुर साहब ने विदा दी ।

"तभी तो वहां की जनता आपके नाम की माला जपती है ठाकुर साहब!" कहकर आचार्य जी चले गये, परंतु ठाकुर साहब कल्पना के झूले पर न जाने कितनी देर तक बरांडे में खड़े उसी प्रकार झूलते रहे ।

: ४१ :

बेला की दशा इस समय उस अभिनेत्री जैसी हो रही थी जिसे दिल्ली से कोई बम्बई का प्रोड्यूसर हीरोइन बनाने का आश्वासन देकर ले गया हो और बम्बई लेजाकर फाइनेन्स एक्सट्रैक्ट करने के साधन स्वरूप उसका प्रयोग करके अपनी कार्यसिद्धि से संतुष्ट होकर चुप हो गया हो। बेला अब कभी-कभी मंत्री जी पर झुंझलाती भी थी परंतु ऊपर से मुस्कुराती ही रहती थी।

मंत्री संकटानंद ने बड़े-बड़े राजपदाधिकारियों से मैत्री संबंध स्थापित कर लिये। गुप्त भेंटें होने लगीं। गुप्त-दावतें दी गईं और उन दावतों में बेला उनका स्वागत करती थी।

मंत्री जी का प्रभाव दिन प्रति दिन व्यक्त और अव्यक्त रूप से बढ़ता जा रहा था। अन्दर से वह राजपदाधिकारियों से मित्रता रखते थे और ऊपर से उनका विरोध करते थे। सभाओं में, सोसायटियों में, जलसों में, आंदोलनों में, हड़तालों में उन्हें खुली गालियां फटकारते थे, उनके नाम खुले पत्र बंटवाते थे, शहर में पोस्टर लगवाते थे, इश्तहार तकसीम कराते थे, सभी कुछ करते थे।

बड़ी-बड़ी ट्रेड यूनियनों में मंत्री जी की सलाह के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता था। रेलवे, डाक-तार, मिलों वाले सभी मंत्री जी को पूछते थे। मंत्री जी का गर्जन सुनकर जनता के रोंगटे खड़े हो जाते थे। छोटे से मुंह से जब बड़ी-बड़ी बातें निकलती थीं तो उनके प्रशंसक कह उठते थे "वाह ! क्या कह डाला मंत्री जी ने ! मानो बन्दूक की नली से तोप का गोला निकल पड़ा।"

मंत्री जी का पत्र छपने लगा। पत्र-संचालन के लिए मंत्री जी ने संचालिका के पद पर मिस कर्नाटिकी की नियुक्ति की। बेला चाहती थी कि वह पत्र की मैनेजर बने और इसी महत्वाकांक्षा को लेकर वह अपना घर छोड़कर आई थी।

अब बेला ने अनुभव किया कि मंत्री जी के पास रहकर उसके जीवन का विकास नहीं हो सकता। उसे ठाकुर राजबहादुर सिंह जैसे योग्य और ख्याति-प्राप्त व्यक्ति की अवहेलना करने पर खेद हुआ।

आज बेला का मन उदास था। वह रह-रह कर अपनी मूर्खता पर पश्चाताप कर रही थी। यदि वह न चाहती तो सेठ गूदड़मल का दस लाख रुपया कभी मंत्री संकटानंद के हाथ नहीं लगता। मंत्री संकटानंद को समझने में बेला नितांत असमर्थ थी।

बेला ने सरोज के गाने रेडियो पर कई बार सुने थे, उसे वे बहुत प्रिय थे। आज उसकी इच्छा हुई कि वह सरोज के यहां जाकर उससे मिले।

मंत्री जी कहीं बाहर किसी काम से गये थे और वह यों ही उठकर घूमती हुई फाटक से निकल कर सामने सरोज की कोठी में घुस गई। उसके पैर अपने आप उसे अन्दर ले गये। बेला पोर्टिगो में पहुंच गई, परंतु वहां पर कोई भी नहीं था। बरांडे में घंटी लगी थी। बेला की ऊंगली उस घंटी पर पड़ी।

सामने का द्वार खुला और सरोज एक विशेष आकर्षक वेशभूषा में मुस्कुराती हुई उसके सामने खड़ी थी। सरोज बोली, "बेला!"

"हां मैं ही हूं सरोज!" धीरे से बेला ने कहा।

"फिर खड़ी क्यों हो? अन्दर आओ। मुझे इस वेश में देख कर तुम सोच रही होगी कि मैं क्या तमाशा बनी हुई हूं। इस वेश में मैं हर समय नहीं रहती हूं। आनंद बाबू रिहर्सल करा रहे हैं।"

"आनंद बाबू" बेला ने आश्चर्य से पूछा, "आनंद बाबू कौन हैं?"

"बड़ी भोली हो। जानो कुछ जानती ही नहीं।" मुस्कुराकर आंखें घुमाते हुए सरोज बेला को उसके दोनों कंधों से पकड़कर अन्दर ले जाते हुए बोली।

अंदर लेजाकर ब्रह्मचारी के सम्मुख बेला को खड़ी करते हुए कहा, "यह हैं आनंद बाबू! पहचान लो।"

बेला चुप हो गई परंतु ब्रह्मचारी मुस्कुराकर बोला, "इन्हें तुम नाहक परेशान कर रही हो सरोज! इनके लिए मुझे पहचानना कठिन है परंतु मैं इन्हें पहचान सकता हूं।"

"क्या कारण है इसका?" बेला ने पूछा।

"कारण आज इतना ही जान लो कि तुम किसी को भूलने की क्षमता अपने में रखती हो और मैं भूलना चाहते हुए भी किसी को नहीं भूल सकता।

आज तुम्हारा मन कुछ खिन्न प्रतीत होता है। सरोज ! इन्हें अपना वही मधुर संगीत सुनाओ जिसमें भूलने वाले को प्रेमी उलाहना देता हुआ भी प्रेमाकुल होकर गद्‌गद् हो उठता है।"

इतना कहकर ब्रह्मचारी ने सितार अपने हाथों में संभाल लिया।

सरोज के कंठस्वर से कमरा गूंज उठा और वहां के वायुमण्डल का अणु-अणु रसमय हो गया। बेला नेत्र बन्द करके इस मधुर संगीत को इतनी तन्मयता के साथ सुन रही थी कि वह अपनी सुधबुध खो बैठी।

जब संगीत बन्द हुआ तो बेला के नेत्र खुले और वह पहले से भी अधिक व्याकुल होकर बोली, "सरोज ! तुमने यह क्या किया ? तुम्हारे संगीत ने तो मुझे और भी व्याकुल बना दिया।"

"इस संगीत से तुम्हारी भावनाओं का विकास हुआ है बेला !" ब्रह्मचारी ने गम्भीरता पूर्वक कहा ! "तुम्हारे हृदय की वेदना आज इतनी गहरी हो चुकी है कि उसके पास तक केवल कला की मधुर लहरियां ही पहुंच सकती हैं। तुम्हारी आज की बीमारी का उपचार सरोज के अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता।"

ब्रह्मचारी के शब्दों से बेला के हृदय को शांति मिल रही थी। प्यासे चातक की जलन बुझाने वाले स्वाति नक्षत्र-बिन्दु बेला को ब्रह्मचारी के गहन गम्भीर शब्दों में से झरते प्रतीत हो रहे थे। वह धीरे से बोली, "कहो ब्रह्मचारी ! चुप क्यों हो गये ? तुमने मेरी बीमारी की परख की है। मैं आज वास्तव में बीमार हूं। मेरे मन, मेरे हृदय और मस्तिष्क की अस्वस्थता बराबर बढ़ती जा रही है।"

"तुम्हारा अनुभव ठीक है बेला ! तुम्हारे भोले मन पर झूठी प्रगति की उस गहरी कूटनीति का प्रभाव पड़ा है जिसके स्वार्थ में लिप्त होकर बुद्धि उस दशा को प्राप्त हो गई है जिसे भ्रम कहते हैं। इसे तुम बुद्धि का वह महाविकास कह सकती हो जहां बुद्धि का पहला विकास भी लुप्त हो जाता है।" गम्भीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

बेला ब्रह्मचारी के शब्दों से प्रभावित होती जा रही थी। बेला के नेत्र ब्रह्मचारी के मुख पर गड़ गये। ब्रह्मचारी के मुख पर स्निग्ध मुस्कान थी। बेला के हृदय की बढ़ती हुई भूख को ब्रह्मचारी ने परखा और वह स्वाभाविक

सरलता से बोला, "बेला ! यदि तुम अपने जीवन को एक दम किसी गहरी खंदक में नहीं धकेल देना चाहती हो तो गम्भीरता से काम लो। तुम्हारे जीवन का पतंग आज बहुत ढील खा चुका है। यदि एक दम डोर को कस कर खींचना चाहोगी तो रील टूट जायेगी और फिर·····"

"और फिर····" बेला ने भयभीत होकर पूछा।

"डरो नहीं बेला ! सरोज तुम्हें तुम्हारे आपत्ति-काल में हर प्रकार का सहयोग देगी। मैं सरोज की ओर से तुम्हें विश्वास दिलाता हूं।" ब्रह्मचारी ने कहा।

बेला ने सरोज के मुख पर आशा भरी दृष्टि से देखा। और सरोज बेला का हाथ पकड़कर उठाती हुई उसे अपने साथ कोठी के सामने वाले बगीचे में ले गई।

ब्रह्मचारी अकेला बैठा सोचता रहा कि यह संसार वास्तव में एक विचित्र नाटकशाला है, जिसमें हर व्यक्ति अभिनय करता है। कभी वह अभिनय में सरल स्वाभाविक गति से होता है और कभी उसमें बनावट आ जाती है। जब अभिनय सरल स्वाभाविक गति के साथ अभिनीत होता है तो उसके अभिनय में जीवन की व्याख्या प्रस्फुटित हो उठती है और जब वह बनावट के साथ जीवन के रंगमंच पर उतरता है तो उसका अभिनय ही उसका उपहास करने लगता है। उस समय वह मूर्ति दर्शकों के लिए हास्य की सामग्री बन जाती है और मनोरंजन का जीवन में उदय होता है। बेला इस समय जो अभिनय कर रही है उसमें उसके हृदय की वास्तविक गति का चित्र सामने आ जाता है। बेला के सरल मन पर मंत्री जी ने कितनी कुशलता से डाका मारा, इस रहस्य की हल्की-सी कसक बेला अनुभव कर पाई है।

इसी समय आचार्य किशनचन्द आ पधारे। ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश ने खड़े होकर स्वागत किया। आचार्य जी सोफे पर बैठ कर बोले, "कहो ब्रह्मचारी क्या प्रगति है आपकी योजना में ?"

"मेरी योजना तय्यार है आचार्य जी ! जितनी उसे सुविधा मिलती जायेगी उतनी ही वह आगे बढ़ेगी।" दृढ़तापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"सुविधा में अब क्या कमी है ब्रह्मचारी ? हमने सरकार की ओर से आपके लिए पिछत्तर लाख रुपया मंजूर करा दिया है। वह रुपया आपको अपनी

योजनाओं का व्यापक स्वरूप जनता के सामने प्रस्तुत करने के लिये दिया गया है। आप सुन्दर और ज्ञानप्रद नाटक जनता के सम्मुख रखें। सरकार जनता के लिए क्या कर रही है यह भी उनमें दिखायें। आल इन्डिया रेडियो भी यही महत्वपूर्ण कार्य करता है। जनता का मनोरंजन हो, उसके सामने योजनाएं जायें और फिर सरकार की सफल नीति का समर्थन करते हुए जनता से अपील की जाय कि वह अपना भविष्य आंख मीच कर ऐसी प्रजापालक सरकार के हाथों में सौंप दे।"

ब्रह्मचारी ने आचार्य जी का व्याख्यान सुना और सोचा कि देखो यह आचार्य कितना मूर्ख है जो मुझ जैसे व्यक्ति को जिसका निर्वाह सूखी रोटी और एक लंगोटी से हो सकता है, उसे पिछत्तर लाख रुपये की झलक दिखा कर चकाचौंध कर देना चाहता है।

परंतु कुछ उत्तर न दिया ब्रह्मचारी ने। वह सतर्कता से मुरकुराकर बोला, "आचार्य जी ! मैं जिस योजना का निर्माण कर रहा हूं उसके दो अंग है, एक व्यापारिक और दूसरा कलात्मक। कलात्मक अंग का संचालन मैं कर रहा हूं और व्यावसायिक अंग का सरोज। पिछत्तर लाख रुपया इसके लिए सरकार ने मंजूर किया है उसके विषय में सरोज जाने परतु मुझे जहां तक पता है वह यह है कि सेठ गूदड़मल जी को कोई बिजली का विचित्र स्टेज बनाने का ठेका सरकार ने दिया है। इसके अतिरिक्त मुझे कुछ पता नहीं।"

"ठीक है, ठीक है ब्रह्मचारी ! बिल्कुल ठीक।" अपनी शुतुरमुर्ग जैसी गर्दन हिलाकर आचार्य जी बोले। "सरकारी कामों का इसी प्रकार ठेका दिया जाता है। वह ठेका आपकी ही योजना को सफल बनाने के लिए दिया गया है।" और इतना कहकर आचार्य जी अपने पीले-पीले खींच भरे दांत जबाड़े समेत होठों से बाहर निकाल कर हंस दिये।

ब्रह्मचारी गंभीर होकर बोला, "मेरी योजना में कहीं भी कांग्रेस या किसी सरकार की तारीफ़ करना नहीं होगा। मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में यह सहन नहीं कर सकता कि मेरी योजना पर कोई इस प्रकार का भार लादा जाये कि जिससे मेरी कला कुंठित होकर जनता की दृष्टि में दोषी ठहराई जाये।" इतना कहकर ब्रह्मचारी ने अपनी कमर पीछे तकिए से लगा ली।

"ठीक है, ठीक है ब्रह्मचारी ! ठीक है। मेरा रोम-रोम तुम्हारे कथन का समर्थन कर रहा है।" ऊपर से मुस्कराकर आचार्य जी बोले।

आचार्य किशनचन्द ने सोचा देखो तो यह धूर्त्त कहीं का आज कैसा आदर्शवादी बन कर बैठा है। दो सौ चूहे खाकर बिलैया हज करने जा रही है। वेश्या-पुत्री के साथ उसके घर में रात-दिन रहता है। भांड बन कर उसके साथ नाचता-कूदता है और बातें फटकारता है सांख्य और उपनिषदों की। आचार्य जी का मत था कि ब्रह्मचारी तथा सरोज केवल बिजली का स्टेज पाकर ही बहुत कृतज्ञ होंगे, फूले नहीं समायेंगे। परंतु बात उल्टी ही निकली। आचार्य जी का पूरा समय आजकल आगामी चुनाव की योजनाओं के बनाने में चला जाता था। वह तो १० लाख रुपया अपने हिस्से का लेकर संतुष्ट हो गए थे। उन्हें वास्तव में यह भी पता नहीं था कि स्टेज बनाने में क्या व्यय होता है। पहले उनका विचार था कि वह सरकार से १ करोड़ रुपया इधर खिसका सकेंगे परन्तु केवल ७५ लाख ही खिसकाने में वह समर्थ हो सके। इसलिए उन्हें भय था कि कहीं सेठ गूदड़मल जी को पहले ही इस काम में हानि न हो। फिर सेठ जी उनसे कई बार खोल-खोल कर कह भी चुके थे कि वह केवल अपने और आचार्य जी के मान के लिए इस कार्य को कर रहे हैं वरना इसमें केवल हानि ही हानि है। फिर भला वह किस मुंह से अब सेठ जी से कहें कि दो चार लाख रुपया देकर ब्रह्मचारी का भी मुंह फूंकना होगा वरना सब भंडा फूट जायगा। यदि एक बार सरोज और ब्रह्मचारी ने काम करने से मना कर दिया तो समझो कि बस पूरी तरह से इज्जत किरकिरी हो जाएगी।

ब्रह्मचारी की बात सुनकर आचार्य जी को पसीना आ गया और ब्रह्मचारी भी ताड़ गया कि दाल में कुछ काला है। वह मुस्कराकर बोला, "इसमें परेशानी की क्या बात है आचार्य जी ! हम लोग तो राष्ट्र के सेवक हैं और जो कुछ भी करेंगे वह राष्ट्र की भलाई के ही लिए करेंगे। कांग्रेस ने आज तक कोई कार्य राष्ट्र को धोखा देने के लिए नहीं किया..."

"हाँ हाँ ब्रह्मचारी जी ! यही तो मैं कहना चाहता था आपसे कि कांग्रेस ही जनता की प्रतिनिधि संस्था है। कांग्रेस ने जनता का मार्ग प्रदर्शन किया है।" खांसकर गला साफ करते हुए आचार्य जी ने कहा और पूछा,

"सरोज कहां है ?"

"कह नहीं सकता किधर चली गई है। परंतु उनका मिलने का समय प्रातः काल होगा। जब से मैंने अपनी योजना प्रारम्भ की है तब से उनके मिलने का समय केवल प्रातः काल दस बजे तक ही रहता है।" ब्रह्मचारी ने कहा।

"और संध्या को ?" आचार्य जी ने पूछा।

"संध्या को वह किसी से नहीं मिलतीं।" ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया।

आचार्य किशन चन्द ने यह बात जेब से फाउन्टेनपेन निकाल कर अपनी डायरी में नोट कर ली और चल दिये। ब्रह्मचारी ने आदर भाव से उन्हें बिदा किया।

: ४२ :

बेला वह यंत्र था जिसे संचालित करने के लिए मंत्री जी को अपना समय लगाना होता था। जब तक मंत्री जी के पास समय था, वह उस यंत्र का प्रयोग करते रहे। आज मंत्री जी के पास इतना अवकाश नहीं कि वह ऐसे यंत्र से काम लें। उन्हें आज आटोमैटिक यंत्र की आवश्यकता थी। मिस कर्नाटिकी ने उन्हें आश्वासन दिया कि जो कार्य उसके सुपर्द होगा उसमें आद्योपांत कहीं भी मंत्री जी को परेशान नहीं होना पड़ेगा।

मिस कर्नाटिकी की प्रतिभा को देखकर एल्प्स होटल में एक दिन मंत्री जी दंग रह गये थे कि जब वह एक ही टेबिल पर बैठी एक अमरीकन, एक रूसी और एक जर्मन सज्जन को बराबर उनकी बातों का इस प्रकार उत्तर दे रही थी कि तीनों को हर बार मात खा जानी होती थी। कभी वह रूसी भाषा में बोलती थी, कभी अंगरेजी में और कभी जर्मन में।

उसी दिन मिस कर्नाटिकी से मंत्री जी की प्रथम भेंट हुई। जब रेस्ट्रां से बाहर निकलते समय मंत्री जी की हाथीदांत की बेंत मिस कर्नाटिकी की सेंडिल में उलझ कर टूट गई और इस पर मिस कर्नाटिकी ने रुक कर मुस्कान भरे स्वर में कहा, "आ एम रियली वेरी सारी बाबू !"

"नाट बाबू ! सेठ साहब," उत्तर में मुस्कुराते हुए मंत्री जी ने कहा और बेंत के दोनों भागों को हाथ में लेकर बोले, "लाजवाब चीज थी मिस साहब !"

इस पर मिस कर्नाटिकी मुस्कुरा कर रुकती हुई बोली, "यह आप हमारी तारीफ़ कर रहे हैं !" और नेत्रों की भाषा में मिस कर्नाटिकी ने और भी न जाने क्या कह डाला।

मंत्री संकटानंद मिस कर्नाटिकी के मुख को इस प्रकार देख रहे थे जैसे हीरे का पारखी हीरे को देखता है।

"आप पारखी मालूम देते हैं सेठ साहब !" मिस कर्नाटिकी ने कहा।

अपनी तारीफ़ मिस कर्नाटिकी के मुंह से सुनकर मंत्री संकटानंद फूल कर कुप्पा हो गये।

सोचा यदि ऐसी सुयोग्य स्त्री मंत्री जी को अपने पत्र-संचालन के लिए मिल जाये तो वह क्या नहीं कर सकते ? आकाश को पृथ्वी पर पटक सकते हैं और पृथ्वी को आकाश में नचा सकते हैं।

मंत्री जी ने दृढ संकल्प कर लिया कि वह मिस कर्नाटिकी को अपने पत्र संचालन का भार सौंपेंगे।

और तीसरे दिन उसी रेस्ट्रां में भेंट होने पर उन्होंने यह कार्य सम्पन्न भी कर दिया।

बेला में कर्नाटिकी जैसी प्रतिभा नहीं। मार-कूट कर किसी को प्रतिभा सम्पन्न बनाने की नीति का अब मंत्री जी विरोध करने लगे थे। सरोज में यह स्वाभाविक प्रतिभा थी। उसकी प्रतिभा का सर्वनाश ब्रह्मचारी ने कर दिया।

मंत्री संकटानंद को ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश पर क्रोध आ गया। उनके नेत्रों में खून उतर आया और फिर अचानक मंत्री जी का दिल भारी हो उठा। वह अपने को संभाल न सके और मन में सोचा कि आखिर यह सब कुछ वह कर रहे हैं किसलिए ? हृदय की वेदना को हृदय में छुपा कर वह कब तक जीवित रह सकते हैं ? आखिर यह तूफ़ान कब तक दिल में छिपा रहेगा ? सरोज के सामने वाली कोठी पर अधिकार करके उसके पूर्णरूपेण स्वामी बन बैठने पर भी जब सरोज उनके पास नहीं आई तो मंत्री जी को जीवन में क्या सफलता मिली ?

यह ठीक था कि दिल्ली का बड़े से बड़ा आदमी आज मंत्री संकटानन्द की कोठी के चक्कर लगाता था परंतु सरोज कभी मंत्री संकटानन्द के पास नहीं आई।

बहुत दुखी होकर उन्होंने निश्चय किया कि आज वह स्वयं सरोज की कोठी पर चलेंगे। सरोज चाहे मंत्री जी को भुला दे परंतु मंत्री जी सरोज को नहीं भुला सकते।

सरोज की कोठी पर वह पहुंचे तो देखा सामने वाले लॉन में सरोज, ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश और वकील साहब बैठे बातें कर रहे थे। मंत्री जी वकील साहब को देखकर द्वार से ही लौट जाना चाहते थे परन्तु ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश की दृष्टि में उलझने के पश्चात् यों ही भाग जाना सम्भव नहीं था। मंत्री जी को सरोज और ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश ने सम्मान-

पूर्वक नमस्कार किया और वह सामने पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ गए।

मंत्री जी को शक्ल देखकर वकील साहब का पारा तेज हो गया। परंतु कुछ बोले नहीं। मंत्री संकटानन्द वकील साहब की ओर मुख करके बोले, "कहिए वकील साहब! अस्वस्थ से प्रतीत हो रहे हैं? क्या बीमार हो गये थे बीच में?"

"जी हां! बहुत अधिक।" ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश ने उत्तर दिया, "केवल ढांचा मात्र रह गया है वकील साहब का। और यह भी भला हो सरोज का कि जिसने वकील साहब की बीमारी में इनकी सेवा करके इन्हें प्राण-दान दिया।"

"सरोज ने!" आश्चर्य प्रकट करते हुए मंत्री संकटानन्द बोले।

"जी हां सरोज ने! संसार में सभी प्रकार के प्राणी होते हैं मंत्री जी! एक बिच्छू होता है जिसका डंक निरन्तर चलता ही रहता है और एक गाय होती है जो पैदा ही परमार्थ के लिए हुई है।" ब्रह्मचारी ने सरलतापूर्वक कहा।

वकील साहब के दुखी हृदय को ब्रह्मचारी का यह वाक्य सुनकर ऐसी सांत्वना मिली कि उनके सूखे मुख पर मुस्कान दौड़ गई और उनके होठों ने कहा "शाबाश ब्रह्मचारी! तुमने खूब चोट की इस पाजी पर।"

मंत्री जी के दिल पर ब्रह्मचारी के इस वाक्य ने तेजाब का काम किया। परन्तु ऊपर से मुस्कराकर बोले, "भगवान् की लीला अपरम्पार है ब्रह्मचारी! उसे कोई नहीं जान सकता। वह एक को सद्बुद्धि देता है तो दूसरे को कुबुद्धि। आपत्ति काल में वही सबका सहारा होता है। बेला वकील साहब को छोड़ गई तो क्या हुआ, भगवान ने समय पड़ने पर सरोज को इनकी सेवा-सुश्रुषा के लिए भेज दिया।"

ब्रह्मचारी खिलखिलाकर हंस पड़ा और फिर कुछ गम्भीर होकर बोला, "मंत्री जी! आप सच्चे कलाकार हैं। आज मैं आपके कुशल अभिनय की दाद दिये बिना न रहूंगा।"

"अभिनय!" आश्चर्य के साथ मंत्री संकटानन्द बोले। "मैंने जीवन में अभिनय कभी नहीं किया ब्रह्मचारी! तुम भूल कर रहे हो। वह मेरे जीवन की स्वाभाविक प्रेरणा होती है जिसे मैं जीवन में घटाता हूँ। तभी तो मैं निरं-

तर उन्नति करता जा रहा हूं।" गर्व के साथ मंत्री संकटानन्द ने अपना वक्ष-स्थल ऊपर को उभार लिया।

"यह आपका भ्रम है मंत्री जी!" सतर्क होकर मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी बोला, "मैं आपको बड़ा मानता हूं। आपकी प्रखर बुद्धि की दाद देता हूं। आपके चातुर्य का प्रशंसक हूं। परन्तु अभी-अभी जो आपने कहा कि आपको प्रेरणा मिलती है सो बात गलत है। प्रेरणा आपके जीवन में है ही नहीं, और रही बात उन्नति की सो उन्नति और अवनति की कोई परिभाषा भी तो हो। मैं पूछता हूं कि क्या किसी की स्त्री को बहका-फुसलाकर भगा लेजाना ही आपके जीवन की उन्नति है?"

"क्या कह रहे हो ब्रह्मचारी!" क्रोध में भरकर कुर्सी से उछलते हुए मंत्री जी बोले! "मिस सरोज! क्या मैं तुम्हारे यहां इस प्रकार अपना अपमान कराने आया हूं?" सरोज की तरफ मुंह करके मंत्री जी आंखें चढ़ाते हुए बोले।

सरोज कुछ बोलना ही चाहती थी कि ब्रह्मचारी बीच में बोल उठा "क्रोध मानव की सबसे बड़ी दुर्बलता है मंत्री जी! आज प्रथम बार आपके क्रोध का मैंने दर्शन किया। इसका अर्थ यह हुआ कि आज से पूर्व आप आज से ऊंचे धरातल पर थे। आप इस समय गिरावट की ओर बढ़ रहे हैं। क्रोध न कीजिए। संयम से काम लीजिए। वकील साहब की ओर ध्यान देकर देखिये। यह उस व्यक्ति पर भी क्रोध नहीं करना चाहते कि जिसने उनके इस वृद्ध-काल में उनसे उनके जीवन का अंतिम सहारा विश्वासघात करके छीन लिया। यदि आपके साथ कोई इस प्रकार विश्वासघात करे तो आपकी क्या दशा होगी?" गम्भीरतापूर्वक ब्रह्मचारी कह रहा था।

मंत्री संकटानंद ने मन में सोचा कि आज तो बुरे फंसे। मंत्री जी ने गूढ़ नीति से काम लेते हुए कहा, "ब्रह्मचारी! ये सब व्यर्थ की बातें हैं। मैं इस समय किसी विशेष कार्य से आया था। इन बातों के लिए कोई और समय नियत करलो, तब खुलकर बातें करेंगे।" और इतना कहकर वह धीरे से मुस्कुरा दिये।

ब्रह्मचारी समझ गया कि मंत्री जी कतरा रहे हैं इसलिए उन्होंने भी बात को आगे बढ़ाना पसंद नहीं किया और मुस्कुराते हुए बोले, "आज आप बहुत व्यस्त मालूम देते हैं।"

सरोज बोली, "चलिए अन्दर चलें! मैं आपसे मिलने की बहुत इच्छुक थी। आप तो सम्भवतः भूल ही गए हम लोगों को।"

"मुझे लज्जित करने का प्रयत्न कर रही हो सरोज ! मैं कार्याधिक्य के कारण न आ सका, तो क्या तुम भी दो कदम नहीं रख सकती थीं ?" मंत्री जी ने कहा।

"दो कदम !" आश्चर्य प्रकट करते हुए सरोज बोली।

"लो, तुम्हें मैंने बतलाया ही नहीं ? कैसी भूल हो गई है दिमाग से। काम ने मुझे आजकल इतना दबा लिया है कि अपनों की सुध लेना भूल जाता हूं। अकेले रहते-रहते मन ऊब चुका है सरोज !"

"मैं सोचता हूँ सरोज ! कि अब अकेले नहीं रहा जायगा।" गंभीरतापूर्वक सोफे पर बैठ कर मंत्री जी बोले।

"परन्तु आप तो अकेले नहीं हैं।" सरोज मुस्कुराते हुए बोली।

"यह तुमसे किसने कहा ? तुम्हें किसी ने धोखा दिया है। मैं बिल्कुल अकेला हूं। मेरा हृदय खाली है और मेरे मन तथा स्वप्नों में जिसका स्थान बन चुका है वह इस जीवन में उसी का रहेगा।"

"परन्तु दो क़दम वाली बात तो आपने बताई ही नहीं।" सरोज बात का रुख बदलकर बोली।

"तुम्हारे सामने वाली कोठी मैंने खरीद ली है सरोज ! इस बीच में मैंने एक बड़ा भारी व्यापार कर डाला था और उसमें मुझे पचास लाख का मुनाफा हुआ।" गर्व के साथ मंत्री जी बोले।

"पचास लाख !" बनावटी आश्चर्य प्रकट करती हुई सरोज बोली, "अरे, बाप रे बाप ! पचास लाख ! तब तो यों कहो मंत्री जी ! कि अब आप दूसरे सेठ गूदड़मल हो गये।"

"सेठ गूदड़मल !" घृणा सूचक मुंह बनाकर मंत्री जी बोले, "किस काठ के उल्लू का नाम ले रही हो सरोज ! मेरा और उसका क्या मुकाबिला ? बुद्धि के नाम पर उसके दिमाग में गोबर भरा है। कल ही मेरी जनरल मैनेजर ने मुझे इस बात की सूचना दी थी।" आंखें घुमाकर मंत्री जी बोले।

"आपकी जनरल मैनेजर ने !" आश्चर्य से सरोज ने पूछा। "यह जनरल मैनेजर कौन है ? तनिक जानूं भी तो।"

"क्या करोगी जानकर सरोज ! हमने एक दैनिक पत्र निकालने का आयोजन किया है। यह पत्र अपने ढंग का अकेला ही पत्र होगा। जनरल

मैनेजर को हमने इस कार्यालय के चलाने के लिए नियुक्त किया है। यह बड़ी योग्य स्त्री हैं। विभिन्न भाषाओं की ज्ञाता हैं। भारत के विभिन्न वर्गों का उन्हें ज्ञान है।"

मंत्री जी सरोज के सम्मुख तन्मयता के साथ मिस कर्नाटिकी की योग्यता का वर्णन करते करते भावुकता में उसके घुंघराले बालों, गुलाबी गालों, मस्तानी चाल और लोचदार कमर का भी वर्णन कर गये। "परन्तु सरोज ! ये सब गुण तुम्हारे गुणों के सम्मुख फीके हैं।" अंत में शरमाकर मंत्री जी ने कहा।

सरोज मुस्कुरा रही थी और मंत्री जी लजपा उतारकर आंखें मल रहे थे। तभी ठाकुर राजबहादुर अन्दर झांकते हुए बोले, "यदि कुछ प्राइवेट बातें न हो रही हों तो मैं भी अंदर आ जाऊं ?"

"आइए आइए !" मंत्री जी खड़े होते हुए बोले "आपके लिए क्या प्राइवेट ?"

मंत्री जी की बात पर ध्यान न देकर ठाकुर साहब सरोज से बोले, "मैंने कहा बधाई है।"

"किस बात की ?" मुस्कुराते हुए सरोज ने पूछा।

"कैसा भोली बनी हो सरोज ! मानो कुछ जानती ही नहीं।" ठाकुर साहब मूंछों पर ताव देकर बोले।

"वास्तव में सच ठाकुर साहब ! मुझे पता नहीं आप किस बात की बधाई दे रहे हैं ?" सरलतापूर्वक सरोज ने कहा।

इसी समय कमरे का पर्दा दुबारा उठा और आचार्य किशनचन्द तथा सेठ गूदड़मल बिना पूछे घुसते ही चले आये। सरोज की मेज पर पांच लाख रुपये की गड्डियां पटकते हुए बोले, "ये लीजिए मिस सरोज ! और एक बार सच्चे हृदय से कह डालिये कि वे लोग धूर्त्त हैं जो कहते हैं कि कांग्रेस-सरकार ने कलाकारों को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। प्रोत्साहन पाने के लिए कलाकार भी तो होने चाहिएं।"

पांच लाख की गड्डियां देखकर मंत्री संकटानन्द का दम खुश्क हो गया और इस सब झमेले में वह कब और किधर को निकल गये इस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।

: ४३ :

जिस दिन बेला का मन बहुत खिन्न था और वह सरोज की कोठी पर गई थी, उस दिन ज्ञानानंद ने उसे कोठी के द्वार से निकलते देखा था। स्वामी जी ने समझा कि वह उसी कोठी में रहती थी। आज संध्या को छः बजे स्वामी जी इस कोठी के सामने से गुज़रे तो देखा कि मंत्री संकटानंद वहां से निकल कर इधर-उधर बगलें झांकते हुए कुछ परेशानी में तेज़ी के साथ चले जा रहे हैं। जब मंत्री जी काफ़ी दूर निकल गये तो स्वामी जी ने सोचा कि बेला से मिलने का इससे सुन्दर और कोई अवसर नहीं मिल सकता और वह साहस करके कोठी में घुस गये।

स्वामी ज्ञानानंद सीधे पोर्टिगो में पहुंचे और उद्देश्य की पूर्ति में निमग्न बिना कुछ सोचे-समझे ही सामने की बैठक का पर्दा उठाकर अन्दर चले गये। परंतु वहां बेला नहीं थी।

ठाकुर राजबहादुरसिंह उनकी शक्ल देखकर बोले, "पधारिये स्वामी जी! यह कला का मंदिर है। मंदिर में सभी उपासक समभाव होकर आते हैं।"

"पधारिये, पधारिये।" आचार्य किशनचंद अपनी मोर जैसी टांगों पर हल्का-सा खम देकर सारस जैसी ग्रीवा को तिरछी करते हुए एक हाथ से नुकीली किश्तीनुमा टोपी संभाल कर बोले, "हम सब यहां कला-मंदिर में पूजा के लिए आये हैं। हम लोगों ने निश्चय किया है कि हम भारतीय कला को उच्चतम शिखर पर पहुंचाकर रहेंगे। सरकार इस कार्य में अपना पूर्ण सहयोग देगी।"

परंतु सेठ गूदड़मल की गर्दन झुकी थी। यह धीरे से आचार्य किशनचंद का हाथ पकड़ कर चुटकी भरते हुए बोले, "अच्छा सरोज! अब कल आयेंगे।" और धीरे से बाहर खिसक गये।

सरोज मौन थी और स्वामी ज्ञानानंद भी। इन्हें मौन देख कर ठाकुर साहब भी खड़े हो गये और नमस्कार करके चलते बने।

चलते समय बोले, "लीजिए स्वामी जी! हम भी चले। आप स्वामी

हैं इसी से जा रहे हैं। नहीं तो आपके अलावा यदि प्रधान मंत्री भी इस समय आये होते तो मैं हिलने वाला नहीं था।"

सब के चले जाने पर स्वामी ज्ञानानंद ने कहा, "क्या मुझ से भूल हुई है ?"

"आपसे कोई भूल नहीं हुई। मेरे घर आना भूल नहीं है। लेकिन आप बेला की खोज में इधर आ निकले यह अवश्य भूल है।" सरोज ने मुस्कुराते हुए कहा।

"परंतु तुम्हें यह कैसे मालूम है कि मैं बेला की खोज में हूं ?" स्वामी ज्ञानानंद ने गम्भीरतापूर्वक पूछा।

"आप वकील साहब से प्रण कर चुके हैं कि आप बेला को उन्हें वापस दिला कर ही दम लेंगे। इसलिए आपका इस सड़क पर इस कोठी में आना केवल बेला की खोज में ही हो सकता है।" सरलतापूर्वक मुस्कुराकर सरोज बोली।

स्वामी जी ने बहस नहीं की और वह सरोज की बातों से बहुत प्रभावित हुए।

सरोज मुस्कुराकर बोली, "स्वामी जी ! दुनिया बदल रही है। एक बाढ़ आगई है बस ऐसा समझ लीजिये। आप बांध लगा कर उस बाढ़ को रोकने का प्रयत्न कर रहे हैं। उस प्रवाह को चाहे आप गलत भले ही कहें परंतु उसकी शक्ति के सम्मुख आपको झुकना ही होगा। आप सत्य को असत्य कहकर अपने को कहां तक धोखा दे सकेंगे ?"

"परंतु पतन तो तुम इसे मानती हो सरोज !" गम्भीरतापूर्वक स्वामी जी ने पूछा।

"यदि आपको इस वेश्या-पुत्री के यहां बैठने में कुछ आपत्ति न हो तो बैठ जाइये क्योंकि विषय इतना सरल नहीं कि इस पर यों ही साधारणतया मत प्रकट कर दिया जाय।" सरोज बोली।

यह सुनते ही कि वह वेश्या-पुत्री के मकान पर खड़े हैं स्वामी ज्ञानानंद का शरीर पीपल के पत्ते की तरह कांप उठा। नेत्रों के सामने अंधकार छा गया। भांति-भांति के कल्प-विकल्पों ने मस्तिष्क को घेरकर बुरी तरह झंझोड़ डाला।

परंतु सामने खड़ी थी सरोज और उसका व्यक्तित्व स्वामी जी की आत्मा

को छू चुका था।

मस्तिष्क ने काम करना बन्द कर दिया। बुद्धि मंद हो गई! तब हृदय ने स्वामी जी के जीवन की पतवारों को अपने हाथों में संभाला और भावुकता की लहरों मे बहते हुए स्वामी जी धीरे-धीरे बोले, "सरोज! तुम वेश्या-पुत्री अवश्य हो, परंतु गुणवती हो। तुम्हारे जीवन में प्रकृति ने सौंदर्य का सृजन किया है। लोग चाहे कुछ भी कहें परंतु आज मैं तुम्हारे यहां अवश्य बैठकर तुम से चार बातें करूंगा।"

और इतना कह कर स्वामी जी बेंत की कुर्सी पर बैठ गये।

स्वामी जी ने बैठकर कमरे को चारों ओर से देखा। सामने कानस पर संगमरमर की शिव-मूर्ति नृत्य करती हुई रखी थी। उसके गले में फूल-माला पड़ी थी। पहले यह मूर्ति अकेली थी परंतु अब कहीं से ब्रह्मचारी ने लाकर उसके पास पार्वती की भी सुन्दर प्रतिमा स्थापित कर दी थी। धूपबत्ती जल रही थी और बीच में मेज पर पांच लाख रुपए के नोटों की गड्डियां पड़ी थीं।

"आप पतन की बात कर रहे थे स्वामी जी! पतन और उत्थान का निर्णय करना बहुत कठिन है। आज की बदली हुई परिस्थितियों में लंगोटी लगाकर कनॉट प्लेस पर घूमना मेरी दृष्टि मे उचित नहीं।"

"इसका अर्थ यह हुआ कि हम भारतीयता को इसलिए छोड़ दें कि कुछ भारतवासियों पर पाश्चात्य सभ्यता का रंग चढ़ चुका है। यह नहीं होगा। भारतीय सभ्यता, भारतीय संस्कृति और भारतीय रहन-सहन की जनता को प्रेरणा देने के लिए मैं अपना जीवन लगा दूंगा।" वह फिर कुछ ठहर कर बोले, "भारतीय संस्कृति के पवित्र वातावरण में अपने मस्तिष्क को रख कर विचार करो तो तुम्हें दिखाई देगा कि यह सब चमक-दमकयुक्त सुगन्धिपूर्ण प्रतीत होने वाला वातावरण दुर्गन्धपूर्ण है, कलुषित है और इसके अन्दर वह विष है जो जीवन के सरल स्वाभाविक रस को सोख कर एक दिन जीवन को खाली कर डालेगा।" इतना कह कर घुटी हुई खोपड़ी पर हाथ फेर कर फिर बोले, "अब रही बात बहुमत की, सो बहुमत को हम कोई विशेष महत्व नहीं दे सकते सरोज! आज संसार में जनतंत्र की धूम मची है। हम इसे मूर्खता समझते हैं। मत देने से पूर्व 'जन' के पास बुद्धि भी तो हो। संसार को संचालित करने वाली शक्ति बुद्धि है। तुमने अभी-अभी कनॉट प्लेस पर लंगोटी लगाने की बात जो

कही वह इसी बहुमत की भावना से प्रेरित होकर कही। सो उसको हम कोई विशेष महत्व नही देते । एक समय था जब भारत के कोने कोने में बुद्ध-धर्म छा गया था । राज्य ने उसे प्रोत्साहन दिया, बल दिया, साधन दिए और यहां तक कि राजा ने अपने पुत्र और अपनी पुत्री को भी भिक्षुक बनाकर देश-विदेशों में प्रचार के लिए भेज दिया । परंतु शंकराचार्य ने बुद्धि के बल से ही भारत के कोने-कोने से बुद्ध-धर्म को समूल खो दिया । भारत के विशाल सागर पर बुद्ध धर्म काई के समान छा गया था, उसे शंकराचार्य ने अपनी बुद्धि के प्रखर प्रहारों द्वारा चीर कर फेंक दिया । शंकराचार्य में बुद्धि का बल था, भारतीय संस्कृति का बल था, भारतीय आदर्शों की महानता थी और उस समय बुद्ध धर्म की प्रगति आधुनिक भौतिकवाद से कम नहीं थी । उसका विनाश हुआ और इसका भी विनाश होगा सरोज !" इतना कहकर उसका विचार जानने के लिए स्वामी जी ने सरोज की ओर देखा ।

"विनाश होगा इसमें कोई संदेह नहीं । जो कल था वह आज नही, जो आज है वह कल नहीं होगा । रूप निरंतर परिवर्तनशील है । बुद्ध-धर्म से पूर्व हिंदू धर्म क्या था, ब्राह्मण-ग्रन्थ जिस समय लिखे गए उस समय क्या था, आर्य ग्रन्थों के निर्माणकाल में क्या था, शंकराचार्य के पश्चात क्या हुआ और आज क्या है इसके रूप पर यदि दृष्टि डालें तो पता चलता है कि हिन्दू धर्म के इन विविध रूपों को पृथक-पृथक करके भी नामकरण किया जा सकता है। परंतु प्राचीन को कभी भी वर्तमान पर न तो स्थापित किया जा सका है और न किया ही जा सकेगा । पृथ्वी अपनी कीली पर सीधी ही घमती रहेगी, कभी भी उसकी चाल उल्टी नहीं होगी स्वामी जी ! और यह समझ लीजिए कि जिस दिन उलटी हो जाएगी उसी दिन प्रलय हो जाएगी । अब मैं आप से पूछती हूं कि क्या आप प्रलय करने के लिए बनारस से देहली पधारे हैं ?" और इतना कहकर सरोज धीरे से मुस्कुरा उठी ।

कितनी बांकी छटा थी सरोज की मुस्कान में कि उसे देखकर स्वामी जी का हृदय आनन्द विभोर हो उठा और उन्होंने सरोज को बनाने वाले के प्रति अपने हृदय में ही श्रद्धांजलि अर्पित कर डाली । स्वामी जी के मस्तिष्क पर इस समय हृदय की प्रधानता थी, स्वामी जी बातें करते-करते भावनाओं में बहते जा रहे थे । सरोज की सुन्दर और सौम्य मूर्ति का आकर्षण उन पर छाता चला

जा रहा था। भावावेश में उन्होंने अपने दुःखी हृदय की गाथा सरोज को सुना डाली। उन्होंने यह भी स्पष्ट रूप से कह डाला कि वास्तव में इस राजनीति के पचड़े में पड़कर उनकी अध्ययनशीलता उनसे खो गई, उनके जीवन की शांति जाती रही, उनकी बनारस वाली संस्कृत-पाठशाला के द्वार बंद हो गये, पाठशाला के विद्यार्थियों की पढ़ाई आधी रह जाने से उनके जीवन नष्ट हो गये और अन्त में देहली आकर उनका परम प्रिय शिष्य आनंदप्रकाश भी उन्हें धोखा दे गया।

आनन्दप्रकाश के धोखा दे जाने की बात स्वामी जी ने एक लम्बी सांस खींचकर कही और उनके शब्दों से उनके हृदय की गहरी टीस का आभास मिल रहा था।

स्वामी जी कथा सुना रहे थे तो सरोज भावना के समुद्र में गोते खा रही थी। सरोज मानो स्वप्न देख रही थी और उसके नेत्र बन्द थे।

इसी समय ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश अन्दर चला आया और इन दोनों को इस प्रकार बैठे देखकर आश्चर्य चकित रह गया।

"ब्रह्मचारी!" चकित होकर स्वामी जी बोले।

"जी स्वामी जी! आपका आश्रम से निकाला हुआ ब्रह्मचारी आज भी आपको उसी श्रद्धा की दृष्टि से देखता है।" ब्रह्मचारी ने कहा, "आज्ञा करें।"

स्वामी ज्ञानानंद ने भावावेश में आकर खड़े होते हुए ब्रह्मचारी को छाती से लगा लिया और प्रसन्नतापूर्वक बोले, "ब्रह्मचारी हम तुम्हारे सब कसूर क्षमा करते हैं।"

और ब्रह्मचारी ने स्वामी ज्ञानानंद के चरण छू लिये।

स्वामी ज्ञानानंद ने देखा कि ब्रह्मचारी के साथ सरोज भी उनके पैरों को छू रही थी।

: ४४ :

"मालकिन ! आप हमें बहुत प्यारी लगती है।" हाथों में छोटी छतरी लिए हुए मिस कर्नाटिकी बेला से बोली।

"परन्तु मुझे तुम अच्छी नहीं लगती मिस कर्नाटिकी।" त्यौरी चढ़ा कर बेला बोली।

"कोई बात नहीं, कोई बात नहीं !" मुस्कुराती हुई मिस कर्नाटिकी बोली, "आप फल हैं ! फल सबको अच्छा लगता है। और मेरा क्या है, मैं तो इठलाती हुई पवन हूं, कमरे के इस दरवाजे से आई और उस दरवाजे से निकल गई।"

"मैं तो नौकरानी हूं आपकी।" मुस्कुराती हुई मिस कर्नाटिकी फिर बोली। "यदि कोई त्रुटि हुई हो तो क्षमा करना।"

इतना कहकर मिस कर्नाटिकी मंत्री संकटानंद के ड्राइंग रूम में पहुंच गई। मंत्री जी इंतजार में बैठे थे। बोले, "बहुत देर करके आने लगी है मिस साहिबा ! एक-एक मिनट आजकल कीमती है।"

पत्रों का एक फाइल लेकर मंत्री जी ने मिस कर्नाटिकी को दिया।

मंत्री जी बोले, "मैं समझता हूं आज देहली के बाजार में गुलाब का इत्र नहीं मिलेगा मिस कर्नाटिकी !" कह कर मंत्री जी ने कर्नाटिकी की साड़ी का पल्ला अपनी नाक से लगा लिया।

"इत्र की सुगन्धि दूर से जितनी अच्छी आती है उतनी नाक में इत्र की बूंदे डालने से भी नहीं आती।" कर्नाटिकी ने कहा।

मंत्री जी तनिक सतर्क होकर पीछे हट गये और उन्होंने मन से अपने हृदय को फटकारा कि पाजी तूने अभी-अभी एक नौकर से मेरा अपमान करा दिया।

बेला का सम्बन्ध अब मंत्री जी की दृष्टि में घर से था, व्यापार और व्यवसाय से नहीं। नियमित रूप से उनका विवाह बेला से नहीं हुआ था। परन्तु आज के प्रगतिवादी युग में विवाह के ढकोसले की वह कोई आवश्यकता नहीं समझते। विवाह का प्रस्ताव भी आजतक कभी मंत्री जी बेला के सामने

रखने का साहस नहीं कर सके। परन्तु हृदय और मन से वह बेला को अपनी पत्नी मान चुके थे।

कहने को आज भी अवसर पड़ने पर वह बेला को पुत्री कहकर सम्बोधित करते थे और ठाकुर साहब को टरखाते-टरखाते उन्हें इसी प्रकार एक लम्बा अरसा हो गया था परन्तु उनका हृदय बेला पर न्यौछावर था।

बेला पर न्यौछावर होने की भी बात स्पष्ट ही थी क्योंकि बेला के अतिरिक्त और कोई मंत्री जी का अपने ऊपर हाथ भी नहीं पड़ने देता था।

सरोज को ब्रह्मचारी ने बर्गला लिया था।

जिस समय मंत्री जी और मिस कर्नाटिकी आपस में बातें करते तो अन्दर से चटखनी लगा लेते और शीशों पर उन्होंने कागज चिपकवा लिए थे।

आज बेला ने इस ओर ध्यान ही नही दिया। बेला का मन उदासीन था। बेला ने अपने जीवन का जो स्वप्न मानसिक पटल पर अंकित किया था वह धीरे-धीरे धुंधला पड़ने लगा। आज प्रथम बार उसने अपने मस्तिष्क पर थोड़ा सा जोर देकर सोचा कि वह कहाँ है? उसे लगा कि वह आकाश कुसुम की भांति आधार रहित अतल पर झूल रही है। चारों ओर से झकोरे खाती हुई तूफानी हवा आकर उससे टकराती है। कभी उसके पैर ऊपर और सिर नीचे को हो जाते हैं। चारों ओर दूर-दूर तक कोई आश्रय नहीं।

आदर्शवाद की चादर ओढ़कर अन्दर से काला कलूटा मंत्री संकटानन्द उसे डरवाना प्रेत सा प्रतीत हुआ।

बड़प्पन के चमत्कार में दूसरों की आंखों के अंदर मिर्चे झोंककर उसका सर्वस्व लूटने वाला ठाकुर राजबहादुर बेला को भूखे भेड़िए के समान दिखाई दिया। बेला का सुकुमार बदन कांप उठा और यदि वह इस समय अपने को किसी प्रकार संभाल कर ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश और सरोज की सुधि में न डुबा देती तो निश्चय ही उसके मुख से एक जोरदार चीख निकल पड़ती।

बेला बेचैन होकर कमरे में इधर-उधर घूमने लगी। इसी समय अन्दर से मिस कर्नाटिकी निकली और बेला को नमस्कार करके बोली, "मालकिन! हम पर क्यों क्रोध करती हो? हम तो आपकी सर्विस में हैं। यदि आप में ताकत है तो अपने मालिक को रोको। अगर आप उन्हें न रोक सकें तो हम से कहो कि हम सर्विस से इस्तीफा देकर चली जायें। हमें तो कहीं न कहीं नौकर

मिल ही आयेगी। यहाँ हजार रुपया मिलता है तो दूसरी जगह आठ सौ मिल जायगा। आठ सौ से कम पर हमने आज तक कहीं काम नहीं किया।"

बेला के नेत्र सजल हो आये और वह मिस कर्नाटिकी के कंधे पर धीरे से हाथ रख कर बोली, "तुम काम करो मिस कर्नाटिकी ! मैं तुम पर नाराज नहीं हूं।"

मिस कर्नाटिकी नमस्कार करके बिदा हुई और बेला भारी मन लिए कमरे से बाहर निकल कर बरांडे में चली आई। कुछ देर इधर-उधर घूमती रही। बुद्धि काम नहीं कर रही थी। मन हो आया कि चलूं सरोज के पास ही चल कर जरा दिल बहला आऊं और उसके पैर धीरे-धीरे उसे अनायास ही सरोज की कोठी में ले गये।

सरोज ने दूर से बेला को अपनी ओर आते देखा तो वह भी बेला की ओर बढ़ गई और उसके गले में हाथ डाल कर उसे अपनी बैठक में ले गई।

बैठक में ब्रह्मचारी बैठा इकतारे पर धीरे-धीरे गुनगुना रहा था।

मन मत कर भारी।
वेदना तेरे हृदय की रह न पायेगी,
एक दिन यह बन मधुर संगीत जायेगी,
जानता हूं मैं, मुझे तू क्या सुनायेगी,
रो चुकी कितनी, मुझे अब क्या रुलायेगी।
संभल संभल कर चल नारी !
मन मत कर भारी।

संगीत बन्द हुआ तो बेला नेत्र बन्द किये एक स्वप्निल संसार में विचर रही थी। गीत बन्द होते ही वह बोली, "गाये जाइए आनन्द बाबू ! गाना बन्द न कीजिये। आपकी मधुर संगीत लहरी मेरे दग्ध हृदय पर अमृत की वर्षा कर रही है।"

"बेला !" बेला की ओर मुंह करके ब्रह्मचारी बोला, "तुम कब आ गईं बेला !"

संगीत सुनकर बेला का हृदय कुछ हल्का हुआ। वह बोली, "आनन्द बाबू ! आप कलाकार हैं। कितना भारी मन लेकर मैं यहां आई थी और अब मुझे लग रहा है कि मानो मेरे रूखे जीवन में फिर से किसी ने रस का

श्रोत बहा दिया। मेरे जीवन-पुष्प की सूखी पंखुरियां एक बार फिर से हरी-भरी होकर अपने खोये हुए रंगों को दुबारा अपने में भर लेने के लिए उत्साहित हो उठीं।" बेला का मन इस समय बालक के जैसा सरल था।

ब्रह्मचारी बोला, "बेला! यह दुनिया है। इसमें कठिन समय मनुष्य पर आ ही जाते हैं, परन्तु आपत्ति में ही मनुष्य की परख होती है। आग पर तप कर ही सोना कुंदन बनता है। आपत्ति जीवन की सबसे सही कसौटी है।

आज जो बात मैं तुमसे कहने चला हूं, उसे ध्यानपूर्वक सुनना। विचलित न होना। हर व्यक्ति में कुछ गुण और कुछ कमज़ोरियां होती हैं। बुद्धिमान व्यक्ति उन कमजोरियों को उकसाकर उनसे अपना काम निकालते हैं।" ब्रह्मचारी ने सरलता पूर्वक कहा, "स्वामी ज्ञानानंद मेरे गुरु हैं।"

"आपके गुरु हैं, स्वामी ज्ञानानंद!" आश्चर्य के साथ बेला ने पूछा, "क्या आप उन्हें आज भी गुरु मानते हैं?"

"अवश्य मानता हूं बेला! और जब तक मेरे इस शरीर में प्राण रहेंगे उस समय तक मानता रहूंगा। मैंने जो कुछ उनसे सीखा है उसे अन्य कोई व्यक्ति नहीं सिखा सकता।"

बेला और सरोज सतर्कता पूर्वक सुन रही थीं। ब्रह्मचारी ने फिर कहना प्रारंभ किया, "स्वामी ज्ञानानंद की कमजोरी को मंत्री संकटानंद ने परखा और उससे लाभ उठाया। वकील साहब की कमजोरी को मंत्री संकटानंद ने परखा और उससे लाभ उठाया। ठाकुर राजबहादुर सिंह की कमज़ोरी को मंत्री जी ने परखा और उससे लाभ उठाया। सेठ गूदड़मल की कमज़ोरी को मंत्री जी ने परखा और उससे लाभ उठाया। अन्त में तुम्हारी कमज़ोरी को मंत्री जी ने परखा और उससे लाभ उठाया। सरोज का जीवन सतर्क रहा। इसके जीवन में भावुकता है अवश्य, परंतु वह बुद्धि के अंकुश द्वारा संचालित होती है। सरोज की कमज़ोरियों पर मंत्री संकटानंद ने प्रभाव डालने और उन्हें कुरेदने का प्रयत्न अवश्य किया। परंतु इसमें उन्हें सफलता न मिल सकी।"

ब्रह्मचारी फिर ज़रा ठहर कर बोला, "परंतु इस प्रकार दूसरों की कमज़ोरी से लाभ उठाकर ऊपर चढ़ना बहुत खोखला कार्यक्रम है बेला! मंत्री जी जिस सीढ़ी पर भी पैर रखते हैं वही सीढ़ी ऊपर की सीढ़ी पर पैर रखने पर पैर के नीचे से खिसक जाती है। आज तुमसे इतना ही

कहूंगा बेला। यदि यहां तक मुझसे तुम सहमत होगी तो मैं भविष्य का कुछ कार्य-क्रम तुम्हारे सामने प्रस्तुत करूंगा।"

बेला और सरोज ने जो व्याख्या ब्रह्मचारी के मुख से सुनी तो अपना-अपना गत जीवन उनके नेत्रों के सम्मुख नाच उठा। सब लोगों के जीवन का विश्लेषण कितनी चतुराई और बुद्धिमत्ता के साथ ब्रह्मचारी ने किया हुआ है इसका ज्ञान सरोज को आज प्रथम बार हो सका। उसका हृदय ब्रह्मचारी की योग्यता के सम्मुख झुक गया और बेला ने तो ब्रह्मचारी के चरणों में आत्मसमर्पण ही कर दिया।

अपने गत जीवन की रूप-रेखा को इस प्रकार लेकर आज बेला यहां से विदा हुई परंतु उसके हृदय में विश्वास था कि ब्रह्मचारी अब भविष्य में उसे चलने के लिए सही मार्ग सुझा सकेगा। अपनी कोठी को लौटती हुई बेला प्रसन्न थी और उसके पैर एक आशा और उमंग को लेकर उठ रहे थे।

: ४५ :

'जीवन एक अभिनय है'—बेला से ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश ने कहा, 'और जो व्यक्ति जितना सफल अभिनेता बन सकता है वह जीवन में उतना ही सफल है।' इस समय तक बेला जो कुछ कर रही थी वह उसकी दुर्बलताओं की प्रेरणा थी अथवा वह अंधविश्वास था परंतु अब वह जीवन में सजग होकर अभिनय करने चली थी और एक ऐसे कलाकार से उसने दीक्षा ली थी कि जो निस्वार्थ भाव से उसकी ओर प्रेरित हुआ था।

"देख रही हो बेला !" 'जन-मत' पत्र की एक प्रति हाथ में लिये हुए मंत्री संकटानंद बोले, "लो समझो ! यही कारण था मेरा स्वामी ज्ञानानंद को ठुकरा देने का। ये लोग ढोंगी हैं, स्वार्थी हैं, मतलबपरस्त हैं और इंद्रियों के दास हैं। ऊपर से भिगवां वस्त्र पहनकर जनता को धोखा देते हैं। मैं ऐसे पाखंडियों के साथ कैसे चल सकता था ?"

इतना कह कर पत्र की प्रति मंत्री जी ने बेला के हाथों में दे दी।

"प्रारंभ में जब मैं उनसे मिला था तो उनका रंग और था। परंतु ज्यों-ज्यों मैं उनके निकट सम्पर्क में आया त्यों-त्यों मेरा मन, मेरी आत्मा उनसे दूर हटती गई और एक दिन मैंने उन्हें हाथ जोड़ कर 'नमस्कार' कर लिया।

"मेरा जीवन जनता का जीवन है। मुझे हर समय जनता की समस्याओं में उलझा रहना पड़ता है। फिर मेरा इस पाखंड से कैसे काम चल सकता था ? आज तक स्वामी ज्ञानानंद के मेल-जोल को भर रहा हूं। उनके साथ रहने के कारण कांग्रेसी मुझे प्रतिक्रियावादी कहते हैं, कम्यूनिस्ट मुझे दोग़ला कह कर पुकारते हैं और सोशलिस्टों की बौछारों से तब मेरी जान बची जब मैंने सिर पर यह लाल टोपी लगाली है।"

'जनमत' मंत्री संकटानंद का दैनिक पत्र था, जिसमें सोशलिस्ट पार्टी का प्रोपेगेंडा बड़ी धूमधाम के साथ किया गया। एक ओर इस पत्र में हिंदू महासभा को फटकारें मिलीं और दूसरी ओर सरकार की कड़ी आलोचना की गई। कम्यूनिस्ट पार्टी को अभी मंत्री जी ने नहीं छुआ।

राजनीति में मंत्री संकटानंद अब बहुत दक्ष हो गये थे। स्वामी ज्ञानानंद को छोड़ कर कांग्रेस को अपनाया। वहां दाल गलती न देखी और उन्नति का कोई क्षेत्र दिखाई न दिया तो उससे त्याग-पत्र देकर समाजवादी दल के उच्चपदाधिकारी बन गये। दिल्ली के प्रधान राजनीतिज्ञों से उनकी मित्रता होने लगी।

आज 'जन-मत' की हैडलाइन थी 'वेश्या पुत्री सरोज के घर स्वामी ज्ञानानंद का स्वागत'। बेला ने पढ़ कर पूछा "क्या यह सच है मंत्री जी ?" साथ ही आश्चर्य प्रकट किया।

"विश्वस्त सूत्र से सूचना मिली है बेला ! तभी तो कर्नाटिकी ने इसे पत्र में प्रकाशित किया।" सीना उभार कर मंत्री जी बोले।

"तब तो आपने वास्तव में स्वामी जी का साथ छोड़ कर बहुत अच्छा किया। वरना इस समय उनके साथ आपकी भी बदनामी होती। उनका कुछ नहीं बिगड़ता, परंतु आपका सर्वस्व लुट जाता। जनता के सेवक की इस प्रकार बदनामी हो जाना उसके सर्वनाश का कारण बन जाती।" गंभीर बनकर बेला ने कहा।

बेला की बात सुनकर मंत्री जी का रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठा और वह प्रसन्नता में कुदककर बेला के पास बैठते हुए उसका हाथ दबा कर बोले, "तुमने कितनी योग्यता की बात कही बेला ! तुम्हारी योग्यता को केवल मैं ही परख सकता हूं।"

"पारखी ही रत्न को परखता है मंत्री जी !" बेला ने नारी चरित्र की मदिरा नयनों में भर कर हल्की मुस्कान के साथ इठलाते हुए कहा।

मंत्री जी के सम्मुख बेला इस प्रकार प्रथम बार इठलाई थी। पहले कभी मंत्री जी इस प्रकार एकांत में अपने प्रेम की झलक इस पर फेंकने का प्रयत्न भी करते थे तो बेला छुईमुई के वृक्ष की तरह कुम्हला जाती थी और मंत्री जी का बल खाता हुआ प्रेमोत्साह ठंडा पड़ जाता था। परंतु आज उसमें निखार आ गया। बेला के यौवन के सम्मुख जब मंत्री जी ने सरोज को रख कर देखा तो वह बेला की चरण-रज से भी उन्हें तुच्छ दिखाई दी।

बेला को मंत्री जी ने अपने उपकारों की छाया में रख कर देखा तो उन्होंने उसे नम्र और नतमस्तक पाया और दूसरी ओर जब उनकी दृष्टि सरोज पर गई तो उसमें उन्हें स्वार्थ की बू मिली, विश्वासघात की छाया

मिली। जब सरोज ने मंत्री जी के उपकारों को ठुकरा दिया तो मंत्री जी ही क्यों सरोज के लिए अपने हृदय में कोई स्थान रखें? संसार आदान-प्रदान पर चलता है। सरोज ने केवल आदान सीखा है, प्रदान नहीं।

"बेला! मेरा हृदय कह रहा है कि तुम विकास के उच्चतम शिखर पर पहुंच कर रहोगी। आज दिल्ली में जो मंत्री संकटानंद के नाम से परिचित है वह बेला को भी जानता है। मैं और तुम दो शरीर और एक प्राण हो चुके हैं।" स्वाभाविकता के साथ मंत्री जी ने कहा।

"सच!" आश्चर्य प्रकट करते हुए मंत्री जी के मुख पर अपने नेत्र बिछा कर उनके दोनों कंधों को पकड़ते हुए बेला बोली, "क्या आप सच कह रहे हैं? काठ के साथ लोहा भी पानी पर तैर जाता है मंत्री जी!"

मंत्री जी इस समय स्वप्न लोक में विचरण कर रहे थे। बेला जैसी सुकुमारी का उनके प्रति प्रेम-भाव और आकर्षण। कुछ देर मौन रहकर मंत्री जी बोले, "बेला! आज इतने दिन बाद अपने हृदय का रहस्य तुम पर खोल रहा हूं। तुम्हारे रूप और गुणों ने मुझे अपना दास बना लिया है।"

"ऐसा मत कहिए मंत्री जी!" बीच में ही सुन्दर अभिनय के साथ बेला बोली, "मैं आपकी दासी हूं। मैं क्या थी और मुझे आपने क्या बना दिया? मैं फूल ही सही, परंतु एक झाड़ी से तोड़ कर ताज में लगाने का तो श्रेय आपको ही है। पुष्प को तो सूखना ही था, वहां चार दिन झाड़ी पर लगा रह कर सूख जाता और यहां उसकी शोभा को दुनिया ने देख लिया।" गहरे व्यंग्य के साथ बेला बोली।

इसी समय सामने से मिस कर्नाटिकी आती दिखाई दी और मंत्री जी बेला से ज़रा हट कर बैठ गये! मिस कर्नाटिकी ने आते ही पहला प्रश्न किया, "मंत्री जी पढ़ा आज का पत्र! आज के पत्र में मैंने स्वामी ज्ञानानंद की खूब खबर ली है! पत्र की एक प्रति डाक द्वारा उनके पास भिजवा दी है। देखिये कैसे तिलमिलाते हैं?"

"ज़रूर तिलमिलायेंगे मिस कर्नाटिकी! ज़रूर तिलमिलायेंगे! और ऐसे तिलमिलायेंगे कि मेरे चरणों में आकर उन्हें शरण लेनी होगी। वरना इस धूर्त्त को कहीं भी न छोड़ूंगा। मैं दिल्ली की दाई के नाम से प्रसिद्ध हूं।" गर्व के साथ मंत्री जी ने कहा।

"दिल्ली की दाई क्या होती है, मंत्री जी ?" मिस कर्नाटिकी ने पूछा।

"तभी तो मैं कहता हूं कि तुम मुझे नहीं समझतीं।"

आज मंत्री जी बहुत प्रसन्न थे और जब वह अधिक प्रसन्न थे तो भावावेश में आकर अपने जीवन की असाधारण सफलताओं को नमक-मिर्च लगाते हुए बहुत ही रोचक ढंग से बयान करते थे।

मंत्री जी के इतिहास से परिचित होने का इस प्रकार मिस कर्नाटिकी को सौभाग्य प्राप्त हुआ और अपने सम्पर्क में आने से पूर्व के इतिहास पर बेला की भी दृष्टि गई।

बेला अब साधारण वकील साहब की घरवाली नहीं थी। उसकी विचार-धारा व्यापक हो चुकी थी। जब बेला का विचार भारतीय राजनीति की एक चमकदार तारिका बनने का हुआ तो उसने भारतीय इतिहास पर एक दृष्टि डाली। कांग्रेस का इतिहास उसने पढ़ा। महात्मा गांधी, जवाहरलाल, आजाद, पटेल, राजेन्द्रबाबू, कृपलानी, पंत, राजगोपालाचार्य इत्यादि मज़बूत मज़बूत डंडे उस सीढ़ी में लगाए और उन पर पैर रख कर एक दिन स्वतन्त्रता प्राप्त करके कांग्रेस से अलग हो गये परंतु उनका आसन नहीं डगमगाया। जब उनकी अर्थी निकली तो उनके सभी मजबूत डंडों ने मज़बूती के साथ उन्हें धूम-धाम से राजघाट तक पहुँचा दिया परंतु; मंत्री संकटानंद—इनकी राजनीति बिलकुल विचित्र थी। यह जब आगे का डंडा बना लेते थे और इस प्रकार अब अपनी बनाई हुई उस सीढ़ी में उनके पैरों के नीचे केवल एक डंडा ही शेष रह गया था। देखिए वह डंडा इनकी अर्थी बनाने में सफल होता है या नहीं। इस प्रकार की गंभीर विचारधारा में बेला बैठी थी।

मंत्री संकटानंद नित्य की भांति मिस कर्नाटिकी को लेकर अपने कमरे में चले गये और बेला वहीं बैठी विचारों की उधेड़-बुन में न जाने क्या सोचती रही।

खड़ी होकर बाहर बरांडे में जाने लगी तो सामने से ठाकुर राजबहादुर सिंह आ गये। वह बोले, "मुझे तुम से यही आशा थी, बेला! पत्र की इतनी प्रगतिशील हैडलाइन तुम्हारे अतिरिक्त और कोई नहीं दे सकता था। मैंने आचार्य किशनचंद से शर्त लगा कर कह दिया था। सेठ गूदड़मल तो तुम्हारी प्रतिभा को देख कर दंग ही रह गये बेला! सब जानते हैं क पत्र पर नाम चाहे

जिसका भी छपता हो परंतु पत्र की आत्मा तुम ही हो।"

तभी ठाकुर साहब ने मंत्री जी के विषय में पूछा तो बेला ने उस कमरे की ओर संकेत कर दिया जिसमें अन्दर से चटखनी लगाए मंत्री जी और कर्नाटिकी बैठे थे।

ठाकुर साहब ने झांककर देखा तो मिस कर्नाटिकी और मंत्री जी कमरे के बीच में पड़ी मेज़ के चारों ओर चक्कर लगा रहे थे। मिस कर्नाटिकी आगे-आगे थी और मंत्री जी पीछे पीछे। दोनों को सांस चढ़ रहा था।

ठाकुर साहब बेंत की नोक से शीशे तोड़ कर बोले "अरे मंत्री जी! व्यायाम का समय समाप्त हो चुका। बाकी दौड़ कल लगा लेना। मैं आपको आपके पत्र के लिए बधाई देने आया हूं। कमाल कर दिया आपने!"

मंत्री जी रूमाल से पसीना पौंछते हुए बाहर निकले और पंखे के सामने खड़े होकर हवा खाते हुए बोले, "मिस कर्नाटिकी ने मुझे व्यर्थ में ही क्रोध दिला दिया। कहने लगीं कि आप रेस में मुझे नहीं पकड़ सकते। मुझे पुरुष होकर इनका यह चैलेन्ज अपमानजनक मालूम दिया और मैंने इन्हें चार क़दम का बिच्चा देकर भागने के लिए कहा। तुमने बीच में गुलगपाड़ा मचा दिया वरना पकड़ कर ही दम लेता। खैर अब फिर देखा जायगा।" कहते हुए पंखे का मुंह अपनी ओर करके सोफे पर बैठ गये।

ठाकुर साहब भी मुस्कराकर पास वाले सोफे पर बैठ गये और बेला वहां से उठकर मिस कर्नाटिकी के पास चली गई।

मिस कर्नाटिकी की सब फाइलें इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं और उसके बदन से पसीना चू रहा था। बेला मिस कर्नाटिकी को कोठी के पीछे की तरफ लॉन में ले गई और नौकरानी से एक टेबिल फैन लाने के लिए कहा। "लजाने की बात नहीं मिस कर्नाटिकी!" बेला ने पूछा, "मुझे साफ साफ बतला दो कि मंत्री जी तुमसे क्या कह रहे थे?"

मिस कर्नाटिकी कुछ कहना ही चाहती थी कि मंत्री संकटानन्द ठाकुर राजबहादुरसिंह को लेकर वहीं आ धमके और मुस्कराते हुए सिल्क के कुर्ते की बाहें चढ़ाकर बोले, "कहो मिस कर्नाटिकी! अब तो कभी हमसे दौड़ लगाने की बहस नहीं करोगी न।"

मिस कर्नाटिकी के मुंह से एक शब्द भी न निकला। इसके पश्चात मंत्री

जी और ठाकुर साहब में कितनी ही देर तक बातें होती रहीं। बेला तथा मिस कर्नाटिकी भी वहीं बैठी रहीं। राजनीति पर बातें हो रहीं थी। आगामी चुनाव की रूपरेखा को लेकर बार बार गर्मा-गर्म बहस छिड़ जाती थी परन्तु मिस कर्नाटिकी को आज जैसे लगा कि मानो मंत्री संकटानंद और ठाकुर साहब दोनों ही मूर्ख हैं। वह आज तक मंत्री जी को विद्वान समझने के भ्रम में थी परन्तु उसका वह भ्रम आपसे आप ही आज उन दोनों की बहस में जाता रहा। मंत्री जी अंग्रेजी के नाम सिफ़र और हिन्दी में भी केवल हस्ताक्षर भर करने की योग्यता रखते थे। यह राज़ उसे आज ही बातों के बीच मालूम हुआ।

मंत्री जी दौड़ में आज बहुत थक गए थे इसलिए नौकर द्वारा कनॉट प्लेस से दस रुपए की बढ़िया फ्रूटी आइसक्रीम मंगाई गई। आइसक्रीम खाकर किसी प्रकार मंत्री जी और मिस कर्नाटिकी का सांस जुड़ा अन्यथा दोनों को वास्तव में बहुत खुश्की आ गई थी।

मंत्री जी ने इस समय बेला को एकांत में मिस कर्नाटिकी से बातें करने का अवसर नहीं दिया।

: ४६ :

स्वामी ज्ञानानंद जी अकेले अपनी कुटिया में बैठे थे। डाकिए ने 'जन-मत' की एक प्रति लाकर स्वामी जी को दी। हैडलाइन स्वामी ज्ञानानंद जी के नाम से पुती थी। स्वामी जी पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। केवल उन्होंने 'छिछोरा संकटानंद' कहकर पत्र को एक ओर रद्दी की टोकरी में डाल दिया।

पत्र को रद्दी की टोकरी में डाल कर स्वामी जी ने ऊपर नज़र उठाई, तो सामने सेठ गूदड़मल खड़े थे। उनका मुख क्रोध से तमतमा रहा था।

स्वामी जी ने मुस्कुराते हुए पूछा, "कहिए सेठ जी! आनन्दपूर्वक तो है?"

"आनंदपूर्वक!" क्रोध प्रदर्शित करते हुए सेठ जी बोले, "आपके मंत्री संकटानंद के बच्चे ने 'जनमत' पत्र निकाला है। धूर्त्त कहीं का! जनता का ठेकेदार बना है। आपके टुकड़ों पर पला हुआ कुत्ता आज आपको ही गुर्रा रहा है।"

"आखिर हुआ क्या? कुछ जानूं भी तो!" स्वामी जी शांत भाव से बोले।

"क्या हुआ? यह पूछते हैं आप? मैं कहता हूं कि क्या हुआ यदि आप कल सरोज की कोठी पर चले गये। आप स्वामी हैं, महात्मा हैं, आपके लिए सारी दुनिया समान है। आप जहां चाहें जा सकते हैं।" गूदड़मल जी बोले।

"क्रोध न करो सेठ जी! जब दुष्ट अपनी दुष्टता को नहीं छोड़ता तो हम सज्जनता को क्यों छोड़ दें? संकटानंद मूर्ख है। आप उसे भले ही ज्ञानी समझें परन्तु मैं उसे महामूर्ख समझता हूं।" मुस्कुराते हुए स्वामी ज्ञानानंद बोले।

"मूर्ख! आश्चर्य प्रदर्शित करते हुए सेठजी बोले, "आप मंत्री संकटानंद को मूर्ख कहते हैं। जो बड़ों-बड़ों को मूर्ख बनाता हो आप उसे मूर्ख कहकर संतोष कर रहे हैं।"

फिर कुछ ठहर कर बोले, "मैं आपको हर प्रकार का सहयोग दूंगा। आप मंत्री जी के दांत खट्टे कर सकते हैं। यदि आपने यों ही छोड़ दिया तो यह समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को जीने नहीं देंगे। ऐसे धूर्त्त लोगों का मुंह प्रारम्भ में ही कुचल देना चाहिए।" गम्भीरता पूर्वक सेठ जी बोले।

स्वामी ज्ञानानंद सेठ जी को आश्वासन देते हुए बोले, "धैर्य से काम लीजिए सेठ जी ! समय स्वयं बतला देगा कि क्या होने जा रहा है ? इस प्रकार गर्मी से काम नहीं चलेगा। पाप की नौका जब भर जाती है तो स्वयं डूब जाती है। यह प्रकृति का चक्र मेरे और आपके चलाए नही चलता।"

"तब मैं विश्वास रखूं कि यह स्वयं हो जाएगा ?" सेठ जी ने पूछा।

"क्यों नहीं ! यदि तुम भगवान को मानते हो और उसकी सत्ता में तुम्हारा विश्वास है तो तुम्हें अवश्य विश्वास रखना चाहिए।" गम्भीरता पूर्वक ज्ञानानंद जी बोले।

सेठ जी जिस ज्वाला की चिनगारी को लेकर वहां आये थे वह सुलग न सकी।

चलते समय सेठ जी ने कहा, "आपने सहन कर लिया, परंतु मैं यह सहन नहीं कर सकता। इसका मुंह-तोड़ उत्तर किसी से दिलाना ही होगा। मंत्री संकटानंद जैसे व्यक्तियों को सहन करना समाज की कमज़ोरी है, राष्ट्र की दुर्बलता है, धर्म का पतन है और मानव अधिकारों की अवहेलना है।"

सेठ जी चले गये। उनके चले जाने पर भी सेठ जी के शब्द स्वामी ज्ञानानंद के मस्तिष्क में रेंगते रहे। शब्द धीरे-धीरे अपना प्रभाव डाल रहे थे। और मीठी-मीठी कसकीली सी सरसराहट स्वामी जी के मस्तिष्क में पैदा हो रही थी। कुछ देर शांत भाव से बैठे-बैठे सोचते रहने के पश्चात स्वामी जी खड़े हो गये और अपनी कुटिया से निकलकर बाहर बगीचे में घूमने लगे।

संध्या के छः बज चुके थे। सूर्य देवता क्षितिज से जा मिले। संध्या की मंद पवन के हलके झकोरों पर रात की रानी ने अपनी मंद मुस्कान बिखरा दी। सिरस के फूलों की भीनी मंहक वायुमंडल में भरने लगी और दोपहर की गर्मी की ढलती हुई छाया पर संध्या की सौम्य मूर्ति आकर विराजमान हो गई।

तभी सरोज की फिटन आकर स्वामी जी की कुटिया के सामने रुकी। स्वामी जी ने देखा सरोज उनके सामने खड़ी थी।

सरोज के बड़े-बड़े नेत्रों की डौलियों पर खिंची काजर की डोरियां इन्द्र धनुष के समान प्रतीत होती थीं।

स्वामी जी ने सरोज का स्वागत किया और पूछा, "क्या अकेली ही आ

रही हो ?"

"हां।" संक्षेप में सरोज ने उत्तर दिया।

"ब्रह्मचारी नहीं आया ?" स्वामी जी ने पूछा।

"नहीं, उन्हें आपने कब बुलाया था ?" सरोज ने उत्तर दिया।

स्वामी जी मौन हो गये। उन्होंने सरोज को ही आने का निमंत्रण दिया था। परन्तु क्या ब्रह्मचारी को स्वामी ज्ञानानंद के पास आने के लिए आज निमंत्रण की आवश्यकता थी ?

स्वामी जी बोले, "तुमने यह पत्र देखा ?" मंत्री संकटानंद का पत्र सरोज के हाथों में देकर स्वामी जी बोले।

"मैं ऐसे छिछोरे पत्र नहीं पढ़ती।" सरोज ने कहा।

"तुमने ठीक कहा सरोज !" गम्भीरतापूर्वक स्वामी जी बोले, "अभी-अभी सेठ गूदड़मल आये थे। बड़े उबाल खा रहे थे। उन्हें क्रोध आ रहा था। उनका मत था कि ऐसे धूर्त्त व्यक्तियों को मुंह तोड़ उत्तर देना चाहिए। ऐसे व्यक्ति समाज पर कलंक हैं।"

सरोज स्वामी ज्ञानानंद की बात सुनकर खिलखिलाकर हंस पड़ी और बहुत देर तक उसकी हंसी बंद नहीं हुई। स्वामी ज्ञानानंद चकित होकर सरोज का मुंह देखते रहे।

"कुछ कहोगी भी या यों ही हंसती जाओगी। क्या सेठ गूदड़मल का विचार ठीक नहीं है ?" स्वामी जी ने पूछा।

"ठीक है, ठीक है, ठीक क्यों नहीं है ?" हंसी रोकते हुए सरोज बोली। "मुझे क्या अधिकार है किसी की बात को गलत कहूं। और फिर सेठ गूदड़मल की बात को। उन्होंने आपसे कहा होगा कि मंत्री संकटानंद के पत्र में यह सूचना छप जाने से समाज रसातल में पहुंच जायेगा, राष्ट्र का सर्वनाश हो जायेगा, धर्म का नाम लेने वाला कोई नहीं रहेगा और मानवता के सिद्धांतों का महान पतन होगा ?"

"बिल्कुल यही कहा था सरोज !" स्वामी ज्ञानानंद बोले।

"और जानते हो वही गूदड़मल जी संकटानंद के पास जाकर क्या कहेंगे ?" मुस्कराकर सरोज बोली।

"मंत्री संकटानंद के पास जाकर !" आश्चर्य प्रकट करते हुए स्वामी जी

ने पूछा।

"जी हां! यह मंत्री संकटानंद को उनकी योग्यता और बहादुरी पर प्रशंसा-पत्र भेंट करेंगे। कहेंगे मंत्री जी! आप धन्य हैं। भारत की भावी आशायें आप पर ही आधारित है। देश आप जैसे महान व्यक्तियों की ओर आंखें पसारे देख रहा है। भारत को प्रगति का मार्ग दिखाने वाले एक मात्र नेता आप ही हैं। स्वामी ज्ञानानंद जैसे पाखंडियों की पोलों को खोलने का साहस आप जैसे महान व्यक्ति में ही हो सकता है। मैं आपके साथ हूं और मेरा पूरा सहयोग सर्वदा आपके साथ रहेगा।"

स्वामी ज्ञानानंद सरोज की बातों को ध्यान देकर सुन रहे थे। उनकी समझ में न आया कि दुनिया किधर चल रही? किसकी बात का कितना विश्वास किया जाय यह समझना कठिन है।

"आपको विश्वास नहीं हुआ मेरी बात का?" सरोज ने मुस्कुराकर पूछा।

स्वामी ज्ञानानंद मौन थे। कोई उत्तर नहीं दिया। कुछ ठहर कर बोले, "सरोज! जाने दो इन बातों को। जो होता है, होता रहेगा। मैंने इस दिशा में विचारना बन्द कर दिया। मैंने राजनीति में कदम रख कर अनधिकार चेष्टा की। मैं उसमें असफल रहा।

धर्म का युग समाप्त हो चुका। विश्व भौतिकता की ओर अग्रसर है। विज्ञान ने धर्म पर विजय प्राप्त कर ली है। परंतु यह विजय अस्थाई है, स्थाई नहीं हो सकती। विज्ञान का सम्बन्ध शरीर से है, आत्मा से नहीं। विज्ञान-युग चाहे शरीर को कुछ सुख के साधन भले ही जुटा सके परंतु आत्मा को शांति प्रदान नहीं कर सकता।"

"तब क्या आपने राजनीति को क़तन छोड़ने का विचार कर लिया?" सरोज ने पूछा।

"हां सरोज! इस समय तो यही विचार किया है। राजनीति के चक्कर में फंस कर हमारा अध्ययन समाप्त हो गया। अब विचार किया है कि जीवन का अधिकांश समय साहित्य के पठन-पाठन में ही लगायेंगे।"

"परंतु इस आयु में आप यदि पठन-पाठन प्रारम्भ करेंगे तो आपको किसी स्त्री की आवश्यकता होगी।" सरोज ने कहा।

"स्त्री की?" चौकन्ने होकर स्वामी ज्ञानानंद जी खड़े होते हुए बोले।

"यह तुमने क्या कहा सरोज ? तुम बड़ी ही विचित्र स्त्री हो। तुम मुझे पागल बना दोगी।" और इतना कहते हुए स्वामी जी सरोज को वहीं पर बैठी छोड़ कर बागीचे में आगे बढ़ गये।

सरोज भी खड़ी होकर मुस्कुराती हुई स्वामी जी के पीछे पीछे हो ली और आगे बढ़कर रुक कर बोली, "ठहरिये स्वामी जी ! आज मैं आपको यों ही छोड़कर जाने वाली नहीं हूं। जो कुछ मुझे दोष आप देना चाहें दे डालें, परंतु आज मैं उन सभी दोषों का उत्तर सोच समझ कर आई हूं।"

सरोज फिर बोली, "आप अपने को संसार का प्राणी मान कर चलिये। तब आप समझ सकेंगे कि मैंने न तो पहले ही आपको बनाने का प्रयत्न किया और न आज ही कर रही हूं। मैं आज आपसे यही प्रार्थना करने आई हूं कि आप दुनिया को दुनिया समझ कर चलें।"

स्वामी जी रुक गये और उन्होंने एक बार बालक की तरह सरोज के मुख पर देखा, मानो वह उस मुख पर कुछ पढ़ने का प्रयत्न कर रहे थे।

"आपके सम्मुख यह वेश्या-पुत्र खड़ी है स्वामी जी !" मुस्कुराती हुई सरोज बोली, "संभलकर क़दम रखिये। कहीं ऐसा न हो कि धर्म भ्रष्ट हो जाये।" सरोज ने कहा।

"अच्छा स्वामी जी ! अब मेरे चलने का समय हो गया। आनंद बाबू मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे। आप यदि चलना चाहें तो मेरे साथ चलें। यहां अकेले बैठ-बैठे आपका मन और अशांत हो उठेगा।"

स्वामी ज्ञानानंद ने सरोज की बात मान ली और वह चुपचाप सरोज की फ़िटन में बैठ गये। फ़िटन चली पड़ी।

रात्रि का अंधकार चारों ओर छा चुका था और सड़कों पर बिजली की बत्तियां जल गई थीं। गाड़ी, मोटर, बस, बग्घी इत्यादि सड़कों पर जा रहे थे। मार्ग में राहगीरों की भीड़-भाड़ और भारी चहल-पहल थी परंतु ये दोनों प्राणी शांत बैठे थे।

लाल किले के सामने वाली ठंडी सड़क से होकर फ़ौज बाजार से होती हुई फिटन दिल्ली दरवाजे जा पहुँची और फिर रामलीला के मैदान के पास वाली सड़क से इर्विन हस्पताल के सामने होकर माता सुन्दरी रोड को पार करती हुई कनॉट प्लेस और वहां से सीधी बारहखम्भा रोड पर सरोज

की कोठी की तरफ घूम गई।

फिटन ज्योंही सरोज की कोठी में जाने को थी तो सामने वाली कोठी से एक कार निकली। सरोज चौंक कर स्वामी जी से बोली, "देखा आपने! यही तो हैं आपके सेठ गूदड़मल। यह उन्ही की तो कार थी। जिस कोठी में से यह निकल रहे हैं, यही तो है मंत्री संकटानंद की कोठी।"

स्वामी ज्ञानानंद ने सेठ गूदड़मल को देखा और सरोज की कही गई बात उनके मस्तिष्क में घूम गई। उनका मस्तिष्क श्रद्धा के साथ सरोज के चरणों में झुक गया और उन्होंने मन ही मन कह दिया सरोज! तुम वास्तव में सरोज हो, तुम अनुपमेय हो योग्यता में, बुद्धि में, विचारों के विस्तार में, गुणों में, रूप में और विचारते-विचारते स्वामी ज्ञानानंद मौन हो गए। इस समय उन्हें अचानक ही हँसी आ गई और अपनी गत भूलों पर दृष्टि डालकर उन्होंने सोचा कि वास्तव में वह उनकी भूलें उनके भोलेपन के परिणाम स्वरूप थीं, उनकी कुटिलता अथवा धूर्त्तता के परिणामस्वरूप नहीं। स्वामी ज्ञानानंद जी के मन को उनका यही विचार सांत्वना दे रहा था और इसी सांत्वना के बल पर वह अपने भारी मन को हल्का करते हुए संभल कर फिटन की सीट पर तकिया लगाते हुए बैठ गए।

स्वामी जी की जबान से स्वाभाविक स्वर में निकला "सरोज तुमने जो कहा, वह सही था, सेठ गूदड़मल भी दोगला निकला। समझ में नहीं आ रहा है कि मैं किसका विश्वास करूं।"

फिटन सरोज की कोठी में चली गई।

: ४७ :

मंत्री संकटानंद ने अपना जीवन बेला पर न्यौछावर तो अवश्य कर दिया परन्तु सरोज के प्रति उनके जीवन का आकर्षण कम नहीं हो सका । सरोज की बल खाती हुई अलकों का सौंदर्य बेला की सीधी-सादी अलकों में न मिला । न नयनों में वह मादकता ही थी और न यौवन का वह उभार ही । सुंदर बेला भी सरोज से कम नहीं थी, परन्तु इधर कुछ दिन से उसमें वह चंचलता नहीं रही थी जिस पर रीझकर मंत्री जी उसकी ओर आकर्षित हुए थे । फिर भी बेला से ही इस समय मंत्री जी का जीवन सदन महक रहा था ।

स्वामी ज्ञानानंद के विपरीत सरोज को लेकर सूचना छापने से सरोज पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा, इस ओर मंत्री जी का ध्यान नहीं गया था । परन्तु अब तो तीर प्रत्यंचा से निकल चुका था । क्षमा याचना के अतिरिक्त अब कोई और चारा नहीं था ।

परन्तु यदि सरोज ने कहा कि पत्र में अपनी भूल को प्रकाशित करो, तब क्या होगा ? यह विचार आते ही मंत्री जी एक क्षण के लिए सन्न रह गए । बहुत देर तक सोचते रहने के पश्चात भी कुछ समझ में न आया ।

इस गर्मागर्म सूचना को लेकर पत्र दिल्ली की जनता में खूब अपनाया गया । दिन प्रतिदिन गर्म से गर्म सूचना इस पत्र में छपने लगी और पत्र जनता में प्रसिद्धि पाने लगा ।

रूप-रेखा के विचार से पत्र बहुत सुन्दर था । मन्त्री संकटानन्द के पास पैसे की कमी नहीं थी । सेठ गूदड़मल ने अपना कोष मन्त्री संकटानन्द के हाथों में सौप दिया था । 'जनमत' पत्र के कर्मचारियों को वेतन खूब अच्छा मिलता था ।

मंत्री संकटानंद ने निस्वार्थ भाव से जनता की सेवा के लिए इस पत्र का आयोजन किया था । पत्र उनके लिए कोई व्यवसाय नहीं था । इतने बड़े आदमी के लिए एक दैनिक पत्र क्या आय दे सकता था ? रुपया इस पत्र में

लगाया था वह केवल इसलिए कि वह जनता को सही मार्ग दिखा सके।

पत्र निकलते ही पत्र की चारों ओर धूम मच गई। मंत्री जी ने पत्र को एक करोड़ रुपये से लिमिटेड कर दिया। पत्र लिमिटेड हो गया और बेला पत्र की मैनेजिंग डाइरेक्टर बनी। पहले आशा थी कि मिस कर्नाटकी ही इसकी मैनेजिंग डाइरेक्टर बनेंगी परंतु इसी बीच में पता चला कि बेला ने मंत्री संकटानंद को कुछ आश्वासन दे दिये, जिनके फलस्वरूप मंत्री जी का आजकल फिर विशेष रुझान बेला की ही ओर हो गया।

बेला ने सब कार्य स्वयं करना प्रारम्भ कर दिया। वह प्रत्येक कार्य की रूपरेखा स्वयं तय्यार करती थी और उसके संचालन में विशेष भाग लेती थी। मंत्री संकटानंद ने जब मिस कर्नाटिकी को रखा था तो उन्हें बेला की योग्यता पर अविश्वास होने लगा था और वह समझते थे कि बेला ने अभी तक जो कुछ किया था वह मंत्री जी के डिक्टेशन पर किया था परन्तु अब दशा उसके बिल-कुल विपरीत थी। मंत्री जी को यह देखकर संतोष हुआ कि बेला वास्तव में वह कार्य कर सकती है जो मिस कर्नाटिकी भी नहीं कर सकती थी।

"बेला! मैं थक चुका हूं। अब मुझे विश्राम चाहिए। बहुत दिन से एक साथी की खोज में था मैं और वह मुझे मिल गया।" मंत्री संकटानंद ने एकांत में बेला से कहा।

"कौन है वह साथी? तनिक जानूं भी तो!" बेला मुस्कुराकर बोली।

"तुम नहीं जानतीं बेला।" मंत्री जी कुर्सी के तकिये से कमर लगा कर बोले। "जान जाओगी। तुम वास्तव में इतनी भोली हो कि अपने को भी नहीं पहचान सकतीं।"

"अपने को!" आश्चर्य से मुस्कुराते हुए बेला बोली, "तो आपका अभिप्राय मुझ से है। परन्तु मुझ में इतनी योग्यता कहां जो आप आराम पा सकें। मैं तो आपके संकेतों पर कठपुतली बनकर नाच भर सकती हूं। आपके पास मिस कर्नाटिकी हैं। मिस सरोज हैं। आप बड़े आदमी हैं। बड़े आदमियों के सामने नाचीज बेला क्या चीज है?" इठलाकर दूसरी ओर को मुंह फेरते हुए बेला बोली।

"बस रूठ गई!" बेला को मनाते हुए मंत्री जी ने कहा, "बड़ी बावली हो बेला! कितनी नादानी की बात करती हो? तुम मुझे पागल बना

दोगी बेला !

जब तुम्हारे कार्य संचालन पर दृष्टि डालता हूं तो मैं भ्रम में रह जाता हूं कि मेरी धारणा तुम्हारे विषय में इतनी गलत क्यों थी ! और जब तुम्हारे मुस्कुराते हुए उपालम्भ सुनता हूं तो सच कहता हूं बेला तुम्हारे भोलेपन में मुझे रूप और यौवन के उस सामंजस्य की झलक मिलती है जिसे मैं केवल अनुपमेय ही कह सकता हूं ।

जीवन में बहुत संघर्ष कर चुका हूं । यो तो जीवन एक संग्राम है और मैं उसमें बाजी हारने वाला नहीं, परन्तु तुम्हारा साथ पाकर बेला मैं अजित हो चुका हूं । तुम्हारे सामने क्या है सरोज ! सरोज एक बाजारू औरत है, जिसका कार्य है लोगों का मनोरंजन करके अपनी उदर पूर्ति करना । मिस कर्नाटिकी तुम्हारी एक नौकरानी है । और तुम....."

"मैं क्या हूं ?" नयनों में मदिरा भर कर इठलाते हुए बेला ने पूछा ।

"तुम ! तुम मेरे मन की रानी हो बेला ! मेरे जीवन की सर्वस्व हो तुम ! मैंने आज तक जीवन में जो कुछ किया है वह सब तुम्हारे लिए किया है ।" मंत्री जी भावुकता के आवेश में बोले ।

"सच कह रहे हैं आप ?" बेला ने पूछा ।

"तुमसे क्या झूठ कहूंगा बेला ?" मंत्री जी तन्मयता के साथ कहते चले गए ।

"तो सुनिये मंत्री जी ! मैं भी आज प्रथम बार जीवन में विश्वास करने चली हूं और देखती हूं कि आप मेरे विश्वास को कहां तक पूरा करते हैं ?" गंभीर होकर बेला ने कहा ।

मंत्री जी अपनी कुर्सी से उठकर बेला के सोफ़े पर जा बैठे और बेला का हाथ अपने हाथ में लेते हुए बोले, "बेला ! तू मेरी परीक्षा लेना चाहती है ? मैं आज जीवन में पहली बार परीक्षा देने चला हूं ।" मंत्री जी भावुकता के वेग में बुरी तरह बह गये ।

बेला मौन हो गई । कुछ न बोली । मन में सोचा क्या यही अवसर है ? मन ने यही कहा यही, बुद्धि ने उसका साथ दिया । वह मुस्कुरा उठी और इठलाकर खड़ी होती हुई बोली, "आज इस शुभ अवसर पर आपसे क्या मांगूं ! यह सब मेरा ही तो है ।"

"सब तुम्हारा है बेला ! मैं भी तुम्हारा हूं। आज पहली बार तुम्हें परखा है।"

"चलिये परख तो लिया आपने।" मुस्कुराते हुए बेला बोली। "मैं क्या हूं मंत्री जी। यह आपसे क्या कहूं, परन्तु इतना सत्य है कि अपने प्रति निरंतर अविश्वास देख कर भी मैं आपके अन्दर विश्वास कर चलने वाली वह नारी हूं जो अपने मन में एक बार कोई धारणा बना कर फिर उससे हटना नहीं जानती।"

मंत्री जी की आंखों में आंसू आ गये और वह भावुकता में बह कर बोले, "बेला ! मुझे क्षमा करना ! मैंने तुम्हारा अविश्वास अवश्य किया परन्तु आज मेरे जीवन में तुम्हारे अतिरिक्त और कोई विश्वास करने के लिए नहीं है।"

बेला ने मन में कहा, 'वास्तव में आज बेला ही मंत्री संकटान्द की सीढ़ी का वह अन्तिम डंडा है जिस पर खड़े होकर वह आकाश कुसुम तोड़ने का प्रयत्न करना चाहता है। यह डंडा भी साबुत नहीं है। इस डंडे पर भी कई बार कुल्हाड़ी मार कर इसे तोड़ डालने का प्रयत्न मंत्री संकटानन्द कर चुके हैं। परन्तु जब ऊपर चढ़ने के लिए दूसरा डंडा प्राप्त नहीं हो सका तो आखिरकर इसी पर लौट आये हैं। मिस कर्नाटिकी एक साधारण डंडा है जो मंत्री संकटानन्द जैसे दैत्य का बोझ नही संभाल सकता।

बेला मुस्कुराती हुई कमरे में टहलने लगी।

मंत्री संकटानन्द खड़े होकर अपने कमरे में चले गये और वहां से जाकर वह शेयर सर्टिफिकेट उठा लाये जिन्हें बेला से हस्ताक्षर कराकर उन्होंने ताले कुंजी में बंद कर दिया था और उन्हें लाकर बेला के सामने डाल कर बोले "बेला ! यह लो ! मुझे अब कुछ नहीं चाहिए। तुम मिल गईं, मुझे सब कुछ मिल गया।"

आज इक्यावन लाख के शेयर बौंड मंत्री जी ने बेला के नाम ट्रांस्फर कर दिये।

बेला मुस्कुराकर बोली, "मैं पूछती हूं मंत्री जी ! अब आप ही कहिए कि बचपना मैं करती हूं या आप कर रहे हैं। मुझे आपके शेयर नहीं चाहिएं। आपकी सेवा करते रहना मेरा कर्तव्य है।

अपने मुझे अयोग्य समझकर मिस कर्नाटिकी को पत्र की संचालिका

बनाया, केवल इसीलिए मुझे अपनी योग्यता का परिचय आपको देना पड़ा और मैं आज भी दावे के साथ कह सकती हूं कि कांग्रेस के बड़े-बड़े संसद के सदस्यों को तोड़ लेना, सरकार के बड़े-बड़े कर्मचारियों को अपनी मुट्ठी में ले लेना, जनता की आवाज़ में आवाज़ मिलाकर पार्टी को ऊपर उठा देना— ये कार्य ऐसे हैं कि जिन्हें, यदि आप जैसे योग्य और अनुभवी व्यक्तियों का हाथ मेरे सिर पर रहे तो, मुझसे अधिक कुशलतापूर्वक और कोई नहीं कर सकता।

मिस कर्नाटिकी केवल दो तीन भाषाओं में बात भर कर सकती है और मिस सरोज केवल कुछ गा-बजा सकती हैं। राजनीतिक क्षेत्र में इन बातों से काम नहीं चलता। ये थोड़ा मनोरंजन चाहे भले ही कर सकें परंतु जीवन में साथ नहीं दे सकतीं।" और इतना कहकर बेला ने अपने आकर्षक नेत्रों की वह मधुर मुस्कान मंत्री जी पर डाली कि मंत्री जी मंत्र-मुग्ध हो गये।

बेला मंत्री संकटानंद पर छा गई। मंत्री जी ने बेला के गुणों की परख करके पाया कि बेला से अच्छी साथिन उन्हें इस जीवन में और नहीं मिल सकती। मंत्री जी का हृदय आनंद से परिपूर्ण हो उठा और उन्होंने मन से अपनी परख की सराहना की।

मंत्री जी अपनी योग्यता पर फूल उठे कि उन्होंने किस प्रकार साधारण झाड़ी से वह प्रसून चुना कि जिसकी महक से दिग्दिगंत पूरित होना चाहते हैं। बेला के चरणों में मंत्री जी का मन, हृदय और बुद्धि झुक गई।

मंत्री जी बोले, "बेला ! मैं तुम्हारी योग्यता से अपरिचित नहीं था, मैं तुम्हारी भावना को परखना चाहता था। आज मैं अपना सर्वस्व तुम्हें सौंपते हुए जीवन के उस पथ पर चलना चाहता हूं जिसे संसार के प्राणी आदर्श-पथ कहते हैं। अपने पास धन की कमी नहीं, मान की कमी नहीं और साधनों की कमी नहीं। आज तक मैं तुम्हें साधन के रूप में प्रयोग करता आया हूं परंतु अब तुम स्वयं सिद्ध बन गई हो। आगे बढ़ो बेला ! मैं तुम्हें बल दूंगा।"

बेला ने ऐसी प्रसन्न मुख-मुद्रा बनाई कि मानो उसे जीवन का वह विश्वास और सुख प्राप्त हो गया जिसके लिये वह आज तक संघर्ष करती चली आ रही थी। परन्तु उसके मन ने कहा 'जो स्वयं निर्बल है, वह मुझे क्या बल देगा ?

मेर शांत जीवन में अशांति की आग लगाने वाला धूर्त्त आज कहता है कि मैं तुम्हें बल दूंगा। जो मेरा बल पाकर आज इतना बड़ा बन गया जिसने मुझे दर्शनी हुंडी की तरह प्रयोग करके दुनिया को मूर्ख बनाया और अपना उल्लू सीधा किया, जिसके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं, कोई ध्येय नहीं, जो मेरी छाती पर अपने किले की नींव रखना चाहता है, वह मुझे बल देगा ?'

खिलखिलाते हुए मंत्री जी का हाथ पकड़कर खड़ी होती हुई बेला बोली, "मंत्री जी ! आज मैं बहुत प्रसन्न हूं।"

"तुम विश्वास करो बेला ! मैं तुमसे अपनी आत्मा की बात कह रहा हूं कि मैंने आज जीवन में प्रथम बार सुख का स्वप्न देखा है। आज अपनी आशा की देवि बेला को साथ लेकर मैं समझता हूं संसार की समस्त सिद्धियां मेरे सम्मुख है।" भावुकता में मंत्री जी बोले।

इसके पश्चात मंत्री जी ने बेला से कहीं घूमने चलने के लिए कहा और बेला बोली, "आज जहां आपकी इच्छा हो चलिए। एक बार प्रेस में होकर चलना होगा। आज का कार्य मिस कर्नाटिकी को समझा देती हूं, और फिर मैं स्वतंत्र हूं।"

मंत्री जी पर बेला के इन शब्दों का इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह भविष्य में बेला पर अपने प्रत्येक उत्तरदायित्व को सौंप सकते थे। मंत्री संकटानन्द का जीवन आज इतना सरल हो गया कि उन्होंने उसमें से जटिलता को निकाल कर जनता में अपनी भावना और उदारता को लेकर घुस जाने का निश्चय कर लिया। बेला अभी तक एक यंत्र थी परन्तु आज वह आत्मा बन कर मंत्री जी के साथ थी और इसीलिए मंत्री जी अपनी आत्मा में बेला की आत्मा का बल पाकर ऐसे फूल रहे थे कि जिस प्रकार जापानी बबुआ नीचे से बटन खोलकर फूंक भर देने से फूल जाता है। उनका मुंह इस समय उस गुब्बारे के समान हो रहा था जिसे बच्चे और गुब्बारा बेचने वाले 'उल्लू का पट्ठा' के नाम से पुकारते हैं। आज मंत्री जी के हृदय में वह उभार था जिसमें आत्मा की सन्तुष्टि व्याप्त रहती है। मंत्री जी के जीवन में आज एक नया विचार आ गया। उन्होंने मन ही मन सोचा कि आज उनका ब्रह्मचारी जीवन समाप्त हुआ और वह गृहस्थ में पदार्पण कर गये हैं। गृहस्थ के उत्तरदायित्व पर विचार करके मंत्री संकटानन्द जी डोल जाने वाले व्यक्तियों

में से नहीं थे क्योंकि संसार में दो प्रकार के प्राणी होते हैं एक वह जो जीवन को समझे बिना ही गृहस्थ में पदार्पण कर जाते हैं और एक वह जो ब्रह्मचर्य आश्रम से गृहस्थ आश्रम में प्रवेश ही उस समय करते हैं जब पहिले उसकी रूपरेखा तैयार हो चुकी होती है। मंत्री जी गृहस्थ में सुखी रहने के लिए सब प्रकार के साधन जुटा चुके थे और इसीलिए अब गृहस्थ में प्रवेश करना उनके लिए बच्चों का खेल था।

बेला एक अभिनेता से दीक्षा लेकर इस समय जीवन के पथ पर चल रही थी। वह सफल होती जा रही थी अपने अभिनय में। मंत्री जी के जीवन पर वह इस प्रकार छा गई कि मंत्री जी बेलामय हो गये और उनकी दृष्टि बेला को छोड़ कर कहीं अन्यत्र नहीं जाती थी।

बेला ने आज प्रथम बार अपने हृदय में गर्व का अनुभव किया और पाया कि वह इस समय वास्तव में मुक्त थी। बेला का मन उस व्यक्ति के प्रति श्रद्धा से झुक गया जिसने उसके अंधकारपूर्ण जीवन में इस प्रकार आशा का पुष्प खिला दिया। बेला के कुम्हलाते हुए जीवन में एक नवीन निखार आ गया और उसके मुख पर वह कांति प्रस्फुटित हो उठी जिसमें जीवन की विजय का आभास था, जीवन के विकास की रूपरेखा थी, जीवन की प्रगति का उत्साह था और थी प्रेरणा जिसके बल पर उसने गृहस्थ के सीमित क्षेत्र को त्याग कर विस्तृत आकाश में पर फैलाये थे।

बेला का हृदय खिलखिलाकर मंत्री संकटानन्द पर हंस पड़ा और संवेदना प्रगट करते हुए वह बोली—'तुम विषधर अवश्य हो मंत्री जी परन्तु अब तुम्हारे जीवन का विष समाप्त हो चुका। अब तुम एक साधारण केंचुए के समान रह गए हो जिसके ऊपर नादान बच्चा भी पैर रख कर निर्भीकतापूर्वक जा सकता है। मुझे नादान बच्चा ही तो तुमने कहा था मंत्री महोदय!'

: ४८ :

ठाकुर राजबहादुर जीवन की मौजें लेने में विश्वास रखते थे। उनके सामने जीवन पहले था, सिद्धांत बाद में। जीवन में नवचेतना लाने के लिए ही उन्होंने कांग्रेस में भाग लिया था।

आज संकटानंद और आचार्य किशनचंद दोनों ही ठाकुर साहब को अपने साथ रखना चाहते थे। ठाकुर साहब निर्णय नहीं कर सके कि किधर जायें।

मंत्री संकटानंद के पास आकर्षण की कमी नहीं थी और अब तो विज्ञान के साधन भी उनके पास थे। उनका दैनिक पत्र हिन्दी और अंग्रेज़ी में बड़ी धूम-धाम के साथ छपता था। साथ ही मूलचंद जी और सावित्री देवी की टोली ने दिल्ली शहर और इसके आस-पास के इलाकों में तहलका मचा दिया था। बच्चे-बच्चे की ज़बान पर मंत्री संकटानंद का नाम चढ़ गया था।

मंत्री संकटानंद और ठाकुर राजबहादुर की आजकल बहुत छन रही थी। दोनों की दांत काटी रोटी थी, परंतु ठाकुर राजबहादुर को मंत्री संकटानंद का बेला को अपनी कोठी पर रखना बहुत खलता था। यह बात सहन करनी उनके लिए एक समस्या थी।

आज संध्या को जब दोनों पीने की मेज़ पर बैठे तो ठाकुर साहब बोले, "मंत्री जी! किसी चीज़ के बर्दाश्त करने की भी कोई सीमा होती है।"

"आपका मतलब मैं नहीं समझा।" एक घूंट हलक से नीचे उतारते हुए मंत्री जी बोले।

"मेरा मतलब बहुत स्पष्ट है, मंत्री जी! आप बेला को आखिर कब तक अपनी कोठी पर रखेंगे? मेरे मिलने वालों ने अब मेरा मज़ाक उड़ाना शुरू कर दिया है। वे कहते हैं कि यार तुम बेला को वकील साहब के पंजे से छुड़ा कर भी लाये, अपनी कोठी भी तुमने उसके नाम कर दी और वह रहती है मंत्री संकटानंद के पास है, आखिर यह गड़बड़घोटाला क्या है?"

"फिर तुमने क्या उत्तर दिया?" गम्भीरतापूर्वक मंत्री जी ने पूछा।

"मैंने कह दिया, मंत्री जी बेला के पिता के समान हैं। बेला को वह

बेटी कहते हैं और वह उन्हें पिता जी कह कर पुकारती है। परंतु वे कम्बख़्त मेरी इस बात पर हंसते और मुस्कुराते हैं। मेरी बात का मंत्री जी! वह विश्वास ही नहीं करते।" ठाकुर साहब बोले।

"विश्वास नहीं करते?" मंत्री जी ने त्योरी चढ़ाकर क्रोध में कहा, "तो न करने दो उन कम्बख़्तों को। सांच को आंच नहीं होती ठाकुर साहब!"

कुछ सरुर इस समय ठाकुर साहब को हो चुका था। ठाकुर साहब का सरस हृदय भावुकता से भर गया। वह बोले, "बकने दीजिए मंत्री जी उन्हें। हमारे मन साफ़ चाहिएं, संसार हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। हमने जो कुछ किया है निस्वार्थ भाव से किया है। जो किया है बेला की उन्नति और प्रगति के लिए किया है। मिट्टी में दबे हुए हीरे को बाहर निकाला है।"

खुमार बढ़ रहा था। मंत्री जी प्रसन्न होकर बोले "ठाकुर साहब! ठीक कहा आपने। आप जैसे समझदार व्यक्ति संसार में खोजने से बिरले ही मिलते हैं।" मंत्री जी फिर जरा ठहर कर बोले, "ठाकुर साहब! आपके गुणों को परखने वाले पारखी कहां है? आचार्य किशनचंद जैसे कांग्रेसी ठग आपको लूटकर अपनी ही प्रतिष्ठा बढ़ाने के चक्कर में रहते हैं। परंतु अपना सिद्धांत इसके बिल्कुल विपरीत है। हम राजनीति को धोखे का अखाड़ा नहीं समझते। जनता के साथ खिलवाड़ करने को क्या आप राजनीति कहेंगे? आपने त्याग किया है और दूसरों के लिए अपना सर्वस्व खोकर कष्ट उठाया है। आपकी तुलना आचार्य किशनचंद जैसे व्यक्तियों से नहीं की जा सकती जिन्होंने पच्चीस रुपये महावार की अछूत बालकों की पाठशाला में नौकरी की हो।

खैर जाने दो आज इन बातों को। जनता स्वयं इसका निर्णय करेगी।" इतना कहकर मंत्री जी ने गिलास गले से नीचे उतार कर सीना उभारते हुए मूंछों पर ताव दिया।

ठाकुर साहब भी पूरा गिलास चढ़ा कर बोले, "भाई मंत्री जी! आज सच-सच कह दूं?"

"बिलकुल सच-सच।" मंत्री जी ने संभल कर कहा।

"तो बात यह है कि मैं आपके साथ हूं परन्तु आपको अपना वायदा निभाना होगा। बेला को इस तरह हज्म कर जाने वाली आपकी बात मेरे दिल में इस तरह खटक रही है कि आगामी प्रोग्राम पर विश्वास ही नहीं जमता!" शराब

के नशे में ठाकुर साहब मन की साफ-साफ बात कह गये।

मंत्री संकटानंद ने बोतल लेकर दोनों गिलास दुबारा भर लिये और वह समझ गये कि ठाकुर साहब मंत्री जी की ओर से सशंकित हैं। वास्तव में बेला को उनके ही लिए वकील साहब के घर से बहका-फुसला कर प्रगति का मार्ग दिखलाया गया था। भविष्य के बड़े-बड़े कार्यक्रमों की रूप-रेखाएं सामने रख कर न जाने क्या-क्या प्रोग्राम बने थे। पत्र की स्थापना ठाकुर साहब को आगामी भारत का बेताज बादशाह बनाने के लिए की जाने वाली थी। सेठ गूदड़मल से रुपया लेने में भी ठाकुर साहब के नाम का उपयोग हुआ था।

इसके पश्चात किस प्रकार मंत्री संकटानन्द ने पतंगों की डोर काटी, किस प्रकार कांग्रेस के क्षेत्र में पदार्पण करके थोड़े ही समय में यह भाँप लिया कि वहाँ उनकी दाल गलने वाली नहीं और फिर सोशलिस्ट पार्टी को अपनाकर उसके सर्वेसर्वा बन बैठे।

यह एक लम्बी कहानी थी परंतु मंत्री संकटानंद इसे अपनी सफलता की माला कह कर पुकारते थे और इस माला का प्रत्येक दाना उनकी सफलता की वह घटना थी जो उनके जीवन में निखार के पश्चात निखार ही लाया था।

ठाकुर साहब को एक बार बिल्कुल ढील देकर डोर काट देने के पश्चात उनसे फिर मित्रता स्थापित करना मंत्री जी की व्यक्तिगत विशेषता थी। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण मंत्री जी उन्नति के शिखर पर चढ़ते चले जा रहे थे।

आज जब मंत्री जी ठाकुर साहब की कोठी से लौटे तो बेला कोठी पर नहीं थी। दरबान से पता चला कि वह मंत्री जी की काफ़ी देर प्रतीक्षा करके इंडिया गेट घूमने चली गई।

: ४६ :

बेला इंडियागेट न जाकर सीधी सामने सरोज की कोठी पर गई थी। जब वह सरोज की कोठी पर पहुँची तो वहाँ ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश अकेले बैठे एक गीत की धुन तैयार कर रहे थे। बेला चुपके से उनके पीछे जाकर खड़ी हो गई और वह मस्ती के साथ अपनी धुन साधने में लगे रहे।

बेला को ही बोलना पड़ा, "क्यों सितार के पीछे पड़ गये हैं आप ? आखिर कभी तो दम लेने दिया कीजिए बेचारे को।"

"अरे ! बेला ! तुम यहां कब से खड़ी हो ?" सितार एक ओर रख कर ब्रह्मचारी ने पूछा।

"आधा घंटा हो गया।" बेला ने कहा।

"और चुपचाप खड़ी रही ! मैं एक धुन के साधने में लगा हुआ था। यदि तुम पहले बोल पड़ती तो मेरी पहले ही इससे मुक्ति हो जाती ?" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

"अभिनय में कहां तक सफलता मिली, बेला ?" ब्रह्मचारी ने पूछा।

"सोलह आने सफलता मिली।" बेला ने संक्षेप में कहा और फिर पूरी की पूरी कहानी कह सुनाई।

"शाबाश !" बेला की पीठ ठोंकते हुए ब्रह्मचारी बोला। "अच्छा बेला ! अब तुम्हें एक अभिनय और करना होगा।"

"वह क्या ?" बेला ने पूछा। "अब उनके पास कोई अधिकार नहीं। कोठी मेरे नाम है और मैं कम्पनी की मैनेजिंग डाइरेक्टर हूं। एक करोड़ में इक्यावन लाख के शेयर मेरे नाम हैं। मैं चाहूं तो मंत्री जी को एक मिनट में बाहर निकाल सकती हूं।" बेला ने कहा।

"नहीं।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी बोला, "अभी नहीं बेला ! अभी तुम्हें मंत्री जी की चाल देखनी है ! मंत्री जी असाधारण प्रतिभा के व्यक्ति हैं। उनको यों ही निकाल फेंकना तुम्हारी शक्ति की बात नहीं।"

"फिर क्या करना होगा मुझे ?" बेला ने पूछा।

"भारत सरकार ने भारतीय कला को प्रोत्साहन देने के लिए आचार्य किशनचंद के विशेष आग्रह पर सेठ गूदड़मल को एक रंगमंच बनाने का ठेका दिया है। उस रंगमंच पर मुझे एक खेल प्रस्तुत करना है। मैं जो कुछ आजकल कर रहा हूं वह सब उसी नाटक की आयोजना है। उस नाटक का नाम होगा 'मंत्री संकटानंद'"। ब्रह्मचारी ने कहा।

"मंत्री संकटानंद !" बेला ने पूछा।

"हां बेला ! उस नाटक में तुम्हें भी भाग लेना होगा।" गंभीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"मुझे भाग लेना होगा ? यह तुम क्या कह रहे हो आनंद बाबू ? मैंने तो नाटक में कभी भाग नहीं लिया। स्टेज पर जाकर मैं थर-थर कांपने लगूंगी।" सहमकर बेला बोली।

"काँपने क्यों लगोगी बेला ?" पीछे से प्रगट होती हुई सरोज बोली। "आनंद बाबू तुम्हें स्टेज पर पत्थर की शिला बनाकर जमा सकते हैं। जब मैं नृत्य करूँगी तो तुम एकदम स्थिर हो जाओगी।" मुस्कुराती हुई सरोज ने आकर बेला के गले में बांह डाल दीं और प्यार से बोली, "अच्छी तो हो न, बेला !"

"हां अच्छी हूं सरोज ! आपके आनंद बाबू के सुझाये मार्ग पर चल कर मैं अपना डगमगाता हुआ जीवन कुछ स्थिर कर सकी हूं।"

ब्रह्मचारी के प्रति बेला के नेत्रों में कृतज्ञता झलक उठी।

"एक बात तुम्हें और करनी है बेला ! वह सुन लो और फिर तुम्हारी आवश्यकता केवल मंच पर होगी।" गम्भीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"तब क्या मेरा यहां आना-जाना भी बन्द हो जायगा ?" मुस्कुराती हुई बेला बोली।

"नहीं बेला ! मैं अपने नाटक की बात कर रहा हूं। बुरा न मानना।" ब्रह्मचारी बोला।

"बुरा मैं अवश्य मानूंगी।" इठला कर नेत्र घुमाते हुए बेला ने कहा और वह सरोज के गले में हाथ डालकर लिपट गई।

"अच्छा अब आप कह डालिए जो आपको कहना है। हम लोग कहीं जाने वाले हैं।" सरोज ब्रह्मचारी की ओर मुख करके बोली।

"हम लोग से तुम्हारा अभिप्राय है तुम दोनों।" ब्रह्मचारी ने पूछा।

"जी हां।"

और ब्रह्मचारी ने बेला को समझाते हुए कहा कि वह किसी प्रेस में कुछ शेयर सर्टिफिकेट छपवा कर जाली बना डाले और उन्हें असली सर्टिफ़िकेटों के स्थान पर रख कर असली सर्टिफ़िकेटों को ब्रह्मचारी आनंदप्रकाश के पास पहुंचा दे।

यह बात सुनकर साधारणतया बेला का हृदय डगमगा उठता परन्तु ब्रह्मचारी के प्रति उसके मन में अगाध श्रद्धा जागृत हो चुकी थी। वे सर्टिफ़िकेट बेला और मंत्री संकटानन्द के लिए बहुमूल्य वस्तु थे परन्तु ब्रह्मचारी के लिए उनका कोई महत्व नहीं था।

बात भली प्रकार समझ कर बेला सरोज के साथ घूमने चल दी। सरोज की फ़िटन पर बैठ कर जाना बेला के लिए खतरे से खाली नही था क्योंकि यदि किसी ने भी उसे देख लिया तो चर्चा हुए बिना न रहेगी।

फ़िटन में बैठ कर बेला और सरोज दोनों जा रही थीं। बेला ने यह भी प्रश्न नहीं किया कि कहाँ जा रहे हैं और किधर जाना है। फ़िटन बराबर अपनी एक ही रफ्तार से चली जा रही थी और वे चलते-चलते बेला रोड पर पहुंच गई। जब सामने अन्धकार में जमना के पानी पर बेला की दृष्टि पड़ी तो वह सकपका कर बोली, "हम लोग कहां आ गये सरोज ?"

"बेला रोड पर।" मुस्कुराकर धीरे से सरोज ने कहा।

"बेला रोड पर !" बेला बोली, "परन्तु क्यों ! क्या तुम किसी विशेष अभिप्राय से कहीं जा रही हो सरोज ?"

"हां।" सरोज ने उत्तर दिया।

"किस अभिप्राय से ?" बेला ने पूछा।

"एक योग्य व्यक्ति पथ भ्रष्ट हो गया है बेला ! बड़ा विद्वान है। यदि वह विद्या पढ़ने और पढ़ाने का कार्य न छोड़कर उसी में लगा रहता तो उसका जीवन सफल हो जाता। वह कुछ कर जाता विद्या के लिए। परन्तु वह अपने पथ से जो फिसला तो बस फिसलता ही गया। एक धूर्त्त ने उसके सामन जीवन के वे स्वप्न लाकर खड़े किये कि वह अपनी वास्तविकता को भूल गया, अपने को भूल गया।" साधारण सरलता से कह रही थी सरोज।

बेला ने सुना और जो कुछ सरोज ने कहा वह उसके अपने जीवन पर पूर्ण

रूप से घट रहा था। वह एकदम आश्चर्यचकित होकर कह उठी, "वह कौन व्यक्ति है सरोज !"

"मैं तुम्हें उसके पास ले चल रही हूं बेला ! उस व्यक्ति को आज एक स्त्री की आवश्यकता है।" सरोज बोली।

"स्त्री की !" आश्चर्य प्रकट करते हुए बेला ने पूछा। "यह तुम क्या कह रही हो सरोज ?"

"हां स्त्री की बेला ! इसमें आश्चर्य की क्या बात है ? जब ऋषि च्यवन की समाधि टूटी थी तो उन्हें भी स्त्री की आवश्यकता हुई थी और एक स्त्री के बल पर उन्होंने च्यवन प्राश जैसी औषधि संसार को प्रदान की कि जिसके सेवन करने से बूढ़ा भी युवक हो जाता है।" और इतना कहकर सरोज खिलखिला कर हंस पड़ी।

"क्या मैं ही उपहास करने के लिए मिली हू सरोज !" मुस्कुरानी हुई बेला सरोज से लिपट कर बोली।

"उपहास नहीं बेला ! सच कह रही हूं।" सरोज ने कहा।

बातें इसी प्रकार चल रही थी और फिटन बराबर आगे बढती जा रही थी। जमना किनारे स्वामी ज्ञानानन्द की कुटिया पर जाकर फ़िटन रुक गई। फिटन रुकने पर सरोज खड़ी होकर उतरती हुई बोली, "उतर आओ बेला ! अब मैं तुम्हें उस व्यक्ति के दर्शन कराऊंगी जिसके विषय में मैं पीछे कहती आ रही थी।" और बेला सरोज के साथ फिटन से नीचे उतर पड़ी।

बेला का मस्तिष्क काम कर रहा था और उसने मन ही मन सोचा कि हो न हो यह स्वामी ज्ञानानंद जी की कुटिया है परन्तु स्वामी ज्ञानानंद की कुटिया पर इस समय सरोज का आना एक विचित्र बात है। सरोज को लेकर ही तो स्वामी ज्ञानानंद के जीवन ने पलटा खाया था। सरोज से उनका घोर विरोध है, विचारों का, आचरण का, सभ्यता का धर्म का, और उनका राजनीतिक दृष्टिकोण भी सरोज से नहीं मिल सकता। बेला की कुछ समझ में न आया परन्तु वह बराबर सरोज के पीछे चलती चली जा रही थी।

स्वामी ज्ञानानंद अभी-अभी संध्या से उठे थे और बगीचे के चबूतरे पर घूम रहे थे। कुटिया के सम्मुख फिटन को रुकता देखकर समझ गये, सरोज होगी।

"तुम्हारी आयु बहुत है सरोज ! अभी-अभी मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर

रहा था।" स्वामी ज्ञानानंद ने कहा।

रात्रि का अन्धकार था। चन्द्रमा के हलके प्रकाश में स्वामी ज्ञानानंद बेला को न पहचान पाये। चटाई पर बेला के साथ बैठती हुइ सरोज बोली, 'स्वामी जी आपने इन्हें पहचाना ?"

"मैं नहो पहचान सका सरोज !" असमर्थता प्रकट करते हुए स्वामी जी ने उत्तर दिया।

"यह वही बेला है स्वामी जी ! जिसकी खोज करते हुए एक दिन आप भूल से मेरी कोठी में घुस आये थे" मुस्कुराकर सरोज बोली।

"स्वामी जी ने मेरी खोज की ?" आश्चर्य प्रकट करते हुए बेला बोली।

"हां बेला ! तुम्हारी ही खोज करते-करते में एक दिन सरोज की कोठी में घुस गया और मेरा वहां जाना था कि मेरा जीवन बदल गया।" सरल स्वभाव से स्वामी जी बोले।

"परन्तु मेरी खोज की आपको क्या आवश्यकता हुई ?" उत्सुकतापूर्वक बेला ने पूछा और उत्तर सुनने के लिए स्वामी जी के मुख पर बड़े ध्यान से देखने लगी।

"तुम जानती हो बेला ! कि वकील साहब मेरे पुराने मित्र हैं।" स्वामी जी ने कहा।

"खूब जानती हूं।" बेला बोली।

"और तुम यह भी जानती हो कि उनको दुखी देखकर मुझे दुःख होता है।" उसी स्वाभाविकता से स्वामी जी ने कहा।

"इसका संबंध आपसे है। उन्हें दुखी देखकर आपकोदुःख होता है अथवा नहीं यह मैं किस प्रकार जान सकती हूं ? मैंने तो जीवन में यही देखा है कि अधिकांश व्यक्ति कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। रोते को रोकर रिझा देते हैं और हंसते को हंस कर उड़ा देते हैं।" बेला ने कहा।

ज़रा ठहर कर फिर बोली, "अच्छा यदि यह भी मान लिया जाय कि उन्हें दुःखी देखकर आपकी आत्मा द्रवित हो उठी तो फिर ?"

"तो फिर यहां है बेला ! कि तुम बहुत बदल चुकी हो और जिस बेला की खोज करने के लिए मैं परेशान था वह बेला तुम नहीं हो।" गम्भीर होकर स्वामी जी ने कहा।

"आपका अनुमान बिल्कुल ठीक है। यह बेला जो आपके सामने बैठी है वह बेला नहीं है जिसे जानवर की तरह खरीद कर वकील साहब लाये थे। इस बेला का मोल चुकाना उतना सरल नही है जितना उस बेला था जिसकी आप बात कर रहे हैं। आज अपना क्रय-विक्रय करने के लिए बेला स्वयं दूकान पर बैठी है। दलालों द्वारा उसका सौदा किसी अन्य को बीच में डालकर नहीं करना है।" तीव्र गति से विद्युत के समान नेत्र घुमाते हुए बेला ने कहा और बेला का तमाम बदन इस समय क्रोध के आवेश में कांप उठा।

बेला कुछ और कहना चाहती थी कि स्वामी जी बीच में ही बोल उठे, "तो तुम्हारे विचार से में तुम्हारी खोज अपनी दलाली का पैसा वसूल करने के लिए कर रहा था बेला ?" बेला के मुख पर गूढ़ दृष्टि से देखते हुए गम्भीरता पूर्वक स्वामी ज्ञानानंद बोले।

"यदि नहीं, तो मैं भी तो जानूं कि आप बेला की खोज में क्यों परेशान थे ? बेला के पास बुद्धि है। वह वकील साहेब के खूंटे से खुल कर जाने वाली वह गाय नही कि जिसकी खोज में आपको परेशान होना पड़े।" बेला उसी तीव्रता से कहती जा रही थी, "स्वामी जी ! वे दिन हवा हुए जब में आपकी चरण रज लेने के लिए दिन भर का व्रत रखती थी। अब मेरा जीवन प्रगति की ओर अग्रसर है और आप जैसे रुढ़िवादी व्यक्ति के लिए उसमे कोई स्थान नही।"

स्वामी जी चुपचाप सुनते रहे कि बेला क्या कह रही है और सरोज भी सुन रही थी। जब बेला चुप हो गई तो स्वामी जी गम्भीरतापूर्वक बोले, "अच्छा तो बेला ! अब तुम स्वतन्त्र हो ?"

"बिल्कुल स्वतन्त्र।" सीने में उभार लाकर बेला बोली।

"वकील साहब का तुम्हारे जीवन में कोई स्थान नही, कोई महत्व नहीं ?" उसी गम्भीरता के साथ स्वामी जी बोले।

"क्या स्थान है ? मैं आपसे ही पूछती हूं कि उनका क्या स्थान हो सकता है ? एक सूखे ठूंठ पर कही आपने बेला खिलता देखा है ?" गर्व के साथ बेला ने पूछा !

"परन्तु बेला ! यौवन भी स्थाई नहीं होता।"

"यह मैं जानती हूं !" गम्भीरतापूर्वक बेला ने उत्तर दिया।

"फिर इतना गर्व क्यों ?" स्वामी जी ने पूछा।

"फिर क्या ? गर्व स्वाभाविक है। कोई वस्तु कल नष्ट हो जायेगी इसलिए उसे आज ही नष्ट समझ लेना मूर्खता है।"

"बेला ! आज तुम प्रथम बार यहां आई हो। मेरा तुम्हारा सम्पर्क बहुत थोड़ा है। इस कुटिया में बैठ कर यदि तुम मुझे गालियां भी दोगी तो भी मैं सहन करूंगा और अब तो मुझे सहन करना सरोज ने सिखा दिया है। परन्तु एक बात याद रखना कि जो आज ठूंठ है वह सदा से ठूंठ नहीं था, वह आज भी ठूंठ नहीं है और उसके पास वह अमूल्य हृदय है कि जिसमें तुम्हारा देवि-स्वरूप आज भी उसी निखरे रूप में सुरक्षित है जिस रूप में वह पहले कभी था। तुम्हारे किसी प्रकार के किसी आचरण से भी उस स्वरूप को ठेस नहीं लगी। वह स्वरूप उस समय भी था जब तुम वहाँ रहती थीं। वह स्वरूप तब भी था जब तुम चली गईं, वह स्वरूप तब भी रहा जब उनकी मृत्यु-शय्या पर सेवा करने के लिए सरोज ने अपने जीवन का प्रत्येक क्षण उनके लिए लगा दिया और वही स्वरूप आज भी है जब वह एकान्त में बैठे अपनी पुस्तकों का अध्ययन करते रहते हैं।

उन्होंने कचहरी जाना बन्द कर दिया है। प्रैक्टिस छोड़ दी है, परन्तु लॉ का अध्ययन नहीं छोड़ा। गत मास में उन्होंने एक ऐसे कर्मचारी का एक केस लिया जिसकी कोर्ट फीस भी उन्होंने स्वयं अपने पास से दी। वह केस इतना जोरदार लड़ाया कि आजकल उनकी ख्याति मिलों के मजदूरों में बहुत हो गई है।

आज की बेला यदि वह बेला नहीं रही तो आज के वकील साहब भी वह वकील साहब नहीं रहे हैं बेला ! त्याग और तपस्या की उस महान मूर्ति ने आज दिल्ली के शोषित वर्ग के स्वत्वों की रक्षा के लिए अपना जीवन अर्पण कर दिया है। उस आदर्श व्यक्ति की परख तुम जैसी उच्छृंखल लड़की नहीं कर सकती बेला ! यह सच है।" और इतना कह कर स्वामी जी गम्भीर हो गए।

बेला मंत्र-मुग्ध सी सरोज के पास बैठी बहुत देर तक न जाने क्या-क्या सोचती रही। वकील साहब की बीमारी में सरोज का उनकी सेवा करना उसे ऐसा लगा कि मानो सरोज ने उसके मुख पर वह करारी चपत लगाई

कि उसका गाल लाल हो उठा । वह अधिक देर बैठी न रह सकी और सिटपिटाती सी बोली, "अच्छा सरोज ! अब हमें चलना होगा। समय काफी हो गया। मंत्री संकटानन्द आ गये होंगे। मुझे कोठी पर न पाकर कहीं उनके मन में कुछ शंकाएं जन्म न ले लें। इसलिए शीघ्र चलना चाहिए।"

स्वामी ज्ञानानन्द फिटन के पास तक दोनों को छोड़ने गये। चलते समय बेला ने स्वामी ज्ञानानन्द को हाथ जोड़कर प्रणाम किया और फिटन चल पड़ी।

: ५० :

आचार्य किशनचन्द आजकल चौबीस घंटे पार्टी के काम में व्यस्त रहते थे। भावी भारत का पूरा उत्तरदायित्व उन्होंने अपने कंधों पर उठा लिया था।

सरकार की सब शक्तियां आचार्य किशनचन्द के डिसपोज़ल पर (अधिकार में) थी। देश और विदेश के व्यापार के परमिटों को देते समय आचार्य किशनचन्द से परामर्श लिया जाता था। राजनीति की शतरंज में जहां जो मोहरा फिट बैठ जाता था वही उसे बिठाने का आचार्य जी परामर्श देते थे।

आचार्य किशनचन्द जी का कार्य कोई साधारण कार्य नहीं है। समस्त देश भर से मोहरे चुनना खाला जी का घर नहीं परन्तु आचार्य किशनचन्द जी का कार्य बहुत ही व्यवस्थित रूप से चल रहा है। जिस प्रकार किसी व्यापार को व्यापक बनाने के लिए बड़े-बड़े व्यापारिक केन्द्रों में दफ्तर खोल दिए जाते हैं उसी प्रकार इस समय कांग्रेस कमेटियां कार्य कर रही थी। परन्तु एक आपत्ति इस समय जो आचार्य किशनचन्द जी के सामने आ रही थी वह यह थी कि उन्हें कांग्रेस के सरकारी विभागों और कांग्रेस की कमेटियों के बीच समन्वय स्थापित करके चलना पड़ रहा था।

कांग्रेस ने राज्य पा लिया, ठीक हुआ। कांग्रेस का जो सब से ऊंचा तबक़ा था वह सरकारी आफिसों में घुस गया। उनके नाते रिश्तेदारों के भी गुलछर्रे उड़ने लगे, परंतु रह गया एक दूसरा समुदाय जिसके हृदय की जलन दिन प्रति-दिन बढ़ती जा रही थी। पहले तो सबसे बड़ा खेद उन्हें इस बात का था कि एक-एक बार जेल जाने वाले मंत्री और सैक्रेटरी बन गए और पांच-पांच बार जेल जाने वालों की उपेक्षा की गई। बात बहुत अनुचित थी और इसी प्रबल उक्ति के बल पर सोशलिस्ट पार्टी ने कांग्रेस के पुराने-पुराने महारथियों को अपनी ओर आकर्षित कर लिया। इन बेचारों का तो मानो जीवन ही संघर्ष के लिए भगवान ने बनाया था। अब इनके अतिरिक्त रहा वह दूसरा समुदाय जो पांच बार जेल जाने पर भी सरकारी पदों को प्राप्त न कर सका तो न सही परंतु उसने कांग्रेस कमेटियों को जकड़ कर पकड़ लिया और साथ ही कुछ ऐसे व्यक्तियों को भी साथ

ले लिया जो पहले कांग्रेस में केवल इसलिए जाने से भय मानते थे कि कांग्रेसी होने के माने कभी भी जेल जाना हो सकता था।

कांग्रेस में एक नई ताज़गी आ गई। नए आने वाले समुदाय ने इस पुराने बचे-खुचे समुदाय को लेकर भारत के राजकर्मचारी वर्ग पर छा जाना चाहा परंतु राज कर्मचारी वर्ग ने भी अंगरेजी सरकार के हथकंडे देखे थे। फिर वह भला इन नौसीखियों के हाथों में खेलने वाला कहां था ? कांग्रेस के सरकारी वर्ग को साथ लेकर वह नियम बनवाए कि कांग्रेस कमेटियां केवल खिलौना और उपहास की सामग्री बन गईं।

परन्तु इस पर भी उस समुदाय ने साहस को हाथ से नहीं जाने दिया और कांग्रेस कमेटियों को दांतों से भीच कर उस दिन की प्रतीक्षा में बैठ गए कि जब नए चुनाव होंगे और कांग्रेस पार्टी के हाथों में आगामी सरकार बनाने की शक्ति आएगी।

आज वह समय आ चुका था। आचार्य किशनचन्द जी इस पिछले जमे हुए वर्ग और सरकारी वर्ग के बीच में बैठ कर पुज रहे थे और दोनों ओर के विचारों वाले व्यक्तियों का तांता हर समय उनकी कोठी पर लगा रहता था। आचार्य किशनचन्द जी ने आने वाले व्यक्तियों से बातें करने के लिए कई कई अपने मंत्री रख लिए थे और उनका आफिस भी इस समय गवर्नमेंट आफ इन्डिया के दफ्तर से किसी प्रकार कम नहीं था।

आचार्य किशनचन्द के कार्यकर्ता दो प्रकार के थे, एक उनके व्यक्तिगत और दूसरे आफीशियल। व्यक्तिगत कार्यकर्ताओं में विशेष स्थान सेठ गूदड़मल का था। ठाकर राजबहादुर भी उनके घनिष्ठ सम्पर्क में आते जा रहे थे। आज सेठ गूदड़मल ने उन्हें सूचना दी कि उनके हाथों में एक ऐसी शक्ति आ गई है जिसके द्वारा सोशलिस्ट पार्टी के बढ़ते हुए प्रभाव को समाप्त कर सकते हैं।

आचार्य किशनचन्द अपनी खद्दर की मोटी धोती ऊपर चढ़ाते हुए बोले, "यार गूदड़मल ! जी चाहता है तुम्हें चूम लूं। मैं इस उच्च पद पर तुम्हीं जैसे मित्रों की बदौलत आ सका हूं। तुम्हारे उपकार से मैं दबा जा रहा हूं।"

"क्या कहने लगे आचार्य जी आप भी ? आप जैसे मित्रों के लिए तो मैं अपने प्राण भी न्यौछावर कर सकता हूं।" सेठ गूदड़मल बोले, "मैं सेठ भामा-

शाह का वंशज हूं।"

"बेला स्वयं मेरी कोठी पर आई थी।" सेठ जी ने कहा।

"आपकी कोठी पर!" आश्चर्य प्रकट करके आचार्य किशनचन्द बोले, "इस में कोई गहरी चाल न हो। आप जानते हैं मंत्री संकटानन्द का बच्चा बड़ा जहरीला सांप है।"

"यह मैं जानता हूं, परन्तु यदि मैंने कम्पनी के इक्यावन प्रतिशत शेयर मोल ले लिये तो आप निश्चित रूप से समझ लें कि मैं उस सांप को निगल जाऊंगा।" मुंह फैलाकर सेठ जी बोले।

आचार्य किशनचन्द ने सेठ गूदड़मल का फटा हुआ मुंह देखा तो उन्हें उसके अन्दर तीनों त्रिलोक दिखाई दिये और उन्हें विश्वास हो गया कि जिसे सेठ गूदड़मल हज्म करना चाहें उसे कोई नहीं बचा सकता। सरदार पटेल जिन राजे-महाराजों को सिसकता छोड़ गये उन्हें यमपुरी पहुंचाने का कार्य सेठ गूदड़मल ने किया। अपने महान नेता के उद्देश्यों की पूर्ति करने वाली इस महान आत्मा के चरणों में आचार्य किशनचन्द का मस्तक झुक गया और वह बड़ी श्रद्धा के साथ बोले, "सेठ जी एक बात कहूं।"

"कहिए आचार्य जी!" सेठ जी बोले।

"इस बार यदि कांग्रेस जीत गई तो रावण के स्वर्ण महल से भी सुन्दर आपका महल बनवा दूंगा। उस महल को देखने के लिए देश-विदेश से यात्री आयेंगे। भारत की प्रसिद्धि उस स्वर्ण-महल के कारण होगी और ताजमहल जैसी नाचीज इमारतें उसके सामने फीकी पड़ जायेंगी।" आचार्य जी ने कहा।

"कांग्रेस की विजय निश्चित है आचार्य जी! और आपका स्वप्न सत्य होकर रहेगा। मैं सोने का महल अवश्य बनाऊंगा और उस महल में आचार्य किशनचन्द का सोने के फ्रेम में जड़ा हुआ चित्र टांगा जायगा।" सेठ जी ने कहा।

"कहां टांगा जा रहा है आपका चित्र?" पीछे से आचार्य किशनचन्द की धर्मपत्नी ने आकर पूछा।

"बिल्लू की अम्मा! तुम उस समय आती हो जब किसी बहुत महत्व-पूर्ण बात का हल निकलना होता है।" आचार्य जी मुस्कुराते हुए बोले।

"तो लो मैं चली जाती हूं। कहीं तुम्हारी समस्या का हल निकलता-

निकलता बन्द न हो जाय।"

इतना कहकर आचार्य जी की पत्नी अन्दर जाने ही वाली थीं कि सेठ जी टोकते हुए बोले, "ठहरिये न ! आप तो व्यर्थ ही नाराज होकर लौट जाना जानती हैं।"

"लीजिए ठहर गई।" धम्म से ठहरते हुए आचार्य जी की पत्नी बोलीं "आपको भी यदि कोई ऐसी ही जली-कटी बात कहनी है तो आप भी कह डालिए। आखिर आप भी तो इनके ही मित्र हैं !"

सेठ जी मुस्कराकर आंखें मटकाते हुए बोले, "मैंने कहा मैं आपको एक लाभ की सूचना देने आया हूं।"

"लाभ की ?" आचार्य जी की पत्नी बोलीं। वह सेठ गूदड़मल से सटकर बैठ गईं।

सेठ गूदड़मल को वह आचार्य किशनचन्द का छोटा भाई मानती थीं और कभी-कभी बड़े प्यार में आकर देवर जी भी कहती थीं ! आजकल इनकी आत्मा बहुत प्रसन्न थी कि बड़े और छोटे भाई मिलकर किस प्रकार जीवन में सफलता पूर्वक आगे बढ़ रहे थे। सेठ गूदड़मल की योग्यता की प्रशंसा करती हुई कहा करती थीं, 'भगवान का लाख-लाख धन्यवाद है कि उसने उन्हें गूदड़मल जैसा मित्र दिया। यदि गूदड़मल जैसा मित्र इन्हें न मिलता तो हमें यह भूखा ही मार डालते।'

"हां देवर जी ! क्या कहने वाले थे आप ?" प्यार से आचार्य जी की पत्नी ने पूछा और फिर प्यार से बोली, "देख गूदड़ ! तू इतना काम न किया कर। रात दिन मरता रहता है। कुछ स्वास्थ्य की ओर भी ध्यान दिया कर। शीशे में मुंह देख कितना सूख गया है।"

सेठ गूदड़मल बोले, "पूरा एक लाख बचा है।"

"एक लाख !"

इसी समय कुछ बाहर के मिलने वाले व्यक्तियों के कार्ड चपरासी लाया और सेठ जी ने बिदा ली। चलते समय गूदड़मल जी ने चुपके से खद्दर के रूमाल में बंधी रुपयों की एक गड्डी किशनचन्द की स्त्री के हाथों में दे दी।

: ५१ :

सेठ गूदड़मल यहां से निकलकर सीधे अपनी कोठी पर पहुंचे और वहां जाकर न जाने कितनी देर तक विचारों में निमग्न बैठे रहे। सेठ जी भी अपने को देश की राजनीति का कर्णधार मानते थे।

सेठ जी का व्यक्तित्व बहुत ऊंचा था। उनके मन में न तो किसी के प्रति विद्वेष था और न किसी के प्रति विशेष प्रेम। सभी इन्हें अपना मित्र समझते थे और यह अपने को सबका मित्र बनाने का भरसक प्रयत्न करते थे।

सेठ जी अपने को कूटनीति का ज्ञाता मानते थे और राजदंड संभालने वाले आचार्य लोगों पर इनकी धाक थी। जल में कमल के समान सेठ जी हर समय प्रफुल्लित रहते थे और इनकी दृष्टि शतरंज के सभी मोहरों पर समान रूप से कार्य करती थी। जिस मोहरे को जिस समय यह बढ़ता हुआ देखते थे उस समय उसी को अपनी बुद्धि और अपने धन का बल प्रदान कर देने में यह एक क्षण भी नहीं चूकते थे। किसी को सहायता देने का सुन्दर अवसर खोज निकालने में सेठ जी निपुण थे। अवसर को हाथ से खो देना सेठ जी ने नहीं सीखा था और उनके धन ने सेठ जी के इस लक्ष्य की पूर्ति में सर्वदा उनका साथ दिया।

सेठ गूदड़मल ने दस लाख रुपया मंत्री संकटानंद को यह कहते हुए ही दिया था कि वह ठाकुर राजबहादुर के आगामी चुनाव-प्रोग्राम को बल देने के लिए दिया जा रहा है। और दूसरे ही दिन मंत्री संकटानंद और सेठ गूदड़मल ने एकांत में बातें करके ठाकुर साहब का पत्ता काट दिया।

परंतु यह रहस्य ठाकुर साहब पर विदित नहीं हुआ कि इसके मूल में सेठ गूदड़मल थे।

ठाकुर साहब का पत्ता साफ़ हो जाने पर सेठ जी ने सोचा था कि मंत्री संकटानंद को तो योंही दस बीस हजार का चक़मा देकर ठीक कर लिया जायेगा परंतु बात इसके विपरीत निकली। सेठ जी जानते थे कि मंत्री जी को कांग्रेस के मैदान में दाल गलने वाली नहीं क्योंकि वहां आचार्य किशनचंद

जैसे घाग जिनके चाटे वृक्षों पर पत्ते नहीं आते बैठे थे परंतु उन्हें यह पता नहीं था कि मंत्री जी इतनी फुर्ती के साथ करवट बदल कर सोशलिस्ट पार्टी के इतने बड़े कार्यकर्त्ता बन जायेंगे कि जिनका ध्यान स्वप्न में भी आचार्य किशनचंद को परेशान करने लगेगा।

सेठ गूदड़मल अपने दस लाख को मिट्टी में मिला समझ कर उनकी ओर से विरक्त हो गये थे, परंतु मंत्री संकटानंद की इस नवीन राजनीतिक प्रगति ने सेठ जी को आकर्षित किया और वह पिछले मूल को उभारने के लिए फिर उदार-हृदय बनकर मंत्री जी के घनिष्टतम मित्रों में माने जाने लगे और जी खोल कर मंत्री जी की सहायता पर उतारू हो गये।

इधर कुछ दिन से सेठ गूदड़मल को दिल्ली के राजनीतिक वातावरण में एक नई ही चहल-पहल दिखाई दे रही थी।

एक दिन कचहरी में वह आने किसी केस के सिलसिले में गये थे। उनके केस से पूर्व अदालत में किसी मज़दूर का एक केस चल रहा था। उस केस की बहस में उन्होंने क्या देखा कि एक सूखा सा पतला दुबला वकील, जिसका शरीर चार हड्डियों का ढांचा था, उछल-उछल कर एक मोटे बैरिस्टर की छाती पर चढ़ा जा रहा था। अदालत में बड़ी भारी भीड़ थी और किसी मिल के न जाने कितने मज़दूर उस केस को सुनने के लिए आये हुए थे। वह वकील मजदूरों का नेता था। उसने ऐलानिया कह दिया था कि अब धनपति मज़दूर का रक्त-शोषण नहीं कर सकेगा।

इसी समय बेला वहाँ आगई और बोली, "आप यहां विराजमान हैं। मैंने अभी फ़ोन किया तो मुनीम जी ने कहा कि आप यहां नहीं है? मैं इधर से गुज़री तो सोचा एक पर्चा आपके नाम पर छोड़ती चलूं। आपसे बड़ा आवश्यक कार्य था।"

"मेरा सौभाग्य होगा कि मैं आपके काम आ सकूं।" सेठ जी ने कहा।

बेला मुस्कराती हुई बैठ गई और फिर पीछे सोफ़े से कमर लगाती हुई बोली, "सेठ जी! यह जीवन व्यर्थ हो गया।" और इतना कह कर बेला ने एक लम्बी साँस ली।

"क्या बात हुई बेला देवी? मैं आपकी क्या सहायता कर सकता हूं?"

"सहायता!" इतना कह कर चुप होकर फिर बेला गंभीरतापूर्वक बोली,

"आप नहीं कर सकते।" और एक क्षण के लिए नेत्र बंद कर लिए।

सेठ जी बेला की यह दशा देकर आवश्यकता से अधिक भावुक हो उठे। वह समझ गये कि बेला के साथ अवश्य धूर्त्त मंत्री के बच्चे ने कुछ अत्याचार किया होगा जिससे यह इतनी दुखी है।

मन में आया कि वह कह दें, 'बेला तेरे ऊपर मेरा सर्वस्व न्यौछावर है। तू जो चाहे माँग ले। मैं तेरे लिए क्या नहीं कर सकता? मेरी शक्ति असीम है। संसार में जो कार्य संभव है वह मेरी शक्ति से बाहर नहीं हो सकता।'

सेठ जी इस प्रकार के विचारों में निमग्न थे कि बेला खड़ी होकर बोली, "अच्छा सेठ जी! नमस्कार! मेरा चित्त इस समय बहुत खिन्न है। फिर किसी समय भेंट करूंगी।"

सेठ जी की समझ में कुछ न आया। वह अवाक् से खड़े होकर नमस्कार स्वीकार करते हुए रह गए और एक शब्द भी मुख से न निकला।

आज बेला उनके मन की इस धारणा को स्थिर बना कर चली गई कि बेला एक पहेली है जिसे हल करना सरल काम नहीं।

सेठ जी ने दृढ़ संकल्प कर लिया कि वह बेला को मंत्री जी के पंजे से छुड़ा कर दम लेंगे। बेला यद्यपि संकोचवश कुछ न कह सकी परंतु उसके भावों को पढ़ने में सेठ जी भूल नहीं कर सकते थे।

: ५२ :

"वकील साहब ! अपने तो अपना जीवन ही बदल डाला।" मुस्कुराते हुए सरोज बोली। "क्या उस मकान पर ताला लगा दिया ?"

"हां सरोज ! मेरा जीवन बदल गया। बदलने का प्रयास मैंने नहीं किया परंतु एक दिन अचानक मेरे मन में रुपए के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई।

मैं एकांत में बैठा-बैठा सोच रहा था कि आखिर क्यों बेला मंत्री संकटानंद के जाल में फंसी ? क्यों मुझ पर मंत्री संकटानंद जैसे धूर्त का प्रभाव पड़ सका ? क्यों ठाकुर राजबहादुर जैसा बदमाश मेरे घर में आ सका ? यह सब मेरे रुपए के प्रति आकर्षण के कारण हुआ।" वकील साहब बहुत गम्भीरता-पूर्वक बोले।

तभी एक चाबियों का गुच्छा सरोज को देते हुए कहा, "लो सरोज ! यह गुच्छा बेला को दे देना। कल स्वामी ज्ञानानंद से पता चला था कि बेला तुम्हारे साथ उनकी कुटिया पर आई थी और वह कहीं रहती भी तुम्हारी ही कोठी के पास है।"

"यह क्या ?" चाबियों का गुच्छा हाथ में लेते हुए सरोज ने पूछा।

"यह बेला की चाबियों का गुच्छा है सरोज ! जिस मकान में हम लोग रहते थे वह मकान बेला का है और उसके अन्दर का सब सामान भी। मैंने सब जगह ताले लगा कर यह गुच्छा अपने पास रख लिया था।" नीचा सिर किए हुए वकील साहब बोले। सरोज ने अनुभव किया कि इस समय वकील साहब का मन बहुत भारी हो आया था और उनके नेत्र पसीज गये थे।

"इसे आप अपने ही पास रहने दीजिए वकील साहब !" सरोज धीरे से बोली। "बेला ने नादानी में जो कुछ किया है उससे आपके हृदय पर चोट लगी है। परन्तु आपकी अपनी कमजोरियां भी कम नहीं थीं। आपत्ति-काल में मनुष्य कभी-कभी आवश्यकता से अधिक भावुक हो उठता है। आपके हाथ अशक्त थे और बेला को आवश्यकता थी सशक्त हाथों की। एक के अभाव में दूसरे की ओर झुक जाना मानव की वह कमजोरी है जिसके लिए उसे दोषी

नहीं ठहराया जा सकता !"

"मैं किसी को दोषी कहां ठहरा रहा हूं सरोज ?" वकील साहब ने कहा। और व्याकुल नयनों से सरोज के उन्नत मस्तक पर दृष्टि डाली।

"दोषी नहीं ठहरा रहे हैं तो यह चाबी का गुच्छा क्यों दे रहे हैं ?" इसे बेला के पास भेजकर आप अपनी महानता बेला पर प्रदर्शित करना चाहते हैं ? बेला आज वह बालक नहीं जो जरा में रो उठे और जरा में खिल-खिलाती हुई आपसे आकर लिपट जाये।" सरोज ने गम्भीरतापूर्वक कहा और फिर मुस्कुराकर बोली, "वकील साहब ! आप पचास वर्ष की उम्र में भी जवान हैं और बेला को बीस वर्ष की आयु में भी जवानी का अधिकार देना उचित नहीं समझते।

बेला के चले जाने पर आपका बूढ़ा दिल ठेस खाकर ऐसा विकल हुआ कि आप एक दम मजदूर दल के नेता बन बैठे। घर-बार सब कुछ त्याग दिया और इस मैदान में कुटिया बना कर रहना प्रारम्भ कर दिया। संन्यास लेने की ही यदि इच्छा थी तो बेला से विवाह ही क्यों किया था ?"

"बेला की बात न कहो सरोज ! काश, मैं हृदय चीर कर तुम्हें दिखा सकता कि उसमें बेला के लिए आज भी वही स्थान है !" गम्भीर होकर एक आह भरते हुए वकील साहब बेंच से खड़े हो गए।

"हृदय चीरने की आवश्यकता नहीं है वकील साहब ! परन्तु आपने जो इस कुटिया पर कम्यूनिस्ट पार्टी का यह झंडा लगाया है यह मुझे बहुत अच्छा लग रहा है। आज आप वास्तव में मजदूरों के प्रतिनिधि बन गये। बेला ने आपके पास से जाकर आपको प्रगति का मार्ग सुझाया। मैं सच कहती हूं कि उसका आपके पास से जाना अच्छा ही हुआ।" कहते हुए सरोज मुस्करा दी।

"अच्छा हुआ ?" क्रोध में भरकर वकील साहब बोले, "यह तुम क्या कह रही हो सरोज ! वह मेरे जीवन में आग लगाकर चली गई।"

"तभी तो क्रान्ति का अमर संदेश तुम्हारी आत्मा में समा गया वकील साहब ! आपकी आंखें भी खुल गईं। आप रुपये के पीछे इस तरह पागल हो कर दौड़ रहे थे कि न्याय और अन्याय का ध्यान त्याग कर केवल रुपया ही आपके जीवन का लक्ष्य बन गया था। वकालत के पेशे को भी बदनाम कर रहे थे आप। आपस में अपने मित्रों को लड़ाने में आपकी तर्क-बुद्धि का प्रयोग होता था।

जिन स्वामी ज्ञानानन्द को धर्म-गुरु मान कर आप पूजा करते थे उन्हीं से वकील बन कर रुपया ऐंठना चाहते थे। आपने बेला को भी धन-प्राप्ति के साधन स्वरूप प्रयोग करने का प्रयत्न किया और फलस्वरूप जो हुआ वह सामने आया।

इसी पर आप कहते है कि आपके हृदय में बेला के लिए कसक है, टीस है, पुकार है। आज बेला आपके पास नहीं है। फिर क्यों व्यर्थ अपने को धोखा देते हैं आप ?"

वकील साहब चुप थे। सरोज के सामने बोलने का उनमें साहस नही था। सरोज ने देखा कि उनके नेत्रों में दो आंसू छलक आये थे।

सरोज खड़ी होती हुई बोली, "अच्छा वकील साहब ! मैं अब चली। लाइए वह चाबियों का गुच्छा और आप अब इस ढकोसलेबाजी को छोड़ दीजिए। व्यर्थ का ढोंग रचना व्यर्थ है। बेला पर इसका कोई प्रभाव नहीं होगा। इसके विपरीत यदि आप अपनी कमजोरी को लेकर जीवन में सीधे-सादे चलेंगे तो ठीक होगा।"

"तब क्या सरोज ! तुम मेरे आज के जीवन को ढकोसला समझ रही हो ? तुम भूलती हो सरोज ! तुमने मेरे आज के जीवन की परख मेरे पुराने जीवन की रूपरेखा में करने की भूल की है। इसके अतिरिक्त मैं और कुछ नहीं कहूंगा।

आज मैं एक मज़दूर हूं और मज़दूर का ही जीवन व्यतीत कर रहा हूं। मेरा जीवन अब मजदूर के लिए है और मैं कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य हू। यह प्लाट जिसमें यह झोंपड़ी मैंने डाली हुई है, मैं कम्यूनिस्ट पार्टी को दे चुका हूं। बेला के मकान पर मेरा कोई अधिकार नही। ये चाबियां तुम्हें सौंप कर आज मैं एक ऐसी जिम्मेदारी से मुक्त हो जाना चाहता हूं जो व्यर्थ मेरे जीवन की परेशानी बनी हुई थी।" इतना कह कर वकील साहब ने चाबियों का गुच्छा सरोज के हवाले कर दिया।

सरोज गुच्छा लेकर अपनी फिटन में जा बैठी और वकील साहब फिटन तक सरोज को छोड़ने के लिए गये। सरोज चलते समय बोली, "नमस्कार ! यदि ला सकी तो एक दिन बेला को आपके पास लाने का प्रयत्न करूंगी।"

: ५३ :

वकील साहब के यहां से सरोज स्वामी ज्ञानानंद की कुटिया पर पहुंची और देखा कि वह किसी संस्कृत के ग्रंथ का अध्ययन कर रहे थे। सरोज को आती देखकर स्वामी जी ने ग्रंथ बंद कर दिया और मुस्कुराकर बोले, "आओ सरोज ! बैठो।"

सरोज ने चटाई पर बैठकर पूछा, "क्या पढ़ाई चल रही थी ? कोई संस्कृत ग्रंथ है क्या ?"

"हां सरोज ! शकुन्तला पढ़ रहा था। शकुन्तला का वर्णन पढ़ रहा था कि तुम सामने से आ गईं।"

"तो आपकी कल्पना मुझे ही शाकुन्तल मान बैठी, यही बात है ना !" हंसती हुई सरोज स्वामी जी की बात बीच में ही काट कर बोली।

"तुम्हारा अनुमान ठीक है सरोज ! और मैंने कल यह निश्चय कर लिया है कि मैं राजनीति के चक्कर से अपने को बिल्कुल मुक्त कर लूंगा।" स्वामी जी गम्भीरता पूर्वक बोले।

"सच !" सरोज बोली।

"आज रात्रि को स्वप्न में एक देवि ने दर्शन देकर कहा कि मुझे राजनीति को छोड़ कर विद्या और कला के मंच पर आना चाहिए।" स्वामी जी बोले।

"मैं जान गई स्वामी जी !" सरोज बोली।

"क्या जान गईं तुम ?" स्वामी जी ने पूछा।

"वह देवि मैं ही ती थी !" सरोज सामने बैठी मुस्कुरा रही थी।

"तुम थीं वह देवि !" स्वामी जी अवाक् रह गए।

"वेश्या-पुत्री के मंच पर बैठ कर उपदेशक बनने के लिए कलेजा चाहिए स्वामी जी !" इतना कह कर सरोज खड़ी होने लगी।

"बैठो सरोज ! क्या रूठ कर जा रही हो ?" स्वामी जी ने पूछा।

"बिल्कुल नहीं। आपको और विचारने के लिए समय दे रही हूं। मेरे साथ एक बार यदि आपका पग उठ गया तो फिर पीछे लौटना कठिन हो

आयेगा। यह 'हिंदू कोड बिल विरोध' की समस्या नहीं है। यह है जीवन का वह अभिनय जिसमें चेला गुरू और गुरू चेंला होगा।" सरोज गम्भीरतापूर्वक बोली।

"यह क्या कह रही हो सरोज ! तुम आज मुझे पागल बना कर जाओगी यहां से।" स्वामी जी मौन हो गए।

सरोज नमस्कार करके उठ खड़ी हुई। फिटन पर सवार होकर कोचवान से बोली, "कोठी चलो ! आज का कार्य समाप्त हो गया।"

फिटन चल पड़ी।

: ५४ :

ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश अपने नाटक की योजना में व्यस्त थे। उन्होंन अपने मन में यह निश्चय कर लिया था कि वह अपने नाटक में ऐसे सजीव पात्र प्रस्तुत करेंगे कि जो न केवल अभिनय द्वारा ही किसी विषय का प्रतिपादन करेंगे वरन् उनका जीवन भी उस विषय का ज्वलंत उदाहरण बन कर दर्शकों के सम्मुख आयेगा। आचार्य किशनचन्द चाहते थे कि नाटक ऐसा हो जिसे देखकर वोटर उन्मुक्त कंठ से कह उठें 'वाह वाह कांग्रेस सरकार ने खूब काम किया। भारत में रामराज्य ला दिया। चाहे अन्न उधार लेकर ही जनता की उदर पूर्ति की परन्तु जनता को भूखों नहीं मरने दिया।'

ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश से आचार्य किशनचन्द को बड़ी बड़ी आशाएं थीं। सरोज जैसी कला अभिनेत्री जब कांग्रेस का झंडा लेकर स्टेज पर उतरेगी तो क्या मजाल है कि एक भी वोटर खिलाफ जा सके। सेठ जी आचार्य किशनचन्द को विश्वास दिला चुके थे कि उनकी यह नाटकों द्वारा चुनाव लड़ने की नवीन नीति भारत की जनता में क्राति का वह अमर संदेश फूंक देगी कि जनता की नसों से जो कांग्रेस के प्रति श्रद्धा लुप्त होती जा रही है वह फिर लौट आयेगी।

इसी समय सरोज की फिटन पोर्टिगो में आकर रुकी और ब्रह्मचारी ने गर्दन उठा कर देखा तो सरोज सामने से झूमती हुई आ रही थी। सरोज की घुंघराली, अलकें कानों में बल खाकर कुछ ऐसी लिपट गई थी कि आनंद बाबू उन्हें देखकर पूछ ही बैठे, "क्यों सरोज ! बाहर मज़ेदार हवा चल रही है।"

"बहुत मजेदार" सरोज ने इठलाकर कहा।

"तो फिर चलो बाहर लॉन में बैठेंगे। आज सुबह से लिखता-लिखता थक गया हूं।" खड़े होते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

"तब क्या आप जब से मैं गई थी लिखने पर जुटे हैं ?"सरोज ने पूछा।

"और नहीं तो क्या ? नाटक का अन्तिम दृश्य लिख रहा हूं। नाटक

समाप्त कर चुका हूं सरोज परन्तु पात्र अभी पूरे नहीं हो पाये।" ब्रह्मचारी ने कुछ चिन्तित मन से कहा।

"क्यों ? आपके विचार से सब से कठिन स्वामी ज्ञानानन्द जी को मनाना था, सो उनसे मैं अनुमति लेकर आ रही हूं।" मुस्कुराकर सरोज बोली।"

"तुम बहुत प्रवीण हो सरोज ! वास्तव में पुरुष अकेला कुछ नहीं कर सकता। इस नाटक की योजना मेरे जीवन का एक महान कार्य होगा और इसकी सफलता का पूरा श्रेय तुम्हारे सिर रहेगा सरोज !" गम्भीरतापूर्वक ब्रह्मचारी ने कहा।

"तो फिर इस श्रेय का एक राजमुकुट बनवा कर तैयार करा लीजिए।" मुस्कुराते हुए सरोज ब्रह्मचारी का हाथ अपने हाथ में लेकर बोली "कहीं ऐसा न हो कि अवसर पड़ने पर आप खोजते ही रह जाएं कि इस श्रेय के उपलक्ष में आप मुझे क्या प्रदान करें ?"

सरोज की हल्की-सी मुस्कान में ब्रह्मचारी की तमाम दिन की थकावट न जाने कहां विलीन हो गई। ब्रह्मचारी का मन इस समय बहुत प्रसन्न था। उसने सरोज के मुख पर इस प्रकार देखा मानो जो कुछ वह चाहता था वह वहां वर्तमान था और सरोज अपने जीवन का इच्छित लक्ष्य पा चुकी थी।

संध्या का समय था। अंधकार धीरे-धीरे अपने पर फैला रहा था। इसी समय बेला आ गई। सरोज और ब्रह्मचारी ने खड़े होकर बेला का स्वागत किया और फिर तीनों मिल कर कोठी में चले गये। अन्दर बैठते ही बेला ने इक्यावन लाख के शेयर, सर्टिफ़िकेट ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश के हाथों में देते हुए कहा, "यह लीजिए आनन्द बाबू ! इनके स्थान पर जाली सर्टिफ़िकेट मैंने रख दिये हैं; परन्तु आज मेरा मन कुछ विचलित-सा हो उठा है। पता नहीं क्यों, मैं कुछ घबरा सी रही हूं।"

"तुम्हारे घबराने का कारण मैं जानता हूं बेला ! परन्तु तुम्हारे ये शेयर मेरे लिए मिट्टी के तुल्य हैं....."

"यह मैं नहीं कह रही आनंद बाबू ! आप गलत समझे। मुझ से एक भूल हो गई, जिसे अनुभव करके इस समय मेरा मस्तिष्क चकरा रहा है।" बेला ने कहा।

"तुमने सेठ गूदड़मल पर तो कोई रहस्य नहीं खोल दिया बेला !" चिंतित

होकर ब्रह्मचारी ने पूछा।

"खोला तो कुछ नहीं आनंद बाबू ! परन्तु यदि खुल गया हो तो मैं कुछ कह भी नहीं सकती।" परेशानी की दशा में बेला बोली।

"अच्छा खुल जाने दो ! यह तो सब एकदिन खुलना ही है। नाटक का केवल अन्तिम दृश्य शेष है। अब तुम्हें वहां जाने की आवश्यकता नहीं। यहां रहकर तो तुम्हें भय नहीं लगेगा बेला ! आत्म-विश्वास के साथ उत्तर दो !" ब्रह्मचारी ने पूछा।

"आपके साथ रह कर तो मैं दैत्य के मुख पर भी लात मार सकती हूं। काल से भी दो हाथ कर सकती हूं आनंद बाबू !"

"तब ठीक है। आज से तुम मेरे नाटक की प्रधान अभिनेत्री हो।" ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश ने कहा।

"और सरोज !" बेला ने पूछा।

"सरोज तुम्हारे साथ रहेगी। जब जब तुम पर कोई अपत्ति का समय आयेगा यह तुम्हारी सहायता करेगी।" इतना कह कर ब्रह्मचारी ने नाटक की पांडुलिपि बेला के हाथ में दे दी। "बस अन्तिम दृश्य शेष है। कल उसे पूरा कर दूंगा और परसों तक सेठ गूदड़मल का स्टेज तय्यार हो जायगा। इसी नाटक से भारतीय रंगमंच का उद्घाटन होगा। बड़ी-बड़ी आशाओं को लेकर इस रंगमंच का निर्माण हुआ है। कह नहीं सकता कहां तक मेरा नाटक उन आशाओं पर तुषारापात नहीं करेगा ?" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

"तो यों कहिए कि इतने दिन से आप लोगों का ही खाका खीचने पर तुले थे।" बेला आखें मटकाकर बोली, "यह में अब आपको नहीं दूंगी।"

"नहीं दोगी ! न भाई ऐसा कहीं न कर बैठना। इसकी नकल करने में मैंने भी अपनी कई रातें लगाई हैं।" इतना कहकर सरोज बेला की गर्दन में हाथ डालकर उसे जोर से दबाते हुए हंस पड़ी।

तभी चपरासी ने ठाकुर राजबहादुर के पधारने की सूचना दी। ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश बोले, "लो सरोज यह काम भी पूरा हो गया। ठाकुर साहब के पास तुम्हें जाना होता, सो वह स्वयं ही आ गये।"

"आ तो गये, परंतु मुझे इस व्यक्ति से बहुत घृणा है आनंद बाबू ! यह व्यक्ति भी मंत्री संकटानंद से कम धूर्त्त नहीं है। मैं इसका मुंह देखना भी पसंद

नहीं करती ।" खड़ी होती हुई बेला बोली । परंतु ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश ने बेला का हाथ पकड़ कर बिठलाते हुए कहा, "बेला ! तुम बड़ी बावली हो । तुमको नाटक की प्रधान अभिनेत्री मैं घोषित कर चुका हूं । इस समय तुम अभिनय कर रही हो । अभिनय में कहीं रूठा जाता है ? तुम्हारा तो चुटखियां लेने का अवसर ही अब आया है और अब तुम क्रोध में आकर उसे गंवा देना चाहती हो ।"

"परन्तु मैं इनसे घृणा करती हूं आनंद बाबू !" मुंह चढ़ाकर बेला फिर बोली ।

"मैं मानता हूँ तुम्हारी बात बेला ! ठाकुर साहब से घृणा करना बन्द करके तुम उन्हें प्रेम करने लगो यह मैं तुमसे कभी नहीं कहूंगा, परंतु आज तुम्हें अवसर मिला है उन व्यक्तियों के जीवन से खिलवाड़ करने का जो तुम्हारे जीवन से एक बार खेलने का सफल प्रयत्न कर चुके हैं । मैं तुम्हें आदर्शवादी बनकर उन्हें क्षमा करने के लिए कभी नहीं कहूंगा । मैं चाहता हूं कि तुम अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहो और अपने जीवन के साथ उपहास करने वालों के साथ उपहास न करना चाहो तो उन्हें एक बार दहलाना तो सीख जाओ ।" ब्रह्मचारी ने कहा ।

"जो आप कहेंगे मैं वही करूंगी आनंद बाबू !" और इतना कहकर बेला चुपचाप मुस्कुराने का अभिनय करते हुए सोफ़े पर बैठ गई ।

ठाकुर साहब मूछों पर ताव देते हुए अपनी शेरवानी को सवांर कर बैठक में आये । एक सोफ़े पर सामने सरोज बैठी थी और दूसरे पर सामने ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश और बेला आपस में सटे हुए बैठे थे । बेला का हाथ ब्रह्मचारी के हाथ में था । सरोज ने ठाकुर साहब को खड़े होकर नमस्कार किया, परंतु ब्रह्मचारी ज्यों का त्यों बेला के हाथ को अपने हाथ में सहलाता हुआ मुस्कान भरी मुद्रा में बैठा रहा और ठाकुर साहब के कुर्सी पर बैठने पर पूछा "कहिए ठाकुर साहब ! चैन की बंसरी बज रही है । पाँचों उंगलियाँ घी में हैं ! सरकार अपनी है । रौब-ही-रौब है ।"

"जी हाँ ।" मुख पर ऊपर से मुस्कान लेकर जलते हृदय से ठाकुर साहब एक लम्बा सांस लेकर बोले "आप जो कुछ भी न कह दें वही कम है ब्रह्मचारी जी ! संसार में रहकर स्वर्ग का आनंद भोग करना भगवान ने आपके

भाग्य म लिखा है।"

"सचमुच ठाकुर साहब ! मेरी यह कोठी स्वर्ग से कम नहीं है !" मुस्कुरा कर सरोज बोली।

"स्वर्ग, बिल्कुल स्वर्ग सरोज ! इसीलिए तो डरते-डरते इधर आता हूं।" ठाकुर साहब व्यंग्य की पुट देकर बोले।

"परंतु आप जानते हे कि स्वर्ग की ओर जाने से कौन भयभीत होता है।" बेला बोली।

"ठाकुर साहब देश के कर्णधारों में से है। इनके कर कमलों द्वारा जाने कितनी विधवाओं का उद्धार हुआ है, कितनी बालिकाओं को मुंह माँगे दाम मिले हैं। मैं ठाकुर साहब को कलयुगी कर्ण के नाम से पुकारता हूं। एकांत में इनका ध्यान करता हूं तो मुझे यह कर्ण से भी ऊँचे प्रतीत होते है। मंत्री संकटानंद के मित्र ही है।" ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश बोले।

"मंत्री संकटानंद के मित्र !" ठाकुर साहब बोले और समझ गये कि आज खूब भीगी-भीगी फटकारें सुनने को मिलेंगी। ठाकुर साहब यहाँ आते हुए इसीलिए सकुचाते थे कि ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश इन्हें जब भी यह यहाँ आते थे तो आड़े हाथों लेते थे। परंतु सरोज के प्रति इनका आकर्षण इतना अधिक था कि कभी-कभी फटकारें सुनकर भी उसके दर्शनों के लिए यह अवश्य आ पधारते थे। ब्रह्मचारी की इन फटकारों की ओर ध्यान देना उन्होंने अब बन्द कर दिया था। आज बेला को यहाँ देखकर ठाकुर साहब के तन बदन में आग लग रही थी और उन्हें ब्रह्मचारी और बेला से अधिक मंत्री संकटानंद पर क्रोध आ रहा था कि उस धूर्त्त ने उन्हें भली प्रकार बेला के सम्पर्क में नहीं आने दिया।

ठाकुर साहब मुस्कुराते हुए बोले, "बस भर पाये मंत्री संकटानंद से। ऐसा बिच्छू का बच्चा निकला वह तो कि बस क्या कहूं ? मेरे उसने वह डंक मारा है कि मैं जीवन भर तड़पता ही रहूंगा।" और एक लम्बी आह भर कर आँखें बंद करते हुए ठाकुर साहब कुर्सी के तकिये से कमर लगा कर बैठ गए।

ठाकुर साहब ने इस समय अभिनय में वह कला प्रदर्शित की कि उसे देख कर ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश मुस्करा उठे।

"ठाकुर साहब ! यदि बुरा न माने तो आपसे आज एक बात पूछूं।"

ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश बोले ।

"अवश्य पूछो ब्रह्मचारी ! अवश्य पूछो ।" ठाकुर साहब ने उत्तर दिया "आज तुमसे एक बात की प्रार्थना करता हूं ब्रह्मचारी ! और वह यह कि तुम यदि चाहो तो मैं जीवित रह सकता हूं ।" इतना कह कर ठाकुर साहब गंभीर हो गये ।

"मैं यदि चाहूं तो आप जीवित रह सकते हैं अन्यथा....." हंसी रोक कर ब्रह्मचारी ने पूछा ।

"अन्यथा ! मैं आज मृतक ही हूं ब्रह्मचारी ! मेरा जीना ही क्या है ? मैं वह पक्षी हूँ जिसके डाली पर बैठते ही डाली टूट जाती है, जिसके घोंसले में घुसते ही घोंसला जल उठता है । मेरे जीवन का कोई महत्व नहीं रह गया है अब ब्रह्मचारी ! संसार मुझे शक की दृष्टि से देखता है । जिस पर मैं प्राण न्यौछावर करना चाहता हूं वह मुझे धूर्त्त समझता है । फिर तुम ही कहो कि मेरे जीने का आज क्या महत्व है ?" कहते हुए ठाकुर साहब बहुत गंभीर हो गये ।

सरोज और बेला प्रभावित हो रही थीं ठाकुर साहब की बातों से । ब्रह्मचारी ठाकुर के तीखे और पैने बाणों की मार से अपरिचित नहीं था और अधिक बहकने के लिए ठाकुर साहब को अवकाश न देकर ब्रह्मचारी बोला, "अच्छा ठाकुर साहब ! कविता हो चुकी । अब आप उस पहलू पर आइये जिसे छुपा कर आप आज तक दुनिया को धोखा देते चले आ रहे हैं ।"

"धोखा देते चले आ रहे हैं !" कड़क कर ठाकुर साहब क्रोध में भरते हुए खड़े होकर बोले । "तुमने क्या समझा है आखिर मुझे ब्रह्मचारी ! मैं आज तुमसे पूछना चाहता हूं ।"

बातों का रंग ही बदल गया । रंग में भंग हो गया । सरोज और बेला कुछ भी न समझ सकी । अभी-अभी भावुकतापूर्ण बातें हो रही थीं और एक क्षण में इतनी खलबली । ठाकुर साहब क्रोध के आवेश में दाँत किट-किटा रहे थे और ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश उसी प्रकार बेला का हाथ हाथ में लिए मुस्कुरा रहे थे ।

ब्रह्मचारी हंस कर बोले, "बौखलाना बन्द करो ठाकुर साहब ! मैं समझता था कि आपके अंदर कुछ बल होगा, कुछ आंतरिक शक्ति होगी, साहस होगा,

कुछ गांभीर्य होगा, परंतु देख रहा हूं कि यहां सभी का अभाव है।"

"मुंह संभाल कर बोलो ब्रह्मचारी ! तुम मुझे नहीं जानते अभी ! कहे देता हूं कि मैं सरोज का लिहाज़ कर रहा हूं वरना....."

"वरना ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश की छाती में तुम गोली मार देते, यही ना !" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी बोले, "सो मैं तुम से कहे देता हूं कि तुम मेरा बाल बांका नहीं कर सकते। आपका जीवन घृणा का जीवन है ठाकुर साहब ! जिसे आज से पूर्व समाप्त हो जाना चाहिए था।"

"हमारा जीवन घृणा का जीवन है ?" क्रोध में आग-बगूला होकर ठाकुर साहब बोले और उन्होंने क्रोध में बार-बार अपनी शेरवानी के बटनों को खोलना-भेड़ना प्रारम्भ कर दिया। उनका समस्त शरीर क्रोध से थर-थर कांप रहा था और जी में आ रहा था कि ब्रह्मचारी को कच्चा ही चबा जायें।

"आपके क्रोध का कारण मैं नहीं समझ रहा ठाकुर साहब ! आपके अंदर यदि बुद्धि है तो वह स्वयं कहेगी कि आपने आज तक औरों को ही धोखा नहीं दिया वरन आप स्वयं अपने को धोखा दे रहे हैं। इसीलिए आपके जीवन में अशान्ति है।" मुस्कुराते हुए ब्रह्मचारी ने कहा।

"मेरे जीवन में अशांति है !" खिलखिलाकर हंसने का प्रयास करते हुए ठाकुर साहब बोले और सामने की कुर्सी पर बैठ गए। फिर मूंछों पर ताव दिया और शेरवानी के बटन खोल डाले। "अच्छा ब्रह्मचारी महोदय ! आज हम भी आपसे पूरी तरह सुलट कर ही जाएंगे।"

ठाकुर साहब के इस प्रकार बैठ जाने पर सरोज और बेला की जान में जान आई और उन्होंने अपने मन को सांत्वना दी कि चलो रूस और अमरीका का युद्ध होते-होते टला। अब शान्तिपूर्वक बातें होंगी और ध्यानपूर्वक पूर्व की भांति दोनों ने अपने-अपने कान उनकी बातों पर लगा दिए।

ब्रह्मचारी बोला, "ठाकुर साहब ! आज मैं आपके जीवन की साधारण व्याख्या प्रस्तुत करता हूं। ध्यानपूर्वक सुनना और सुनने के पश्चात यदि तुम मुझे गालियां भी दोगे तो मैं भी सहर्ष उन्हें सुनूंगा।"

ठाकुर साहब ने ब्रह्मचारी की यह बात मान ली और वह सुनने के लिए तैयार हो गये। ब्रह्मचारी बोला, "आपने सर्वदा अपने सिद्धांतों के साथ खिलवाड़ की है, कभी उन्हें अपनाया नहीं।"

"यह क्या कह रहे हैं आप ?" बीच ही में बौखलाकर ठाकुर साहब बोल उठे।

"मैं पहले कह चुका हूं कि आप बीच में न बोलिये, पहले मुझे कह लेने दीजिए जो कुछ मैं कहना चाहता हूं।" ब्रह्मचारी बोले।

"अच्छा कहिए।" संभलकर ठाकुर साहब ने कहा।

"हां ! तो आपने अपने सिद्धान्तों को अपनाया नहीं उनका उपहास किया है। आप कांग्रेस में जेल गये और 'ए' क्लास के लिए झगड़े, जेलर से मित्रता गांठी और जेल को जशन-घर बनाया। कांग्रेस ने जमींदारी समाप्त करने का निश्चय किया तो आपने उसे समाप्त होने से पहले ही बेच कर दाम खड़े कर लिए। अब रही आपके व्यक्तिगत जीवन की बातें, जिन्हें शायद आप बेला के सम्मुख सुनना पसंद न करें इसलिए मैं नहीं कहना चाहता। कांग्रेस सरकार शराब बन्दी के लिए गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रही है और आप उसके कर्ण-धार होकर बिना शराब के खाना नहीं खा सकते।"

"तुम्हारी बातों का मैं कोई उत्तर नहीं दूंगा। मुझे काफी देर हो चुकी है। मेरे एक मित्र मेरी राह देख रहे होंगे, परंतु आज का दिन मुझे भूलेगा नहीं, ब्रह्मचारी !"

"मैं चाहता भी यही हूं ठाकुर साहब कि आज का दिन आपके जीवन में कुछ उथल-पुथल कर सके।" ब्रह्मचारी उसी प्रकार मुस्कुराता हुआ कहता जा रहा था और ठाकुर साहब को लग रहा था कि मानो वह उनके जले-कटे पर नमक छिड़क रहा था। "अब देर न कीजिए। आपके भोजन का समय हो गया। मंत्री जी आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।"

"चुप रहो ब्रह्मचारी !" क्रोध में उबल कर खड़े होते हुए ठाकुर साहब बोले। "तुम्हें नहीं मालूम कि तुम किस से बातें कर रहे हो। इन कल की छोकरियों के सामने तुम मुझे अपमानित करना चाहते हो। मेरे सामने अंगरेजी सरकार के भी बड़े-बड़े अफसर थर्राते थे।" और क्रोध में एक हाथ की मुट्ठी बांध कर ठाकुर साहब ने जोर से दूसरे हाथ पर दे मारी।

सरोज और बेला घबरा उठीं।

ब्रह्मचारी उसी प्रकार शांति के साथ बोला, "मैं यदि भूल नहीं कर रहा हूं तो इस समय मैं ठाकुर राजबहादुर से बातें कर रहा हूं। मैं यदि भूल नहीं कर

रहा हूं तो उन ठाकुर राजबहादुर से बातें कर रहा हूं जिन्होंने मंत्री संकटानंद के साथ मिलकर वकील साहब की हश्मत पर डाका डाला और बेला जैसी नादान लड़की को बहका-फुसलाकर, भांति-भांति के प्रलोभन और चमत्कार की रंगीन दुनिया के स्वप्न दिखाकर, उसके मार्ग से विचलित कर दिया।"

ठाकुर साहब क्रोध में बलबला उठे और वहां से निकल कर भाग जाना चाहते थे कि ब्रह्मचारी खड़े होते हुए बोले, "ठाकुर साहब ! मैं अभी आपको दिखा देना चाहता हूं कि आप क्या है ?" और यह कहते हुए ब्रह्मचारी ने ठाकुर साहब के दोनों कंधे पकड़ कर झंझोड़ते हुए उन्हें लाकर सरोज के पास सोफे पर बिठला दिया। "आज भागने नहीं दूंगा आपको । आपके प्रति मेरे मन में जहां इतना सब कुछ भरा है, वहां श्रद्धा भी है । आपने त्याग किया है और भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेकर उस संग्राम को बल भी दिया है। परन्तु कितना अच्छा होता कि यदि आपके जीवन में उद्देश्य के के साथ सचाई भी होती।"

ठाकुर साहब को बिठलाकर ब्रह्मचारी ने बेला से कानस पर रखा हुआ फोन उठा लाने के लिए कहा । बेला फोन उठा लाई। ब्रह्मचारी ने फोन ठाकुर साहब की कोठी से मिलाते हुए मालूम किया कि मंत्री जी आ पहुंचे या नहीं। मंत्री जी आ पहुंचे थे और खाने पर ठाकुर साहब की प्रतीक्षा में बैठे बैठे उन्हें आधा घंटा हो चुका था। इसके पश्चात ब्रह्मचारी ने ठाकुर साहब की ओर मुंह करके मुस्कुराते हुए कहा, "अब आप जा सकते हैं। परन्तु जाते हुए मेरी यह बात गाठ बांधकर जाइये कि अब आपकी यह धांधलेबाज़ी समाप्त ही हुआ चाहती है।"

ठाकुर साहब नीची गर्दन करके चले गये।

बेला बोली "आज का एकांकी नाटक बहुत सफल रहा।"

"अब नित्य ऐसा ही नाटक देखने को मिलेगा बेला !" ब्रह्मचारी मुस्कुराते हुए बोला और तीनों उठ कर बाहर घूमने के लिए चल दिए ।

: ५५ :

मंत्री संकटानन्द के सामने जब मेज पर शराब आ जाती थी तो अपने को संभालना उनके लिए असम्भव हो जाता था। ठाकुर साहब की इन्तज़ार करते-करते जब आधा घंटा हो गया तो वह अपने को न रोक सके और एक पैग गिलास में डाल कर सोडे की बोतल खोल ही डाली।

इसी समय ठाकुर साहब का फ़ोन आ गया। जब फ़ोन मंत्री जी के हाथ में था तो एक घूंट उनके हलक से नीचे उतर चुका था और दूसरा उतार कर उन्होंने बातें करनी आरम्भ की। वह फ़ोन पर ब्रह्मचारी को ठाकुर साहब समझ कर बातें कर रहे थे।

जब तक ठाकुर साहब आये तो मंत्री जी आधी बोतल खाली कर चुके थे। एक बार होठों पर लग जाने पर मंत्री जी रुक नहीं सकते थे।

ठाकुर साहब अब मेज के सामने आकर खड़े हुए तो उनका मुंह फक्क था। मंत्री जी यदि उनसे कुछ पूछते थे तो वह चुप हो जाते थे और उनसे कोई बात नहीं बन पाती थी। अंत में यकायक क्रोध में आकर वे बोले, "दुष्ट मंत्री के बच्चे! तूने मुझे कहीं का नहीं छोड़ा।" और जोर से अपने दोनों हाथों को रगड़-रगड़ कर मलते हुए कमरे में बड़ी ही बेचैनी के साथ घूमने लगे।

"आखिर हुआ भी कुछ ?" मंत्री जी सिटपिटा कर गिलास मेज़ पर रखते हुए बोले।

वह समझ ही न पाये कि माजरा क्या है ? अभी-अभी फ़ोन पर कैसी बातें कर रहे थे ठाकुर साहब और अब यहां इस प्रकार अनर्गल बकवास कर रहे हैं।

मंत्री जी कुछ ठहर कर बोले, "यार ठाकुर साहब! आखिर क्या मामला है? आधी बोतल ही तो पी है। आधी बाकी पड़ी है। फिर बोतलों का तो....।"

"फिर वही बकवास।" कड़ककर ठाकुर साहब बोले।

ठाकुर साहब की आंखों का रंग इस समय लाल हो रहा था और क्रोध में

वह थर-थर कांप रहे थे। पागल की भांति दातों को किटकिटाते हुए बोले, "पाजी कहीं का। निकल जा मेरी कोठी से इसी समय।"

इस बार मंत्री जी को भी क्रोध आ गया कि यह ठाकुर का बच्चा, पिद्दी न पिद्दी का शोरुआ, मेरे सामने इस तरह बकवास करता चला जा रहा है। इसकी क्या-क्या पोल मैं नहीं जानता। एक मिनट में सब शान खाक में मिला सकता हूं।

जिस कोठी में खड़ा हुआ यह कड़क रहा है, यह बेला के नाम है। मन में एकदम निश्चय कर लिया कि कल ही ठाकुर साहब का सामान इस कोठी से निकलवा कर बाहर सड़क पर फिकवा दिया जायगा और फिर सामान भी क्यों ? सब सामान भी तो बेला के ही नाम है। फिर देखता हूं कि यह मूंछों की ऐंठ कहां जाती है ? मैं तो चुप था अभी तक इसलिए कि चलो खाने पीने के लिए एक मुफ्त का साथी और स्थान मिला हुआ है। बेला भी नहीं जान पाती और काम भी बन जाता है।

मंत्री जी के दिमाग़ में ये बातें चक्कर लगा रही थी कि ठाकुर साहब ने शराब की बोतल, गिलास और सोडे की बोतलें उठा कर एक ओर फेंक दीं और फिर मंत्री जी से कड़क कर बोले, "निकल जा यहां से। भाग जा संकटानन्द वरना गोली मार दूंगा।"

ठाकुर साहब के हाथ का संकेत मंत्री जी के भाग जाने के लिए कोठी के द्वार की ओर था और आंखों से आग बरस रही थी।

मंत्री संकटानन्द का दिल दहल गया। उनका छोटा सा शरीर कांप उठा। ठाकुर साहब के क्रोध से मंत्री जी भली भांति परिचित थे। इसलिए इस समय बगल में अपनी आबनूसी हाथीदांत की मूठवाली चांदी के पोलेदार बेंत दबा कर खरामा-खरामा चल देना ही उन्होंने उचित समझा और चलते समय बोले, "अच्छा भाई ठाकुर ! हम तो चले, लेकिन आज तुमने अच्छा नहीं किया हमारे साथ।"

"बस चला जा यहाँ से, मैं अच्छा-बुरा कुछ नहीं जानता," उसी प्रकार कड़ककर ठाकुर साहब बोले।

मंत्री जी धीरे-धीरे कोठी के द्वार से बाहर हो गये। वह सिर नीचा किये बराबर कुछ खुमार और कुछ विचारों के नशे में आगे बढ़ते चले जा रहे थे।

मंत्री जी बहुत दुखी थे। ठाकुर साहब के लिए उनके हृदय में कितना बड़ा स्थान बन चुका था। ठाकुर साहब ने अपनी आज की मूर्खता से उसे स्वयं समाप्त कर दिया।

ठाकुर साहब की फटकार ने मंत्री जी का सब सरुर गायब कर दिया था चित्त एक दम विक्षुब्ध हो उठा। कुछ समझ में नहीं आया कि क्यों इस प्रकार ठाकुर साहब का दिमाग खराब हो गया ?

कुछ भी सही, आज के अपमान का बदला वह ठाकुर साहब से पूरा-पूरा चुकायेंगे, यह उन्होंने अपने मन में दृढ़ संकल्प कर लिया। कोठी पर जाते ही बेला को सूचना दी जायेगी कि ठाकुर अपनी कोठी बेचना चाहता है। इसलिए कल ही ठाकुर को कोठी से निकाल कर बाहर कर देना चाहिए।

इसी उधेड़-बुन में लड़खड़ाते हुए मंत्री जी कोठी पर पहुंचे।

मंत्री जी रात को जब ठाकुर साहब के यहां से पीकर आते थे तो बेला से नहीं मिलते थे। प्रातः काल बेला के उठने से पूर्व ही उठ कर शौच, कुल्ला इत्यादि से निवृत्त हो जाते थे और इस प्रकार वह अपनी शराब पीने की बान को बेला से छुपाया करते थे।

आज सीधे जाकर अपने कमरे में लेट गये। प्रातःकाल बेला के सामने ठाकुर साहब से कोठी खाली करा लेने का प्रस्ताव रखने की योजना थी। रात भर स्वप्न में भी मंत्री जी यही देखते रहे कि किस प्रकार कड़क-कड़क कर वह ठाकुर साहब को कोठी से निकल जाने की आज्ञा दे रहे हैं।

बेला के सोकर उठने से पूर्व ही मंत्री जी ने चाय तैयार करा कर बैरे से उसे मेज पर ले आने के लिए कहा और टोस्ट बेला के लिए अधिक मक्खन वाले भी मंत्री जी ने स्वयं अपने हाथ से तैयार किये। इसके पश्चात बेला के कमरे की तरफ उसे जगाने के लिए गये।

परन्तु बेला वहां नहीं थी। बिस्तर खाली पड़ा था और लिहाफ की तह नहीं खुली थी। मंत्री जी दौड़े हुए बाहर चौकीदार के पास पहुंचे और उससे सूचना मिली कि उसने उन्हें संध्या को सात बजे घूमने जाते देखा था। रात्रि को लौटते नहीं देखा।

रात्रि को बेला नहीं आई, यह जान कर मंत्री संकटानन्द के मन में ऐसी परेशानी हुई कि उनके मस्तिष्क ने काम करना बन्द कर दिया। सोचा कहीं

बेला को ठाकुर के बच्चे ने तो नहीं फंसा लिया। यही धारणा मंत्री जी के मस्तिष्क में बलवती हो उठी।

ठाकुर साहब का पुराना जीवन उनकी आंखों के सामने सजीव हो उठा—किस प्रकार उन्होंने अपनी विवाहिता पत्नी को ज़हर देकर मरवा दिया था वह मंत्री संकटानंद से छिपा नहीं था। रात ठाकुर साहब की कोठी पर घटने वाली घटना और फिर बेला का रात को कोठी पर न आना ऐसी बातें थी जिनका मेल ठाकुर साहब की विष देने वाली बात से सीधा जुड़ जाता था।

मंत्री जी कांप उठे। सोचा कि बेला के साथ इस धूर्त ने न जाने क्या करने का प्रयत्न किया होगा परन्तु बेला मुझे प्रेम करने लगी थी और वह मेरा नाम लेकर चिल्लाई होगी, ...फिर क्या हुआ होगा उसका, कुछ नहीं कहा जा सकता। यह भी सम्भव है कि इस नीच ने उसका गला घोंट कर उसे समाप्त कर दिया हो और यह भी सम्भव है कि बेला कहो अंधेरी कोठरी में पड़ी सिसक रही हो। यह धूर्त सब कुछ कर सकता है। यह मानव के रूप में दानव है।

सोचते-सोचते मंत्री संकटानंद को ध्यान आया कि ठाकुर बेला पर जान देता है। यह उसे मार नहीं सकता। हो सकता है कि कहीं एकांत में बन्द कर दिया हो। मुझे चाहिए कि मैं पुलिस को सूचित कर दूं और ठाकुर की अक्ल ठिकाने लगा दूं।

परन्तु ऐसा करना बेला के लिए घातक होगा। यदि पुलिस को एक बार सूचना दे दी तो बात हाथों से निकल जायगी। बेला जैसी नादान बच्ची को तो ठाकुर एक मुर्गी के चोज़े की तरह गर्दन मरोड़ कर समाप्त कर सकता है।

नहीं, मैं ऐसा नहीं करूंगा। मैं बेला के लिए ठाकुर से भीख मांगकर गिड़गिड़ाऊंगा और कहूंगा कि तू विश्वास रख ठाकुर! मैं तुझे धोखा नहीं दूंगा। मैं बेला को समझा दूंगा। आज के पश्चात वह तेरी ही कोठी में रहेगी और मेरी जब उसे देखने की इच्छा होगी तब मैं तेरी कोठी पर आकर उसे देख जाया करूंगा।

इस प्रकार एक बार किसी भांति बेला मेरे सामने आजाये तो फिर देखता हूं कि यह धूर्त मेरा क्या कर सकता है? लम्बा-चौड़ा शरीरले कर यह मुझे खा नहीं सकता और फिर पुलिस के बड़े-बड़े अफसरों को न जाने कितनी दावतें खिला चुका हूं, अवसर-बे-अवसर उनके घर भर चुका हूं, मेरा साथ वह क्यों

नहीं देंगे ?

और फिर अदालत में ठाकुर के छक्के छुड़ा दूंगा। ठाकुर के बच्चे को छठी तक का दूध याद न दिला दूं तो मेरा नाम संकटानंद नहीं। और इतना विचार कर बिना चाय पिये ही मंत्री जी ठाकुर साहब की कोठी पर जा पहुंचे।

ठाकुर साहब कोठी के सामने वाले लॉन में घूम रहे थे। मंत्री जी को आते देखकर दूर से ही बोले, "आओ आओ मंत्री जी! मैं तो इस समय आपके ही पास आने का विचार कर रहा था। यार रात की बात पर ध्यान मत देना। तुम जानते ही हो मेरी यह पुरानी बान है कि मुझ पर कभी-कभी बातों का ऐसा नशा सवार होता है कि जैसा शराब का भी नहीं होता। कल आफत का मारा मैं सरोज की कोठी पर पहुंचा। वहां बेला और ब्रह्मचारी एक सोफे पर हाथ में हाथ लिये बैठे थे····।"

"सरोज की कोठी पर! बेला और ब्रह्मचारी! हाथ में हाथ लिए बैठे थे! यह तुम क्या कह रहे हो ठाकुर! तुमने गज़ब कर दिया। रात क्यों नहीं बताया मुझे", मंत्री संकटानंद बोले।

वह गोली खाये पक्षी की भांति तड़प कर बैठ गए। "गज़ब हो गया ठाकुर! गज़ब हो गया। तुमने गज़ब कर दिया।"

और फिर तेजी से लॉन में घूमने लगे।

"अब भाई मंत्री संकटानंद चाहे जो कहो। तुम सोशलिस्ट पार्टी का टिकट नहीं दोगे तो कांग्रेस का टिकट तैयार है।" मुस्कुराते हुए ठाकुर बोले और अपनी मस्ती में मूंछों पर ताव देकर उन्होंने गर्व से उभार लिया।

मंत्री संकटानन्द का सिर चकरा रहा था। उसने जीवन में यदि किसी से हार मानी थी तो वह ब्रह्मचारी था। ब्रह्मचारी का नाम ठाकुर के मुख से सुनकर मंत्री संकटानन्द विचलित हो उठे। और फिर बिना कुछ कहे ही लौट पड़े।

कार में बैठने के लिए घुसने को ही थे कि ठाकुर साहब ने पीछे से आकर उनकी कलाई पकड़ते हुए कहा, 'मंत्री जी! मुझे साफ-साफ खोलकर बतलाते जाइए कि आप मुझे सोशलिस्ट पार्टी का टिकट दे रहे हैं अथवा नहीं और फिर सदस्य बनने के पश्चात मिनिस्टर बना रहे हैं या नहीं ? क्योंकि

में अब अपने को धोखा नहीं दे सकता। कल मैंने ब्रह्मचारी आनन्दप्रकाश की बात की गांठ लगा ली है।" जेब से गांठ लगा रूमाल निकाल कर दिखाते हुए ठाकुर साहब बोले, "मैं न तो आपको धोखा देना चाहता हूं और न स्वयं धोखे में रहना चाहता हूं। यदि आपको मेरी शर्त मंजूर है तो ·····"

मंत्री जी हाथ छुड़ाकर कार में बैठ गए और ड्राइवर को चलने के लिए कहते हुए बोले, "सब ठीक हो जायगा ठाकुर साहब! आप चिंता न करें। मंत्रित्व तो क्या आप यदि चाहेंगे तो आपके लिए प्रधान मंत्रित्व भी हाथ बांधे खड़ा रहेगा।"

कार चल पड़ी।

मन्त्री जी कोठी पर पहुंच कर आपने ड्राइंग रूम में बड़ी बेचैनी के साथ घूम रहे थे। उनका सिर चकरा रहा था। कभी इधर घूमते थे और कभी उधर। दिमाग परेशान था कि इतने में मिस कर्नाटिकी आ पहुंची और उसने आकर पूछा, "बेला देवी कहां है मंत्री जी?"

"बेला देवी को तुम क्यों पूछती हो?" क्रोध में भर कर मंत्री जी बोले। "उसका मुझसे कोई सम्बन्ध नहीं।"

मिस कर्नाटिकी चार कदम पीछे हट गई और परेशानी की दशा में समझ न पाई कि आखिर बात क्या है।

"क्योंकि वह कम्पनी की मैनेजिंग डाइरेक्टर हैं।" मिस कर्नाटिकी ने पीछे खड़ी होकर कहा, "और उन्होंने मुझे इस समय यहां कुछ काम समझाने के लिए बुलाया था। मैं इसलिए पूछ रही हूं।"

"वह कुछ नहीं है कम्पनी की, कम्पनी का सब कुछ मैं हूं। आज से मेरी ही आज्ञा से सब कुछ होगा!" क्रोध में बौखलाते हुए मंत्री जी बोले। "मेरी कम्पनी है, मैं कम्पनी हूं। बेला इसी प्रकार की सेविका है जिस प्रकार की तुम हो। तुमसे कुछ अधिक नहीं है बेला।"

मिस कर्नाटिकी चुपचाप खड़ी थी। मंत्री जी सेफ़ की तरफ दौड़े, चाबियां उसी के पास मेज पर पड़ी थीं। बड़ी फुर्ती से उन्होंने सेफ़ खोला और देखा कि शेयर सर्टिफिकेट सब सुरक्षित रखे थे और उन्हीं के पास वह उनका पत्र रखा था जिसके द्वारा उन्होंने अपने शेयर बेला के नाम ट्रान्सफर किये थे।

मंत्री जी आनन्द के मारे एकदम उछल पड़े और उस पत्र के टुकड़े-टुकड़े

करते हुए बोले, "बदमाश कहीं का। मैंने भी इस ब्रह्मचारी के बच्चे को ठीक नहीं किया तो मेरा नाम भी संकटानन्द नहीं। मिस कर्नाटिकी को ओर देख कर बोले, "मिस कर्नाटिकी जाओ! आज से सात दिन के लिए 'जन-मत' कार्यालय की छुट्टी कर दो। मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं। आज से वह सब अधिकार जो बेला को प्राप्त थे मैं तुम्हें देता हूं।"

"परन्तु आपकी आज्ञा से तो कार्यालय बन्द नहीं हो सकता मंत्री जी!" गम्भीरता पूर्वक मिस कर्नाटिकी ने बायें हाथ से अपना सिर झुकाते हुए अपने सीधे पैर के सेंडिल को जमीन पर धीरे से रगड़ कर कहा।

"क्यों नहीं हो सकता? मैं कार्यालय को सात दिन के लिए नहीं सात वर्ष के लिए बन्द कर सकता हूं। तुमने क्या समझा है मुझे? शायद तुम भी उस ब्रह्मचारी के चक्कर में फंस गई हो। स्त्रियों के फंसाने में बड़ा दक्ष है वह धूर्त्त।" क्रोध में उबाल खाकर मंत्री जी बोले।

यह कहते समय वह यह भूल ही गये कि मिस कर्नाटिकी ब्रह्मचारी से परिचित नहीं थी।

"कौन ब्रह्मचारी! क्या हो गया है आज आपको? बेला देवी कहां है? मिस कर्नाटिकी ने पूछा।

"फिर वही बेला देवी, बेला देवी। मैं कहता हूं कि नाम मत लो उस विश्वासघातिन का मेरे सामने। बेला देवी गई जहन्नुम में। वह मेरा सर्वनाश करना चाहती है परंतु उसे यह नहीं पता कि मैं भी संकटानंद हूं। मेरा काटा पानी नहीं मांग सकता।" और फिर पंखे के सामने सोफे पर बैठकर उन्होंने सब शेयर सर्टिफिकेट अपने थैले में रखते हुए चपरासी को बुलाकर कहा, "पहाड़ी! ध्यान रखना बेला कोठी में न घुसे।" इतना कहकर उन्होंने अपनी झींगुर जैसी मूंछों के बालों को क्रोध में आकर इतनी जोर से मेंठा दिया कि उनमें से कई बाल उखड़कर बाहर आ गए।

"जो हुक्म सरकार!" दरबान ने कहा और वह फिर अपनी ड्यूटी पर चला गया। यह दरबान मंत्री जी का वफादार नौकर था।

मिस कर्नाटिकी खड़ी-खड़ी सिटपटा रही थी। बहुत चतुर होते हुए भी वह रहस्य समझने में अभी तक असमर्थ थी। मंत्री जी बहुत ध्यानपूर्वक बैठे कुछ देर तक जाने क्या सोचते रहे और फिर मिस कर्नाटिकी को प्यार से बैठने के

लिए कहते हुए उन्होंने अपना मन भारी कर लिया। मिस कर्नाटिकी ने देखा कि उनके नेत्रों में आंसू आ गये थे।

परंतु मिस कर्नाटिकी ने भी दुनिया देखी थी। वह बोली, "मंत्री जी! दुनिया ही बदल चुकी। किसी पर विश्वास करने के माने अपने गले में फांसी लगा लेना है। आपने देखा था उस दिन एल्फ्स में मेरी मेज पर एक रूसी, एक अमरीकन और एक अन्य सज्जन बैठे थे। उन तीनों का मैंने विश्वास किया और तीनों ने ही मुझे धोखा दिया। मैंने कैपिटलिस्ट भी देखे, कॉम्यूनिस्ट भी देखे और हिन्दुस्तान के न्यूट्रलिस्ट भी देखे हैं परंतु आपकी कृपा से मैंने सभी को वह चकमा दिया कि आज तक मिस की मिस ही बनी हुई हूं।"

मंत्री संकटानंद को मिस कर्नाटिकी की इस बात पर और समय विश्वास चाहे न भी होता परंतु एक दिन कमरे में आधे घंटे रेस लगा कर भी असफल रहने के पश्चात् अब अविश्वास करने के लिए उनके पास कोई कारण नहीं था। फिर इस समय तो उसकी बात में सहानुभूति थी। मंत्री जी बोले, "चीजें तो मैं सभी ठीक कर लूंगा मिस कर्नाटिका! इक्यावन प्रतिशत कम्पनी के शेयर मेरे नाम हैं। बेला अभी बच्ची है।" गर्व के साथ मंत्री जी ने कहा। "बेला का स्थान तुम्हें प्राप्त होगा।"

"यही बात है।" मंत्री जी की बातों में बात मिला कर मिस कर्नाटिकी बोली, "आप सब कुछ कर सकते हैं मंत्री जी! आप सब प्रकार सबल हैं।" ऊपर से गम्भीर और अन्दर से मुस्कुराते हुए मिस कर्नाटिकी बोली, "मुझे आप जो आज्ञा करेंगे मैं उसे पूरी करने में अपना सर्वस्व लगा दूंगी। आप जैसे महान् व्यक्ति की किसी शुभ कार्य में सहायता करना मैं अपना धर्म समझूंगी। आपकी सहायता करना इस समय मैं देश की सहायता करना समझती हूं। 'जन-मत' कार्यालय पर आज देश की आखें लगी हैं। 'जन-मत' पत्र की आवाज इस समय जनता की आवाज है। इसका इस प्रकार एक नादान बच्ची के हाथों में चला जाना देश के लिए घातक होगा।"

"शाबाश! मिस कर्नाटिकी! शाबाश! मुझे तुम से यही आशा थी। अब तुम कार्यालय में जाकर कार्यालय को सात दिन के लिए बंद कर दो और मुझे फ़ोन पर सूचना दो कि तुमने यह कार्य सम्पन्न कर दिया।" मंत्री जी ने खड़े होते हुए कहा।

मिस कर्नाटिकी को कार्यालय जाने के लिए उन्होंने अपनी कार निकलवा दी।

मिस कर्नाटिकी शान के साथ कार में बैठ कर कार्यालय पहुंची तो बेला अपने आफिस में बैठी संलग्नतापूर्वक कार्य कर रही थी। मिस कर्नाटिकी से देर में आने पर जवाब तलब हुआ तो उसने सब वृत्तांत कह सुनाया।

इसी समय मिस कर्नाटिकी के नाम पर मंत्री संकटानंद का फ़ोन आया और बेला ने फोन अपने हाथ में उठाते हुए कहा, "हां देखिए मंत्री संकटानंद जी! मैं मिस कर्नाटिकी नहीं, बेला बोल रही हूं। 'जन-मत' कार्यालय को बन्द कर देने का अधिकार न तो आपको है और न मिस कर्नाटिकी को। 'जन-मत' कार्यालय आज से वास्तव में जनता का कार्यालय होगा और 'जन-मत' पत्र जनता का पत्र। आप व्यर्थ इधर आकर अपना अपमान कराने का कष्ट न करें। इस कार्यालय के अंदर अब आप जैसे जनता को धोखा देने वाले स्वार्थी व्यक्ति क़दम नहीं रख सकेंगे, यह मेरा अन्तिम निर्णय है।"

इतना कहकर बेला ने बिना इस बात की प्रतीक्षा किये कि मंत्री जी इसके उत्तर में क्या कहेंगे, फ़ोन बन्द कर दिया।

फिर घंटी बजी और मंत्री जी ने बेला से कुछ बातें करने का अवसर मांगा परंतु बेला ने स्पष्ट उत्तर दे दिया कि उसके पास कार्याधिक्य के कारण उनसे मिलने का समय नहीं है और न ही वह अब इस विषय पर और अधिक बातें करने के ही लिए तैयार है। जिस कार्य की पूर्ति के लिए वह वकील साहब को छोड़ कर उनके साथ आई थी, उस कार्य की पूर्ति वह उनके साथ रहकर नहीं कर सकती। इसलिए उसने अब अपना पृथक मार्ग ग्रहण कर लिया है।

मंत्री जी ने कुछ भावुकता की बातें भी करने का प्रयास किया परंतु बेला ने सतर्कता से कह दिया, "यदि भावुकता से मुझे अपना सम्बन्ध रखना होता तो मैं वकील साहब को ही छोड़ कर क्यों आती। बेला के पास इस समय बुद्धि है, हृदय नहीं।"

: ५६ :

इस प्रकार फ़ोन पर बेला द्वारा अपमानित होकर मंत्री संकटानंद क्रोध से आग-बगूला हो उठे और पागल की भांति ज्यों ही उठकर चले तो सामने देखा कि बेला का चित्र बैठक की कानस पर रखा उनकी ओर खिलखिला कर हंस रहा था। मंत्री जी ने क्रोध में आकर उस चित्र को ऊपर उठा लिया और पृथ्वी पर पटकने को थे कि अचानक सरोज ने आकर मंत्री संकटानंद के दोनों हाथ पकड़ते हुए कहा, "हैं हैं ! यह क्या कर रहे हैं मंत्री जी ! ऐसा अनर्थ न कीजिए। जिसे एक बार हृदय में स्थान दिया है क्या उसे उसकी इतनी साधारण-सी भूल पर आप इस प्रकार ठुकरा सकते हैं ? आपका व्यक्तित्व महान है। वह कल की नादान बच्ची है। हो सकता है किसी पारस्परिक भूल के कारण यह दुर्घटना घटी हो परंतु इसके लिए इतना उतावलापन आपको शोभा नहीं देता।"

मंत्री जी को सोफ़े पर बिठाते हुए सरोज ने बेला का चित्र उनके हाथ से ले लिया और उसे उसी स्थान पर रखकर स्वयं पास वाली कुर्सी पर बैठ गई।

मंत्री जी का हाथ उनके माथे पर था और वह समझ नहीं पा रहे थे कि यह आखिर होने क्या जा रहा था ? सरोज का इस प्रकार उनकी कोठी पर आना, यदि किसी और समय हुआ होता तो शायद मंत्री जी फूले नहीं समाते। अपनी सभी समृद्धियां वह सरोज के चरणों पर न्यौछावर कर देते। सरोज द्वारा उपेक्षित होकर ही बेला को लेकर मंत्री जी ने अपने मन में संतोष कर लिया था परंतु एक दिन इस प्रकार बेला भी उन्हें धोखा देगी इसका उन्हें स्वप्न में भी ध्यान न था।

इस समय मंत्री संकटानंद का मन स्त्री जाति के प्रति क्रोध और घृणा से भरा था। परंतु सरोज को सामने देखकर उनके हृदय में जो जलन थी वह धीरे-धीरे हल्की पड़ने लगी। जीवन की कटुता में मिठास का संचार होने लगा और उनकी सूखी हुई नसों में फिर से रस संचारित हो उठा।

"मंत्री जी ! आज पहली बार मैं आपनी कोठी पर आई और आपने यह भी नहीं पूछा कि सरोज ! तू किसलिए आई ?" सामने की कुर्सी पर बैठकर आह भरते हुए सरोज बोली, "संसार बड़ा विचित्र है मंत्री जी ! कभी कभी जीवन में ऐसा देखा गया है कि जिस कुत्ते को टुकड़े डाल डालकर पालो समय पड़ने पर वही गुर्राने लगता है।" और यह कहकर रुआनी सी शक्ल बनाकर सरोज ने मंत्री संकटानंद के मुख पर भेदपूर्ण दृष्टि से देखा। सरोज ने ये शब्द बहुत ही नाटकीय ढंग से कहे।

मंत्री जी पागल से हो रहे थे। सरोज की बात सुनकर उनके हृदय पर एक ऐसा मोठा आघात हुआ कि वह कराहते हुए कह उठे, "सरोज ! तुमन कुसमय में आकर मेरी परीक्षा ली। मेरे हृदय में तुम्हारे लिए कितना पवित्र स्थान है यह तुम अनुभव नहीं कर सकतीं।" इतना कहते हुए मंत्री जी ने पीछे तकिए से अपनी कमजोर कमर को टिका दिया।

मंत्री जी के नेत्रों से इस समय करूणा झलक रही थी।

"आपत्ति काल में ही कोई किसी अपने के पास आता है मंत्री जी ! बेला ने केवल आपको ही धोखा नही दिया उसने वकील साहब को भी धोखा दिया। और अंत में उसने मुझे भी धोखा दे डाला।"

सरोज आंखों में पानी भर लाई। उसके नेत्र डबडबा आये और उनसे छला-छल बूंदें टपकने लगीं।

मंत्री संकटानन्द समझ गये कि अवश्य बेला ने सरोज को भी धोखा दिया है। हो-न-हो उसने ब्रह्मचारी पर अपना जाल फैलाकर उसे सरोज से विमुख कर दिया है। ब्रह्मचारी बेला पर आसक्त हो गया होगा।

ब्रह्मचारी कितना धूर्त्त है—अन्त में मंत्री जी की विचार धारा ब्रह्मचारी पर जाकर टिक गई और उन्हें अपने जीवन में वही सबसे बड़ा धूर्त्त दिखाई दिया कि जिसने किसी को क्षमा करना नहीं सीखा। स्वामी ज्ञानानन्द को उसने धोखा दिया। सरोज पर उसने जाल डाला, आचार्य किशनचन्द और सेठ मूदड़मल से उसने रुपया ऐंठा और संकटानन्द को जीवन भर की कमाई पर हाथ साफ किया और बेचारी सरोज का जीवन बर्बाद कर दिया।

मंत्री जी को इस समय बेला के चले जाने का इतना खेद नहीं था जितना इस बात का खेद था कि बेला के साथ ठाकुर राजबहादुर की औरंगजेब

रोड वाली कोठी उनके हाथ से निकल गई, वकील साहब का मकान उनके हाथ से निकल गया। 'जन-मत' कार्यालय की उन्हें चिन्ता नहीं थी। क्योंकि इक्यावन लाख के शेयर उनके कब्जे में थे। जनरल मीटिंग बुलाकर वकील के मशवरे से वह उसे ठीक कर लेंगे।

सरोज ने मंत्री जी के सूखते हुए जीवन-विटप पर अमृत वर्षा की।

मंत्री जी मुस्कराकर बोले, "चलो जाने दो सरोज! जीवन में अनेकों उलझनें आतीं और चली जाती हैं परन्तु हम जैसे विशाल भूधर उनसे हिलने वाले नहीं। ब्रह्मचारी बेचारा क्या खाकर हमारे सामने आयेगा? तुम जानती ही हो कि लाखों के वारे न्यारे तुम्हारे देखते-देखते इन्हीं हाथों ने किये हैं। 'जन-मत कार्यालय' की समस्या मैं सुलझा लूंगा। तुम्हें आज अपनी कोठी पर देखकर मैं अपना सब दुख भूल गया सरोज! मेरे जीवन की आज वह कामना सफल हो गई जिसके लिए मैं पूरा प्रयास करने के पश्चात अपने को असफल मान चुका था।

"सच!" सरोज बोली।

"सच जानो सरोज! मैं तुमसे कभी झूठ नहीं बोल सकता।" भावुकता में बहकर मंत्री जी बोले और उनके नेत्रों में प्रेमाश्रु उमड़ आये।

"अच्छा मंत्री जी! अब आज्ञा दीजिए, मैं चली!" सरोज बोली।

"परन्तु क्यों?" मंत्री जी ने चकित होकर पूछा, "जब तुम आ ही गई हो तो अब जाने का नाम न लो सरोज! यह कोठी भी तुम्हारी ही है।"

"आज मेरा चित्त बहुत खिन्न है; जरा जाकर एकान्त में आराम करूंगी।" सरोज बोली, "आपसे मिलकर मन कुछ हलका हो गया।"

"जाओ सरोज!" आह भर कर मंत्री जी बोले, "मेरे हृदय को तुम भी न समझ सकीं! लेकिन इस समय मैं तुम से रुकने के लिए नहीं कहूंगा। मेरा अपना भी मन बहुत खिन्न है।" मंत्री जी बोले और कोठी के बाहर तक वह सरोज को छोड़ने आये।

: ५७ :

स्टेज बनकर तय्यार हो गया। भारत में अपने प्रकार का यह पहला स्टेज था। स्टेज पर नाटक होगा। शहर में बड़ी धूमधाम थी। आज बहुत दिन पश्चात सरोज स्टेज पर आ रही थी। शहर में बड़े-बड़े पोस्टर लगे थे जिन पर ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश, बेला और सरोज के तिरंगे चित्र थे।

आचार्य किशनचन्द ने कल संसद में सभासदों को प्रसन्नतापूर्वक सूचना दी थी कि सरकार द्वारा निर्मित नव-स्टेज पर दिल्ली की प्रसिद्ध कला अभिनेत्री सरोज ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश के दिग्दर्शन में जो नाटक प्रस्तुत करेंगी वह भारत के वर्तमान समाज का सही चित्र दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत करेगा। नाटक में बड़े-बड़े कलाकारों ने सहयोग दिया है।

लोक सभा में आचार्य किशनचन्द के प्रयास की प्रशंसा हुई। सरकार ने कला की उन्नति के लिए स्टेज निर्मित किया है यह जानकर सभी सदस्यों को बहुत प्रसन्नता हुई।

सेठ गूदड़मल ने भी अपनी सब मिलों के बड़े-बड़े अफसरों को इस नाटक की सूचना एक सप्ताह पूर्व भेज दी और उन सब को अपने खर्चे पर नाटक देखने के लिए दिल्ली बुलाया। सभी प्रांतों के गवर्नरों और रियासतों के राजप्रमुखों को भी यह नाटक देखने लिए निमंत्रित किया गया। यह कार्य सेठ गूदड़मल ने आचार्य किशनचन्द की राय से किया था क्योंकि इस प्रकार सेठ गूदड़मल देश की सभी प्रमुख शक्तियों के सम्पर्क में आकर भारत के प्रमुख व्यापारों पर अपना अधिकार कर सकते थे।

अवसर को हाथ से खोना सेठ गूदड़मल ने नहीं सीखा था। समय पर रुपया पानी की तरह बहा देना वह जानते थे।

नाटक देखने के लिए भारत भर के बड़े-बड़े आदमी दिल्ली में आये। होटलों में खचाखच भीड़ थी। जनता के हितों के रक्षक, जिन्होंने मोटा से मोटा खद्दर पहनकर अंगरेजी सरकार से युद्ध किया था आज भारतीय उद्योग-धंधों को प्रोत्साहन देने के लिए हाथ की कती, हाथ की बुनी बढ़िया सिल्क के चुने

हुए कुर्ते पहने मैडन्स और इम्पीरियल होटल की शोभा बढ़ा रहे थे। बड़े-बड़े होटलों के तो प्रायः सभी कमरे सेठ गूदड़मल ने पहले से ही रिजर्व करा लिये थे। नई दिल्ली के सभी होटलों में आवश्यकता से अधिक भीड़ थी।

नाटक की पहली घंटी बजते ही सब लोग अपनी-अपनी सीटों पर जाकर बैठ गये। थोड़ी देर में दूसरी घंटी बजी तो सब शांत हो गये। सेठ गूदड़मल और आचार्य किशनचन्द सब से प्रथम पंक्ति में विराजमान थे। ठाकुर राजबहादुर ने भी प्रयत्न करके सोट दूसरी पंक्ति में ले ही ली और वह मिली एकदम सेठ गूदड़मल के पीछे। जब तक दूसरी घंटी बजी तो उनके पास वाली कुर्सी खाली पड़ी थी। परन्तु ज्यों ही खेल प्रारम्भ हुआ और बत्तियां बुझीं तो मंत्री संकटानन्द उस कुर्सी पर चुपके से जा बैठे। ठाकुर साहब ने उधर देखा तो पहचान कर बोले, "अरे यार! मंत्री जी!"

"चुप" होठों पर उंगली रखते हुए मंत्री जी बोले।

"अच्छा अच्छा! मैं समझ गया। आप छिपकर आये हैं।" ठाकुर साहब स्टेज की ओर देखकर बोले। "परन्तु क्या सोशलिस्ट पार्टी में ड्रामा देखना मना है! ठीक-ठीक बता दो यदि मना है तो मुझे आपका टिकट नहीं चाहिए, देखते नहीं हो सरकार ने कितना सुन्दर स्टेज तैयार कराया है। अब इस पर रूढ़िवादी पौंगा-पंथियों की वह खबर ली जायगी कि दांत के नीचे उंगली दबा कर रह जायेंगे।" यह कह कर शेरवानी के बटन लगाते हुए ठाकुर साहब ने गर्व से सीना ऊपर कर लिया।

"यह जनता के पैसे का अपव्यय है। जनता पर टैक्स लगा कर जो रुपया ऐंठा जाता है उसे इस प्रकार अपनी अय्याशी में खराब किया जा रहा है।" कुर्ते की सिलवटों को खोलते हुए मंत्री जी ने कहा।

'आप आवश्यकता को भी अय्याशी कहते हैं। मुझे तरस आ रहा है आप पर। यदि यही बात है तो कल आप स्त्री और पुरुष के संबंधों को भी अय्याशी कहने में संकोच नहीं करेंगे।"

इतना कहकर ठाकुर साहब ने अभिमानपूर्वक अपनी मूंछों पर ताव दिया और फिर जरा अकड़ कर बोले, "मंत्री जी! यह कला है, कला! कला के लिए भी तो जीवन में कोई स्थान रखिए। आप तो दक्ष कलाकारों में से हैं। परन्तु जिस कला में आप दक्ष हैं यह कला उससे भिन्न है।" कहकर ठाकुर

साहब व्यंग्य पूर्वक मुस्कुरा दिये ।

"आप मेरा उपहास कर रहे हैं ठाकुर साहब ! परन्तु मैं आपको कहे देता हूं कि कला के नाम पर पाखंड करने वाली कांग्रेस सरकार चल नहीं सकेगी। जनता को इतना पागल न समझें कि वह केवल स्टेजों पर नाच-गाने सुनकर कांग्रेस को राय दे देगी । जनता अब इतनी जागरूक हो चुकी है कि वह नाच-रंग भी देख लेगी और फिर भी ····"

"राय आपको देगी । क्यों यही बात है न ?" बीच ही में मुस्करा कर ठाकुर साहब बोल उठे और फिर छाती गर्व के साथ फुलाकर बोले, "जनाब ! कांग्रेस सरकार भारत में रामराज्य लाने पर तुली है । सरकार ने भारत को विदेशों से अनाज ला-लाकर भर दिया है । वह इतना अनाज बांटेगी कि जनता पर खाया नहीं जायेगा, वह इतना कपड़ा बांटेगी कि जनता पर पहना नहीं जायेगा और कला, कला की तो बस पूछो नहीं । तुम देखना कि शहर-शहर में स्टेज बनाये जायेंगे, गांव-गांव में नाट्यशालाएं खुलेंगी और ऐसे नाटक खेले जायेंगे जो कांग्रेस को जनता की सर्वप्रिय सरकार बना डालेंगे ।

यह आचार्य किशनचन्द की सूझ है । उनकी सूझ-बूझ का आदमी आज भारत में दूसरा नहीं है । मैं कहता हूं कि इन नाटकीय स्टेजों के सामने आपकी प्रचार मंडलियां धरी रह जायेंगी ।" इतना कहकर ठाकुर साहब ने सोडा-लैमन वाले को बुलाकर दो आरेंजक्रश की बोतलें लीं और एक मंत्री जी की ओर करते हुए बोले, "लीजिए मंत्री जी ! ये पीजिए ।" और नाटक की तीसरी घंटी बज गई । ड्रापसीन उठ गया और नृत्य करती हुई सरोज स्टेज पर उतर आई । दर्शकों ने करतल ध्वनि की । हाल गूंज उठा । आचार्य किशनचन्द ने सेठ गूदड़मल का हाथ दबाते हुए कहा, "ब्रह्मचारी ने कमाल कर दिया ।"

ऊपर महात्मा गांधी का चर्खा कातता हुआ स्टैचू था और सामने एक बहुत बड़ा चर्खा बना था, जिसके आस-पास सरोज नृत्य कर रही थी और कभी-कभी हाव भावों से चर्खा कातने का प्रदर्शन करते हुए सरोज ने दर्शकों को मोहित कर दिया ।

"देखा आपने सरोज का 'चर्खा-नृत्य' मंत्री जी !" ठाकुर साहब ने कहा, "इसे कहते हैं कला । यह आदर्शोन्मुख उपदेशात्मक कला है जिसके अंदर राजभक्ति ठूंस-ठूंस कर भरी है । इस नाटक का दिग्दर्शक है ब्रह्मचारी

आनन्द प्रकाश।"

प्रारम्भ में प्रार्थना का दृश्य था जिसे देखकर दर्शक मुग्ध हो उठे और इसके पश्चात नाटक प्रारम्भ हुआ। प्रथम दृश्य वह था जिसमें भरी सभा के अन्दर स्वामी ज्ञानानन्द ने ब्रह्मचारी आनन्द प्रकाश से चरण-रज बांटने का अधिकार वापिस लिया और फिर सरोज ने उन पर करारी फटकार डाली। स्वामी ज्ञानानन्द स्वयं अपने पार्ट का अभिनय कर रहे थे।

"स्वामी ज्ञानानंद जी यहां आ पहुंचे!" आश्चर्य प्रकट करते हुए मंत्री जी बोले।

"क्यों न आते? सरोज का आकर्षण बड़े-बड़े ज्ञानियों को खींच लाता है। आप क्या समझते हैं सरोज को?" ठाकुर साहब अकड़कर बोले।

ड्रामा बड़े मनोरंजक ढंग से आगे बढ़ रहा था। स्वामी ज्ञानानंद, वकील साहब और मंत्री संकटानंद का जब तक खाका खींचा जा रहा था तो आचार्य किशनचंद और सेठ गूदड़मल फुदक-फुदक कर तालियां बजा रहे थे परंतु जब उनकी अपनी बारी आई तो आचार्य किशनचंद बौखला उठे और एकदम प्रथम पंक्ति में खड़े होते हुए जोर से चिल्लाकर बोले, "नाटक बंद करो। नाटक बंद कर दो।"

सेठ गूदड़मल ने भी उनके साथ ही खड़े होकर पुकारा, "यह नाटक नहीं हो सकता। बन्द कर दो इस नाटक को।"

"नाटक अवश्य होगा, अवश्य होगा।" पीछे से दर्शकों की आवाज आई और हॉल में खलबली मच गई। आचार्य किशनचंद के पीछे ठाकुर राजबहादुर बैठे थे। भारी भरकम आदमी थे। उन्होंने खड़े होकर जोर से आचार्य जी को दबा कर उनकी सीट पर बिठाते हुए कहा, "बैठिए आचार्य जी! यह तो नाटक है! अभी पहला ही दृश्य है। कभी-कभी पात्रों को गिरा-गिरा कर ऊपर उठाया जाता है, आपका चरित्र महान है। उसमें किसी प्रकार की कमी नहीं। फिर ब्रह्मचारी आनंद प्रकाश जैसा योग्य व्यक्ति आप पर फब्तियां क्यों कसने लगा?"

सेठ गूदड़मल के पीछे थे मंत्री संकटानंद। कद छोटा होने से उन्हें यों ही देखने में परेशानी हो रही थी सेठ जी के खड़े हो जाने से उन्हें दिखाई देना बन्द हो गया। मंत्री जी ने कूद कर सेठ जी के कंधों पर बैठने को हाथ

रखे तो वह कंधों पर ही टंगे रह गये थे। दर्शकों के सम्मुख नाटक में यह दूसरा नाटक प्रस्तुत हो गया। इसे देखकर दर्शक कहकहा लगा कर हंस पड़े।

स्टेज पर घंटी बजी और मंत्री संकटानंद, बेला और ठाकुर राजबहादुर का प्रसंग छिड़ गया। आचार्य किशनचंद और सेठ गूदड़मल को नाटक में फिर रस आने लगा और उन्होंने फिर कई बार करतल ध्वनि से अभिनय का स्वागत किया।

इसके पश्चात नाटक में फिर सेठ गूदड़मल और आचार्य किशनचंद का प्रसंग आया तो आचार्य किशनचंद सहन न कर सके और सेठ गूदड़मल तो घबरा उठे। आचार्य किशनचंद कूद कर दो डिग रखते हुए स्टेज पर पहुंच गये और उन्होंने घोषणा की कि यह नाटक यहां नही खेला जा सकता। इसके द्वारा हमारा अपमान ही नही किया वरन् हमारी पूज्यनीय सरकार का भी मज़ाक उड़ाया है।

जनता बहुत चिल्लाई-चीखी परंतु किशनचंद के सामने उसे मात खानी पड़ी और पुलिस ने आकर भीड़ लगाने वालों को लाठी चार्ज की धमकी देकर तित्तर-बित्तर कर दिया।

जनता के जोश का ठिकाना न रहा और उसके हृदय में अपार क्रोध भर गया। जनता अपना अपमान अनुभव कर रही थी और उसे रह रह कर क्रोध आ रहा था कि जब हम अपने स्टेज पर अपना नाटक खेलकर अपनी सरकार की सही आलोचना भी नहीं कर सकते तो हमारी स्वतंत्रता को धिक्कार है।

बात की बात में बात बढ़ गई और जनता के जोश का ठिकाना न रहा। समय और परिस्थिति के अधिकारी मंत्री संकाटानंद विद्युत गति से कूद कर पुलिस के बीच मंच पर आ धमके और नाक के नथनों को फुलाते हुए आस्तीनों को चढ़ा कर एक कड़क के साथ सीना तान कर बोले, "जनता सरकारी स्टेज को ठुकरा कर खुले मैदान में सुफेद चादरें लगा कर नंगे लकड़ी के तख्तों पर इस नाटक को प्रदर्शित करने की कलाकारों से प्रार्थना करती है और मुझे पूर्ण आशा है कि स्वतंत्र भारत के स्वतंत्र कलाकार जनता की इस मांग को न ठुकरा कर कल संध्या को गांधी जी की समाधि के पास राजघाट पर इस नाटक का प्रदर्शन करेंगे। यदि वहां कहीं आस पास महात्मा गांधी की आत्मा घूमने के लिए एक क्षण को भी आ भटकेगी तो वह अपने अनुचरों की काली करतूतें देखकर

शायद कुछ दैविक प्रकाश इनकी आत्माओं को शुद्ध करने के लिए भेज दे।"

मंत्री जी के कथन पर जनता ने करतल ध्वनि की और पुलिस को भी ठिठक जाना पड़ा। सेठ गूदड़मल और आचार्य किशनचंद के तन बदन में आग लग रही थी और वे पागलों की तरह इधर-उधर घूम रहे थे। उन्हें चिंता थी कि कल दिल्ली के सभी पत्रों की प्रथम पंक्ति इसी घटना की सूचना से रंगी जायेगी और इससे उनकी कितनी भद्द उड़ेगी।

दूसरे दिन राजघाट के पास बेला रोड के नीचे मंत्री संकटानंद के प्रबंध में लकड़ी के तख्तों का एक स्टेज बनाया गया और सुफैद खद्दर के थानों की सहायता से पर्दों का काम लिया गया।

खेल पर कोई टिकट नहीं था इसलिए भीड़ बहुत थी। अपार समुद्र की तरह भीड़ उमड़ी पड़ रही थी। दिन भर आचार्य किशनचंद और सेठ गूदड़मल ने अपने पूरे प्रयत्नों द्वारा नाटक को रोकने का प्रयत्न किया और बात ऊपर तक पहुंची।

संध्या समय नाटक प्रदर्शित हुआ और जन-मत की विजय हुई।

●